संत समाज के प्रति त्रिलोक दीप का सकारात्मक रुख

रैवासा पीठाधीश्वर स्वामी राघवाचार्य जी महाराज

संसार को शिक्षा देने और अनुशासन सिखाने वाले संत ही होते हैं। संत समाज के प्रति त्रिलोक दीप का सकारात्मक रुख उन्हें अन्य समाजसेवियों और पत्रकारों से अलग कोटि में रखता है। त्रिलोक दीप सदा दूसरों के लिए सोचते हैं और मैं उन्हें परमार्थी मानता हूं। ये शब्द थे रैवासा पीठ के स्वामी राघवाचार्य जी महाराज के थे जो उन्होंने एक बातचीत में त्रिलोक दीप के बारे में कहे।

सीकर से करीब 15 किलोमीटर दूर स्थित रैवासा में रामानंद संप्रदाय की पीठ है जिसे काशी पीठ के बाद दूसरा स्थान प्राप्त है। यहां के महाराज स्वामी राघवाचार्य जी इस पीठ को सुशोभित करते हैं जो अग्रदेव महाराज के शिष्य हैं। स्वामी राघवाचार्य विद्वान हैं और संस्कृत के प्रकांड पंडित। वह कभी राजस्थान संस्कृत अकादमी के अध्यक्ष भी रहे हैं। वेतन के तौर पर उन्होंने कुछ भी स्वीकार नहीं किया था। वह यही चाहते थे कि जब कभी जयपुर में कोई मीटिंग हो तो उन्हें लाने ले जाने की व्यवस्था कर दी जाये।

स्वामी राघवाचार्यजी महाराज से त्रिलोक दीप की मुलाकात पत्रकार कमल माथुर ने करायी थी जो उस समय दैनिक भास्कर, सीकर संस्करण के स्थनीय संपादक थे। सीकर निवासी कमल माथुर के संपर्क सूत्र बहुत व्यापक थे। उन्होंने पहले सीकर के पत्रकारों से त्रिलोक दीप की मेल मुलाकात करायी थी और बाद में एक व्याख्यान भी आयोजित किया था। त्रिलोक दीप पत्रकार होने के अलावा समाज सेवा से भी जुड़े हुए हैं। वह समाजसेवी उद्यमी संजय डालमिया के डालमिया सेवा ट्रस्ट के विशेष प्रतिनिधि के तौर पर राजस्थान के विभिन्न अंचलों में जाते थे। शेखावाटी क्षेत्र में डालमिया सेवा ट्रस्ट के सौजन्य से रोगोपचार और योग शिविर लगा करते थे। ऐसे कुछ शिविर रैवासा महाराज ने भी लगवाए थे जिसके कारण त्रिलोक दीप उनसे अक्सर मिलते थे कमल माथुर के साथ। यही वजह है कि आज भी स्वामी राघवाचार्यजी उनसे बहुत स्नेह करते हैं। कमल माथुर का दो बरस पहले निधन हो गया था।

जब मैंने स्वामी राघवाचार्यजी को बताया कि संपर्क भाषा भारती त्रिलोक दीप पर एक विशेषांक निकाल रही है तो वह छूटते ही बोले, यह बहुत ही उत्तम और प्रशंसनीय कार्य हैं। उन्होंने कहा कि त्रिलोक दीप समग्र समाज के चिंतक हैं और उसका चिंतन करते रहते हैं। उनका मूलमंत्र है बहुजन सुखाय, बहुजन हिताय। वह समाज सेवा के ऐसे हस्ताक्षर हैं जो बहुत ही सराहनीय और प्रशंसनीय है। एक अन्य प्रश्न के उत्तर में स्वामी राघवाचार्य महाराज ने बताया कि उनकी निस्वार्थ सेवा की भावना अनुकरणीय है। वह सदैव दूसरों के हित के बारे में सोचते हैं अर्थात् परमार्थ की भावना से ओतप्रोत रहते हैं और इसलिए वह मनुष्य कहलाने के अधिकारी हैं।

त्रिलोक दीप की पत्रकारिता के बारे में जहां तक मैं जानता हूं वह सकारात्मक लीक का अनुसरण करते हैं। वह सकारात्मक पत्रकारिता करते हैं किसी के प्रति राग द्वेष नहीं रखते। उनकी ऐसी सोच और लेखनी त्रिलोक दीप को दूसरों से अलग रखती हैं। सामाजिक सरोकारों के बारे में उनकी दृष्टि स्पष्ट है। उन्हें स्वामी कृष्णानंद सरस्वती और समाजसेवी उद्यमी संजय डालमिया से जो मूलमंत्र मिला है'मानव सेवा ही प्रभु सेवा है उसका बड़ी शिद्दत के साथ अनुसरण करते हैं।

त्रिलोक दीप साधु-संतों के प्रति भी आदर सम्मान की भावना रखते हैं। वह कमल माथुर के साथ दसियों बार यहां आये हैं और उन्होंने सदा ही मानव सेवा और मानवीय करुणा की बात की है। मुझे खुशी है कि संतों के प्रति उनका सकारात्मक रुख है। वह यह भलीभांति जानते हैं कि संत समाज को सही मायने में शिक्षित कर सकते हैं। इसलिए संत समाज में भी उनकी बहुत इज्जत और सत्कार है। उनकी समाज के प्रति निस्वार्थ सेवा की भावना को देखते हुए मेरा आशीर्वाद सदा उन्हें मिलेगा।

सीकर से जितेंद्र माथुर की स्वामी राघवाचार्यजी से बातचीत पर आधारित।

□□□

आज की पत्रकारिता जगत की आवश्यकता : श्री त्रिलोक दीप सर

जितेंद्र माथुर

पत्रकारिता जगत के भीष्म पितामह कहे जाने वाले वरिष्ठ पत्रकार, लेखक, रचनाकार, समाजसेवी श्री त्रिलोक दीप जी के बारे में जितना कहा जाए उतना कम होगा। मैंने उनके व्यक्तित्व व कृतित्व दोनों रूप देखे हैं। पत्रकारिता जगत की इस महान हस्ती के बारे में जब मैंने पहली बार मेरे पिताजी पत्रकार स्व. कमल जी माथुर से सुना कि देश के बहुत बड़े पत्रकार श्री त्रिलोक दीप अपने घर पर आ रहे हैं, तो मन में यह विचार आया कि इतने बड़े पत्रकार दीप सर कैसे होंगे, उनकी जीवन शैली कैसी होगी, वे कैसे दिखते होंगे इत्यादि खयाल मेरे मन में आये। मैं भी इतनी बड़ी शख्सियत से मिलने को आतुर था।

श्री दीप सर जब हमारे घर पहुँचे, तो मेरे मन में आये वे सभी खयाल धराशायी हो गये

जिनके बारे में सोचकर मैं चिंतित हुआ था। पत्रकारिता जगत में इतनी बड़ी हस्ती जिसने उस दौर में पत्रकार रहे अज्ञेय जी के साथ काम किया है, उन्होंने हमारे घर पर आगमन के दौरान बड़ी ही आत्मीयता व सादगी के साथ पिताजी से गले मिलकर जो अपनापन दिखाया वह मैं कभी भूल नहीं पाऊंगा। श्री त्रिलोक दीप सर ने उस दौर में जब मैगजीन और समाचार पत्र निकालना एक साहस का काम माना जाता था उस समय की प्रतिष्ठित राष्ट्रीय पत्रिका'दिनमान में लंबे समय तक अपनी गंभीर लेखनी का लोहा मनवाया। उस समय के देश के नामी पत्रकारों के साथ काम किया फिर भी लोगों को आश्चर्य होता है कि इतनी बड़ी मैगजीन सहित कई बड़े अखबारों में लेखन करने वाला व्यक्ति आज भी सादगी से भरा हुआ है। श्री दीप सर मेरे

परिजनों से भी बड़ी आत्मीयता के साथ मिले। मैंने भी देखा कि पत्रकारिता जगत में बड़े पदों व बड़े पत्रकारों के साथ काम करने वाले श्री दीप सर इतनी सरलता और सादगी से भरे हो सकते हैं। उनके व्यवहार में उनका अपनापन साफ दिख रहा था। मेरे पिताजी स्व. कमल जी माथुर उस समय दैनिक भास्कर के शेखावाटी संस्करण में संपादक थे, उनके साथ मुझे भी श्री त्रिलोक दीप सर का सानिध्य मिलना मेरे लिए सौभाग्य की बात है।

श्री त्रिलोक दीप सर की लेखनी दिनमान में प्रकाशित होती थी जो सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, मार्मिक जैसी पठनीय सामग्री होती थी। उसे पढ़कर कई युवा प्रशासनिक सेवाओं की परीक्षा में पास होते और आईएएस, आईपीएस एवं साथ ही अन्य सेवाओं में भी चयनित होते थे। श्री दीप सर पत्रकारिता के साथ समाज सेवा के काम से भी जुड़े हुए हैं। वे डालमिया सेवा ट्रस्ट से जुड़े होने के नाते अक्सर राजस्थान और साथ में शेखावाटी के दौरे पर आते रहते हैं। श्री त्रिलोक दीप सर पत्रकारिता के साथ धार्मिक रूझान भी रखते हैं।

सालासर बालाजी के अनन्य भक्त हैं। सालासर बालाजी के दर्शन करने हों या सेवा के उद्देश्य से यहां आना हो, फोन पर यहां आने की सूचना देते और मिलने के लिए बोलते। मैं भी पिताजी के साथ मिलता था। मुझे इनमें हमेशा अपने आत्मीयजन ही नजर आते और ये मुझे अपने बच्चों की तरह प्यार करते, मार्गदर्शन देते। मेरे पिताजी के २०१४ में जब कैंसर होने के बारे में श्री त्रिलोक दीप को पता चला तो बड़े चिंतित होते हुए। वे अक्सर इस बारे में मुझसे बात करते और परिजन के तरह मुझे दिलासा देते। पिताजी के सन २०१९ में हुए निधन के बारे में जब उन्हें बताया तो वे बहुत दुखी हो गये और मुझे हर समय अपने साथ होने के लिए बोलते। कहते, कोई भी काम हो निसंकोच मुझे याद करना, मुझे भी एक सहारा मिला कि पत्रकारिता जगत की एक हस्ती पिताजी के साथ संबंध होने व उनके जाने के बाद आज भी मुझे परिवार को हिस्सा मानते हैं। तब मुझे लगता कि खून से बड़ा रिश्ता आत्मीयता का होता है जो मेरे को श्री दीप सर में नजर आता है। मुझे आज भी श्री त्रिलोक दीप सर से बहुत कुछ सीखने का मौका मिलता है। उनसे पत्रकारिता के बारे में जानता रहता हूँ, उनके संस्मरण सुनता हूँ तो सोचता हूँ कि इन्होंने उस कठिन समय में कैसे पत्रकारिता की होगी।

श्री दीप सर का यहां के संतों व प्रमुख लोगों से साथ पत्रकारों के साथ भी मिलना होता है। रैवासा पीठाधीश्वर स्वामी राघवाचार्यजी महाराज भी इनकी पत्रकारिता के कायल हैं। क्योंकि पत्रकारिता के साथ इनमें आध्यात्मिकता से भी गहरा जुड़ाव रहा है। वे महाराज श्री के साथ घंटों अध्यात्म, मानव सेवा के बारे में चर्चा करते हैं। लक्ष्मणगढ़ के श्री श्रद्धानाथ आश्रम के पीठाधीश्वर श्री बैजनाथ जी महाराज व सीकर से सांसद स्वामी सुमेधानंद सरस्वती जी के साथ भी श्री त्रिलोक दीप सर का बहुत गहरा लगाव है। वे भी उनकी पत्रकारिता व समाज सेवा के जगत में दिए जा रहे योगदान को याद करते रहते हैं।

मुझे यह जानकर बेहद प्रसन्नता हो रही है कि दिल्ली से पिछले 33 वर्षों से प्रकाशित हो रही मासिक पत्रिका संपर्क भारती श्री त्रिलोक दीप सर के बारे में एक विशेषांक निकाल रही है। पत्रिका में श्री त्रिलोक दीप जी के व्यक्तित्व, कृतित्व के बारे में आज के पाठकों को बताना वर्तमान की जरूरत भी है। क्योंकि उस दौर में जब फील्ड में जाकर जानकारी करनी होती थी जब जानकारी का कोई स्रोत नहीं होता था, केवल और केवल पढ़ना और फील्ड में जाने पर ही जानकारी होती थी, जहां बिना किसी साधन के जाना भी एक दुश्कर काम होता था। आज तो इंटरनेट के चलते हर काम आसान हो गया है। ऐसे में उस दौर में पत्रकारिता करने वाले श्री त्रिलोक दीप के बारे में विशेषांक निकालना और इनके बारे में बताना एक सराहनीय कार्य है।

(अधिस्वीकृत स्वतंत्र पत्रकार)

पुत्र : स्व. कमल माथुर (पत्रकार)

□□□

एक सच्चे और अच्छे कलम के सिपाही हैं त्रिलोक दीप

राजेन्द्र भारद्वाज

त्रिलोक दीप बुद्धिजीवियों की पत्रिका "दिनमान" के वो दीपक हैं, जो किसी के भी जीवन में उजाला ला दे। शब्दों के जादूगर हैं दीप जी, शब्दों को अपनी कहानी में कैसे नचाना है, वह कोई उन से सीखे। निर्जीव से निर्जीव समाचार कथा को सजीव करने का हुनर उन में है। चुटीले, सुन्दर, रोचक और ध्यान आकर्षित करने वाले शीर्षक घढ़ने की कला में दीप जी माहिर हैं।

शिक्षा, धर्म, अपराध, राजनीति, देश और विदेश की खबरों में उनकी रुचि सदा से रही है। छोटे से छोटे और बड़े से बड़े राजनेताओं और धर्म गुरूओं के हृदयस्पर्शी साक्षात्कार लेने की दक्षता उनमें है। मानवीय संवेदनाओं से भरी खबरों को शब्दों में कैसे पिरोना है उस शिल्प के शिल्पकार दीप जी हैं। संवेदनशील खबरों में संवेदनाओं को पत्रकारिता के मापदंडों के अनुरूप किस हद तक दबाना या उभारना है यह दीप जी बखूबी जानते हैं।

त्रिलोक दीप निष्पक्ष व निर्भीक पत्रकारिता की मिसाल हैं। मृदुभाषी दीप जी को मैंने कभी भी किसी से भी ऊंची आवाज़ में बात करते नहीं देखा। त्रिलोक जी जुल्म के आगे ढाल और अत्याचार के खिलाफ इंसाफ की आवाज हैं। दीप जी एक जिंदा दिल इंसान हैं और सुख- दुःख के साथी हैं। वह सदा खुश रहते हैं और खुशियां बांटते रहते हैं। दीप जी यारों के यार हैं और यही कारण है कि दीप जी और उनके यारों की टोली जब -तब दिल्ली के प्रेस क्लब में नज़र आती रहती है। उनके हरदिल अजीज दोस्तों में जसविन जस्सी, सुरेन्द्र मोहन पाठक और कोहली साहिब प्रेस क्लब में ठहाके लगाते मिल जाते हैं। उस जमाने में न तो मोबाइल फोन थे और लैंड लाइन फ़ोन भी किसी को भी आसानी से नहीं मिलता था। उस वक्त हमारे हाथ में न तो लैपटॉप और कम्प्यूटर थे और ना ही इंटरनेट था लेकिन फिर भी तेजतर्रार त्रिलोक दीप ने ताजा तरीन खबरें पाठकों को परोसना सदा जारी रखा। जब दुनिया सोती थी तो दीप जी जागते थे ताकि ताजा ताजा खबरों को अपने विश्लेषण के साथ दिनमान के सुधी पाठकों को दे सकें।

त्रिलोक दीप शायद 1 जनवरी, 1966 को शुरू हुई पत्रिका "दिनमान" की संस्थापक टीम के सदस्य रहे होंगे। "टाइम्स प्रकाशन समूह" के तत्कालीन मालिक स्वर्गीय साहू शांति प्रसाद जैन और उनकी पत्नी स्वर्गीय रमा जैन जी का एक सपना था कि अंग्रेजी की विदेशी समाचार पत्रिका " न्यूज़ वीक" और " टाइम " की भांति एक हिन्दी की साप्ताहिक समाचार पत्रिका अपने देश से भी निकाली जाए। स्वर्गीय साहू शान्ति प्रसाद जैन और स्वर्गीय रमा जैन जी का ये सपना पूरा किया प्रतिष्ठित व सुप्रसिद्ध साहित्यकार और वयोवृद्ध पत्रकार स्वर्गीय सच्चिदानंद हीरानंद वात्सयायन " अज्ञेय " जी ने। उन्हें संपादक का कार्यभार सौंपा गया और उन्होंने इस पत्रिका का नाम रखा "दिनमान "। स्वर्गीय अज्ञेय जी की देखरेख में पत्रिका का प्रकाशन 1 जनवरी, 1966 से शुरू हो गया। अज्ञेय जी ने अपनी संपादकीय टीम में ज्यादातर लोगों को दिल्ली आकाशवाणी से लिया था।

दिनमान के जिस दौर में मैंने काम किया उस समय स्वर्गीय कन्हैया लाल नंदन जी हमारे संपादक थे। स्वर्गीय रघुवीर सहाय जी का कार्यकाल समाप्त हो चुका था। टाइम्स समूह के प्रबंधकों ने कहानियों की पत्रिका "सारिका " व बाल पत्रिका " पराग " के संपादक स्वर्गीय नंदन जी को समाचार पत्रिका दिनमान की जिम्मेदारी भी सौंप दी। दिनमान की उस समय की टीम में आर्थिक विषयों के विशेषज्ञ स्वर्गीय जितेन्द्र गुप्त,

कवि हृदय स्व. सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, पंडित शाम लाल, रामसेवक श्रीवास्तव, महेश्वर दयालु गंगवार, जवाहरलाल कौल, त्रिलोक दीप, शुक्ला रुद्र, विनोद भारद्वाज, प्रयाग शुक्ल, सुषमा जगमोहन, उदय प्रकाश, राकेश कोहरवाल, संतोष तिवारी और मुझे टाइम्स की ट्रेनी जर्नलिस्ट स्कीम के तहत सन 1982 में चुना गया था। मैं एक ट्रेनी जर्नलिस्ट था, जिसे'ऑन द जॉब ट्रेनिंग''के लिए दिनमान में भेज दिया गया था।

समाचार कथाओं को टाइप करने का काम नेगी, उदय नारायण और सुरेन्द्र मलिक के कंधों पर होता था। कला विभाग की जिम्मेदारी निभाते थे रवि शर्मा और चंचल। रेफरेंस विभाग में राज किशोर हमें खबरों की पुरानी फाइल और फ़ोटो उपलब्ध कराने का काम करते थे।

सन 1982 में मई के महीने में जब मैंने दिनमान में अपनी ट्रेनिंग आरम्भ की तो ये वो दौर था जब दिल्ली में एशियाई खेल- "एशियाड-'82 " होने वाले थे। उस वक्त भारत में रंगीन टी. वी, वीडियो कैमरे और रंगीन फ़ोटो कैमरों का आयात शुरू हो चुका था। इसके चार- छह साल बाद पूर्व प्रधानमंत्री स्वर्गीय राजीव गांधी के कार्यकाल में " कम्प्यूटर" ने भारत में मीडिया की ड्योढ़ी पर दस्तक दे दी थी। लेकिन उससे पहले मैंने त्रिलोक दीप जी की कापियों को " मोनो टाइपिंग" व हैंड कंपोज़िंग से कम्पोज़ होते देखा है। काली स्याही से प्रूफ उठाने वाली मशीन के पेज प्रूफों को मैंने दीप जी को पढ़ते देखा है।

स्वर्गीय राजीव गांधी के जमाने में जब कम्प्यूटर आया तो अखबारों के दफ्तरों में "टेलीप्रिंटर" की ठक- ठक, लाइनो टाइप मशीन की खट- खट और "क्रेडल मशीन " की खड़- खड़ की आवाज बंद हो गई थी। प्रेस रूम से रांगे के टाइप केसों को अलविदा कर दिया गया था, जिन से हैंड कंपोज़िंग की जाती थी।

त्रिलोक दीप और खुद मैं पत्रकारों की उस अंतिम पीढ़ी से सरोकार रखते हैं, जिसने हैंड कंपोज़िंग, हॉट मेटल से मोनो टाइप कंपोज़िंग, लाइनों टाइप कंपोज़िंग और बाद के दौर में कम्प्यूटर पर समाचार पत्र और पत्रिकाओं के पेजों को बनते और रोटरी मशीन पर छपते देखा है।

भला वो दिन भी क्या दिन थे, जब हम पेज

बनाने वाले लोहे के "स्टोन " पर कंपोज़िंटर से पेज बनवाते थे, पेजों के प्रूफ पढ़ते और पेजों को फाइनल कर छपने के लिए भेजते थे। अब तो कम्प्यूटर के टर्मिनल पर ही खबर बनती है और पेज भी बन जाते हैं। हम दोनों ने ही पुरानी और नई तकनीकों से काम किया है। काली स्याही से हाथ काले करने का जमाना पुराना था, अब तो कम्प्यूटर का जमाना है। त्रिलोक दीप जी ने देश के कितने ही पत्रकारों को कलम पकड़ कर लिखना सिखाया। पत्रकारिता की बारहखड़ी बहुत से पत्रकारों ने उन से ही सीखी है, उन में से एक मैं ख़ुद भी हूँ। जब साप्ताहिक" संडे मेल " के कार्यकारी सम्पादक के रूप में उन्होंने 31 अक्टूबर, 1989 को कार्यभार संभाला तब उन्होंने "टैबलॉयड पत्रकारों''की एक पूरी नर्सरी तैयार की है। उस समय इस प्रकार की पत्रकारिता का एक नया दौर देश में शुरू हुआ था। उससे पहले अखबारी व पत्रिकाओं के पत्रकारों की प्रजातियां ही हमारे देश में दिखाई देती थीं

उस नई तरह की "टैबलॉयड पत्रकारिता " के प्रणेता बने त्रिलोक दीप। संडे मेल, संडे ऑब्जर्वर और दिनमान टाइम्स उस समय की उस कड़ी के साप्ताहिक टैबलॉयड अखबार थे। संडे मेल की उस समय की सनसनी खेज और रोचक पत्रकारिता को लोग आज भी याद करते हैं। मसालेदार रोचक सम-सामयिक विषयों पर लिखे लेखों का पिटारा

होता था "संडे मेल", जिसे हर रविवार पाठक अपने हाथों से खुद खोलते थे। पूरे दिन पढ़ने का रिसाला होता था संडे मेल।

लगभग सवा साल मैंने दिनमान में काम सीखा और उस समय में मैंने दीप जी बहुत कुछ सीखा। मैंने उनसे सीखा अनुशासन और काम के प्रति प्रतिबद्धता। समय की पाबंदी (डेड लाइन) पत्रकारिता के पेशे में बहुत जरूरी है। ड्यूटी के समय से पहले दफ्तर पहुंचना और काम जब तक खत्म ना हो जाए तब तक दफ्तर में डटे रहना त्रिलोक दीप जी का रोज का शग़ल था। डॉट 11 बजे दीप जी का बजाज / वेस्पा स्कूटर हमारे दफ्तर 10, दरिया गंज की पार्किंग में आ कर खड़ा हो जाता था। दीप जी का दफ्तर आने का टाइम तो तय था लेकिन घर जाने का कोई टाइम नहीं था।

त्रिलोक दीप पत्रकारिता के " पुरोधा " हैं, जिसका कोई मुकाबला नहीं। दिनमान में अपने 23 साल के कार्यकाल में दीप जी ने अनेक देसी विदेशी हस्तियों के साक्षात्कार किए और अनेक चुनाव कवर किए। कितने ही नेताओं को गद्दी पर बैठेते और उतरते देखा। लेकिन उन्होंने कभी भी अपनी निष्पक्ष पत्रकारिता पर आंच नहीं आने दी।

त्रिलोक दीप ने 80 से अधिक दिवालियाँ देखी होंगी। जीवन में कितने ही उतार चढ़ाव आए होंगे लेकिन " कलम के इस सिपाही " ने अपनी ड्यूटी में कभी कोई कोताही नहीं बरती। उन्होंने समय के साथ अपने हुनर को अपग्रेड ही किया है। नए दौर के सोशल मीडिया पर उनकी सक्रियता देखते ही बनती है।

"फेस बुक"(Facebook) पर आज भी दीप जी बड़े -बड़े लेख और अपने जीवन के संस्मरण अपने चाहने वालों के लिए लिखते रहते हैं। "व्हाट्सएप " पर भी वह अपने मित्रों और जानने वालों को रोज जवाब देते हैं। सामान्य तौर पर पैंट कमीज़ पहनने वाले त्रिलोक दीप जी वाहे गुरू के सच्चे " सरदार " हैं।

बार- त्यौहार पर मैंने टनाटन कुर्ते पाजामे में भी उन्हें देखा है। सिर पर पगड़ी उनके व्यक्तित्व को चार चाँद लगा देती है। अपनी दाढ़ी को वो हमेशा फिक्स रखते हैं।

धर्म- कर्म को मानने वाले दीप जी को गुरुद्वारे में सदा मत्था टेकना और अरदास करना अच्छा लगता है। गुरू महाराज का लंगर छकना और कड़ा प्रसाद उन्हें बहुत भाता है। जीवन भर चलती चली जा रही है। गड़बड़ घोटालों की पोल खोलने में उन्हें बहुत आनन्द की अनुभूति होती है।

अपनी कलम की ताकत के बल पर बड़े से बड़े व्यक्ति से टकराने की हिम्मत अब भी रखते हैं। आज भी एक सक्रिय और जागरूक पत्रकार के रूप में अपनी पहचान बना कर रखी हुई है।

मेरे अग्रज " दीप जी तुस्सी ग्रेट हो जी " !! एक सच्चे और अच्छे " कलम के सिपाही "!!! किसी ने आप जैसे पत्रकारों के लिए ठीक ही कहा है कि आप जैसे कर्मठ पत्रकार न होते तो हमारे वतन का क्या हाल होता वो निम्न पंक्तियों में बयां किया गया था

"तख्त बेच देंगे, ताज बेच देंगे,
कलम के सिपाही अगर सो गए,
तो वतन के मसीहा वतन बेच देंगे।

परिचय

श्री त्रिलोक दीप जी पर यह लेख " नव भारत टाइम्स " के पूर्व रात्रि संपादक श्री राजेन्द्र भारद्वाज ने लिखा है। श्री भारद्वाज ने अपने पत्रकारिता के कैरियर की शुरुआत साप्ताहिक " दिनमान " में प्रशिक्षु पत्रकार के रूप में की थी। उनका चयन टाइम्स प्रकाशन समूह की " ट्रेनी जर्नलिस्ट स्कीम "के अंतर्गत हुआ था। इस समय श्री भारद्वाज भिवानी के''दैनिक चेतना''और गुरुग्राम के दैनिक'गुड़गांव मेल''के लिए दिल्ली में समाचार संकलन का कार्य करते हैं। वह हरियाणा के मान्यता प्राप्त पत्रकार हैं। हरियाणा के हिसार जिले के गांव सातरोड़ खुर्द में जन्मे राजेन्द्र भारद्वाज के पिता स्वर्गीय श्री श्रीदत्त भारद्वाज भी पत्रकार थे। वह नव भारत टाइम्स के संस्थापक सदस्य थे और NBT के मुख्य उप- संपादक के पद से सेवानिवृत्त हुए थे

दीप जी वरिष्ठ हैं

विष्णु नागर

दीप जी मेरे वरिष्ठ हैं। एक तरह से उनसे मेरा नाता आधी सदी से है। मैं उन दिनों फ्रीलांसर था। दिनमान मेरा निरंतर आना जाना था। धीरे धीरे सभी से मेरा परिचय हुआ। दिनमान संपादक रघुवीर सहाय, उन्हें ऐसी कई जिम्मेदारियां सौंपते थे, जिन्हें पूरा करना शायद दूसरों के लिए मुश्किल था। मैंने उन्हें हमेशा आत्मविश्वास से भरपूर, सहज पाया। उनके अंदर की दुनिया की हलचलों की नहीं जानता मगर बाहर उन्हें उत्फुल्ल ही देखा।

दिनमान तो इतिहास बन चुका है और पत्रकारिता का एक इतिहास बना चुका है मगर दीप जी से विशेष रूप से दिल्ली की प्रेस क्लब में भेंट होती रही। कभी केवल हलो -हलो, कभी बातचीत। दिनमान के आधार स्तंभों में से एक दीप जी मुलाकात होते रहना एक तरह से अपने उन अच्छे-बुरे दिनों को याद करना भी है। मुझे हमारे समय के बड़े कवि और दिनमान के संपादक की जीवनी लिखने का सौभाग्य मिला। दिनमान की सभी अंकों की फाइलें कहां मिल सकती है तो काफी खोज करने पर पता चला कि इस साप्ताहिक के स्टाफ के अकेले सदस्य त्रिलोक दीप जी के पास पूरी फाइलें हैं। संपर्क किया तो दीप जी तुरंत तैयार। अपनी लाइब्रेरी मेरे हवाले कर दी। अपनी लिखी कुछ सामग्री भी उन्होंने उपलब्ध करवाई। ऊपर से स्वागत सत्कार। यह बहुत बड़ी सहायता थी। रघुवीर सहाय के प्रति उनके सम्मान और मेरे प्रति प्रेम उदाहरण है।

उनके स्वस्थ और सुदीर्घ जीवन की मंगलकामनाएं।

त्रिलोक में प्रकाशित हुआ एक दीप

प्रो: नीलम महाजन सिंह

मेरा परिचय व मित्रता, त्रिलोक दीप जी के साथ तीन दशकों से अधिक का है। जब मैं दूरदर्शन की वरिष्ठ सम्वादाता थी तो त्रिलोक जी, संडे मेल के कार्यकारी सम्पादक थे। कन्हैया लाल नंदन संपादक रहे। दीप जी ने मेरे जीवन के अनुभवों पर संडे मेल में'कवर स्टोरी'प्रकाशित करवाई। युवा पत्रकार सर्जना शर्मा ने छह पन्नों और सात चित्रों के साथ यह साक्षात्कार प्रकाशित किया। मैं बहुत अभिभूत हुई, कि मेरे लिए किसी पत्रिका ने इतना महत्वपूर्ण आलेख प्रकाशित किया। स्वाभाविक है कि मैंने त्रिलोक दीप जी को आभार प्रकट किया। त्रिलोक दीप की शख्सियत ऐसी है कि वे सबको अपने रंग में ढाल लेते है व सबके रंग में ढल जाते हैं! यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि त्रिलोक दीप; बीते दौर के'पत्रकारों के कप्तान'हैं। त्रिलोक दीप हिन्दी पत्रकारिता को एक महत्वपूर्ण मोड़ देने वाले पत्रकार, निबंधकार व सम्पादक हैं। बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी होने के साथ-साथ वे एक वरिष्ठ फोटोग्राफर व सत्यनिवेशी पर्यटक भी हैं। इन दिनों त्रिलोक दीप अपने संस्मरण लिख, नव-युवा पीढ़ी को लाभान्वित कर रहें हैं। दिनमान व संडे मेल जैसी पत्रिकाओं में कार्यरत रहते हुए; वे हिंदी पत्रकारिता को उस मुकाम पर ले गए, कि आज हिंदी पत्रकारिता ने दूसरी प्रादेशिक भाषाओं को पीछे छोड़ दिया है। त्रिलोक दीप ने 1984 के'ऑपरेशन ब्लू स्टार'की अनेक शख्सियतों से भेंटवार्ता प्रकाशित की। उन्होंने इंदिरा गांधी, ज्ञानी ज़ेल सिंह, राजीव गांधी, चंद्रशेखर, कांशीराम, अटल बिहारी वाजपेयी व अनेकों राजनेताओं के साक्षात्कार लिए, जो प्रकाशित तो हुए ही परंतु त्रिलोक दीप के सोशल मीडिया पर भी पाये जाते हैं। "पत्रकार के लिए जिज्ञासा होनी आवश्यक है। एक पत्रकार को मुकम्मल पत्रकार बनने के लिए, कवि, कहानीकार, नाटककार, उपन्यासकार, साहित्यकार ... सभी विद्याओं का अध्ययन करना आवश्यक है"; त्रिलोक दीप कहते हैं। आज़ादी के अमृत काल के बाद की चुनौतियाँ को जिन पत्रकारों ने समझा, उनमें त्रिलोक दीप का नाम सर्वोपरि है। उन्होंने हिंदी भाषा को पत्रकारिता के माध्यम से ऐसे मुहावरे दिए जिसे जनमानस ने स्नेहपूर्ण आत्मसात किया। दिनमान में त्रिलोक दीप को सच्चिदानंद वात्स्यायन'अज्ञेय'का सानिध्य व स्नेह प्राप्त हुआ। उन्होंने तीन पीढ़ियों के लेखकों, साहित्यकारों, फोटोग्राफर्स आदि को प्रोत्साहित कर आत्मविश्वास दिया, जो आज शीर्षस्थ पत्रकार बने। त्रिलोक दीप के प्रति मेरा व्यक्तिगत सम्मान व स्नेह है। मैंने हर स्टेज पर उन्हें सम्मानित करने का प्रयास किया। श्री त्रिलोक दीप जी को विदेशी संवाददाता क्लब, नई दिल्ली में डॉ: कबीर सिद्दीकी द्वारा'आलमी टीवी मीडिया उत्कृष्टता पुरस्कार'से सम्मानित किया गया। अनेकानेक पत्रकारों ने त्रिलोक दीप के लिए अपने भाव प्रकट किये हैं। हिंदी पत्रकारिता के पुरोधा हैं त्रिलोक दीप! खान अब्दुल गहफूर खान, राष्ट्रपतियों व प्रधानमंत्रियों का साक्षात्कार लेने के बाद, त्रिलोक दीप जी का पत्रकारिता के प्रति समर्पण उनके सार्वजनिक लेखों में प्रकट होता है। मैं त्रिलोक दीप जी के स्वस्थ्य और दीर्घायु की कामना करती हूँ। 'संपर्क भाषा भारती'के इस विशेष संस्करण; जो त्रिलोक दीप को समर्पित है, प्रकाशित होने पर शुभकामनाएं व बधाई। आप की जीवन यात्रा आनंदमय रहे!

दीप जी दिनमान के अघोषित अंतर्राष्ट्रीय संपादक

नरेश कौशिक

मुझे अपने 45 वर्ष के पत्रकारिता काल में बहुत कम लोग ऐसे मिले हैं जिन्होंने पहली भेंट में ही गहरी छाप छोड़ दी हो. 1979 में ऐसा ही हुआ था जब मैं त्रिलोक दीप से मिला था. मै टाइम्स ऑफ़ इंडिया समूह में ट्रेनिंग जर्नलिस्ट काल में तीन महीने के लिए दिनमान भेजा गया था। मेरी उम्र सिर्फ 23 बरस की थी. दिनमान उस समय की बहुत प्रतिष्ठित पत्रिका थी जिसमे साहित्य जगत के रघुवीर सहाय और सर्वेश्वर दयाल सक्सेना जैसे दिग्गज काम करते थे. मैं क्योंकि साहित्य जगत के बजाय देश विदेश के समाचारों में ज़्यादा रूचि लेता था इसलिए मेरे लिए ये नाम थोड़ा डराने वाले थे. हालाँकि इन साहित्यकार साथियों ने मुझे पहले दिन से ही बहुत स्नेह दिया, फिर भी मैं अपने को उनके बहुत नज़दीक नहीं कर पाया.

दिनमान में उस समय अनौपचारिक रूप से दो विभाग थे - साहित्य-कला और समाचार-विचार. मैंने निसंदेह अपना ठिकाना दूसरे भाग में पाया, इसकी एक वजह यह भी थी की मैं अर्थशास्त्र में ऍम ए कर के आर्थिक विषयों पर विशेष रूप से लिखना चाहता था. दीप जी समाचार विचार वाले भाग में थे, उन्होंने मेरा स्वागत करते हुए कहा, नरेश तुम्हे तो हमारे ही साथ काम करना है. लेकिन मैं चाहूंगा तुम अर्थशास्त्र के अलावा राजनीतिक और विशेष कर अंतरराष्ट्रीय विषयों पर लिखो. दीप जी दिनमान के अघोषित अंतर्राष्ट्रीय संपादक थे, और मूलतः उनके प्रोत्साहन के कारण मेरी रूचि विदेशी मामलों में हुई, जिसका सबसे बड़ा लाभ मुझे कोई दो साल बाद बीबीसी में नियुक्ति के लिए मिला. जो आधार मुझे दिनमान में मिला उसके कारण बीबीसी में मैंने अपने को कई नए साथियों से अधिक मज़बूत पाया. धन्यवाद दीप जी !

मैं दिनमान में पहले सिर्फ 3 महीने ट्रेनिंग के दौरान आया था, लेकिन वहां मेरी रूचि देश-विदेश के मामलों में इतनी बढ़ी कि मैने ट्रेनिंग के बाद स्थायी नियुक्ति के लिए भी दिनमान को ही चुना. ज़ाहिर है यह त्रिलोक दीप जैसे साथियों के बिना संभव नहीं हो पाता। मैं अंग्रेजी माध्यम से अर्थशास्त्र में ऍम ए करके आया था, इसलिए मुझे हिंदी में वाक्य रचना में शुरू में काफी कठिनाई होती थी. उसमें मदद के लिए भी मैं दीप जी और दिनमान के दूसरे साथी प्रयाग शुक्ल का हमेशा आभारी रहूँगा।

दीप जी अन्य साथियों की तरह उस समय उम्र और अनुभव में मुझ से बड़े थे, लेकिन उनकी खूबी थी की वह एक मित्र और बराबर के सहयोगी की तरह मेरे साथ पेश आते थे. उस समय मेरी मीरा मिश्रा के साथ दोस्ती थी जो बाद में मेरी पत्नी बनी . हम दोनों की घनिष्टता का सबसे ज़्यादा आभास दीप जी को था. जब मीरा मुझे मिलने कभी दिनमान आती तो कह देते थे, तुम चाहो तो आज की छुट्टी कर के मीरा के साथ जा सकते हो. बाक़ी मैं देख लूंगा.

त्रिलोक दीप से मेरी मित्रता दिनमान छोड़ने के बाद भी बनी रही है. वह लंदन भी हमारे घर में आ चुके हैं. भारत की यात्राओं में मैं हमेशा उन से मिलने की कोशिश करता हूँ. उनकी मुस्कान और "सेंस ऑफ़ हूयमर" आज भी पहले जैसा ही है. मुझे यह भी विश्वास है की जैसा प्रोत्साहन उन्होंने ने मेरा दिनमान में किया था, वैसा और बहुत से युवाओं को उन्होंने किया होगा.

वरिष्ठ पत्रकार, बीबीसी

उनकी आंखों में है, एक पूरी दुनिया

जयंती रंगनाथन

ल गभग तीस साल बाद दिल्ली में उनसे इस तरह मुलाकात होगी, सोचा ना था। और ये भी कि उन्हें वो सब बातें याद भी थीं!

नब्बे के शुरुआती दशक से और पीछे जाना चाहूंगी। मैं उन दिनों टाइम्स ऑफ इंडिया की पत्रिका धर्मयुग में काम करने लगी थी। हमारे ऑफिस में टाइम्स की सभी पत्रिकाएं आती थीं। दिनमान भी। त्रिलोक दीप जी से मेरा परिचय उसी पत्रिका के माध्यम से हुआ था। वे गजब के पत्रकार थे, एक से एक खोजी रपटें। क्या तो भाषा और क्या ही विस्तार। पढ़ कर लगता था कि पत्रकारिता में आए हैं तो ऐसा ही कुछ करना चाहिए।

फिर पता चला कि त्रिलोक जी संडे मेल में आ गए हैं। संडे मेल उन दिनों दिल्ली से निकलती था। साप्ताहिक अखबारों की दुनिया में संडे मेल ने एकदम से क्रांति कर दी थी।

धर्मयुग से तब तक डॉक्टर धर्मवीर भारती जी जा चुके थे। पत्रिका साप्ताहिक से पाक्षिक हो चुकी थी। मुझे वहां काम करते हुए सातेक साल हो चुके थे और मैं एक नए काम की तलाश में लगी हुई थी। फिर मुझे पता चला कि त्रिलोक जी मुंबई आ रहे हैं, और जल्द ही संडे मेल मुंबई से निकलने जा रहा है।

मैंने उन तक अपना सीवी पहुंचवाया और एक शनिवार को शाम चार बजे उन्होंने अपने दफ्तर में मुझे मिलने बुला लिया।

वो मेरी उनसे रूबरू पहली मुलाकात थी। एक सरदार जी, बहुत प्यारी सी, दिल्ली की जुबां बोलता हुआ। और उनके सामने मैं, एक मद्रासन।

त्रिलोक जी से उस दिन की बातचीत बेहद अलग रही, इंटरव्यू जैसा कुछ नहीं रहा। मैं उन्हें बताती रही कि दिनमान में मैंने उनके कौन-कौन से लेख और इंटरव्यू पढ़े हैं और वे बताते रहे कि धर्मयुग में मेरा लिखा उन्होंने क्या-क्या पढ़ा है। हम दिल्ली और मुंबई के बारे में बातें करते रहे। मैं दिल्ली कभी गई नहीं थी, वे मुझे दिल्ली और वहां की पत्रकारिता के रोचक किस्से सुनाने लगे।

अचानक उन्होंने मुझसे पूछा, चाय पियोगी?

मेरे कुछ कहने से पहले बोले, अरे, तू तो मद्रासन है। चाय थोड़े ही कॉफी पीती होगी। तेरे लिए वो ही मंगवाते हैं।

थोड़ी देर में गर्मागर्म कॉफी आ गई। मुझे लगा ही नहीं कि मैं वहां इंटरव्यू देने आई हूं। मैं जिनसे मिल रही थी, ऐसा लग रहा था पहले कई बार मिल चुकी हूं। पत्रकारिता में वरिष्ठ होते भी इतने ज़हीन थे। रास्ता दिखाते हुए और आपका हाथ पकड़ कर आपको साथ ले जाते हुए।

मुझे लगता है मैं तकरीबन पैंतालीस मिनट उनके केबिन में बैठ कर गप्पें लगा रही थी, जब तक कि इंटरव्यू के लिए अगला कैंडीडेट नहीं आ गया।

मुझे उठना पड़ा। बहुत संकोच के साथ मैंने पूछा, त्रिलोक जी, मैं इंटरव्यू देने कब आऊं?

वे ठठा कर हंसे, इंटरव्यू? कैसा इंटरव्यू? अरे इतनी बातें तो हुईं। मैंने जो पूछना था, पूछ लिया। जान लिया। बस, तैयार रह। जल्द ही तुझे कागज भेजेंगे।

मैं उस दिन सातवें आसमान में थी। लोकल ट्रेन में बैठ कर जब घर लौट रही थी, मेरे सामने एक नया आसमान सा खुलने लगा। नई जगह और नए पद पर काम करने का रोमांच हमेशा अलग होता है।

पर मेरा वो रोमांच कभी आसमान से उतर कर धरती पर नहीं आ पाया। संडे मेल का मुंबई संस्करण नहीं आया। वजह बाद में पता चला। पर मेरे जहन में त्रिलोक सर रह गए।

पता नहीं था कि जिंदगी में उनसे मुलाकात फिर से होने वाली है।

मुझे मुंबई से दिल्ली आए यूं तो पच्चीस बरस हो गए, पर त्रिलोक जी से कभी मिलना नहीं हुआ। दो साल पहले मित्र अभिषेक कश्यप के एक कार्यक्रम में प्रेस क्लब जाना हुआ। वहां अभिषेक ने मेरी मुलाकात त्रिलोक जी से करवाई। वही त्रिलोक जी। इन सालों में ज्यादा कुछ नहीं बदला था, वही जोशीला अंदाज और वही खुल कर हंसने की जिंदादिली। उन्हें मैं याद थी और मुझे वे। मेरे लिए बड़ी बात थी कि उन्हें मैं याद थी। अपने जूनियर को बस एक मुलाकात में इतनी शिद्दत से कौन याद करता है, जो इतने सालों बाद भी यह कहे कि इसे चाय क्यों पिला रहे हो, कॉफी पिलाओ, मद्रासन है यार। एक बार फिर ढेर सारी बातें हुईं। लग ही नहीं रहा था कि हमारे बीच इतना लंबा समय गुजर गया। उनके पास यादों का पिटारा है और अनुभवों का खजाना। देर तक हम बात करते रहे, इस वादे के साथ कि अगली मुलाकात में इतने साल नहीं लगाएंगे।

अब जब मैं उनसे फेस बुक पर जुड़ी हूं और लगभग रोज ही उनके पोस्ट और संस्मरणात्मक टिप्पणियां पढ़ती हूं, तो बरबस मेरी आंखों के सामने दिनमान और संडे मेल वाले त्रिलोक जी आ जाते हैं। कितना कुछ है उनके पास बांटने को। उस समय के लोग, घटनाएं और स्थितियां, इन सबके बारे में जानने की उत्सुकता मीडिया के लोगों को ही नहीं, हर किसी की होती है। मेरे लिए वे सभी बड़े नाम रहे हैं, उनके बारे में जान कर मैं कुछ और समृद्ध होती हूं।

अब जब दिल्ली रहने लगी हूं, तो यहां के कई पत्रकारों से उनके बारे में सुना है। सभी यही कहते हैं कि एक वो दिन थे और एक त्रिलोक दीप जैसा पत्रकार। त्रिलोक दीप जी बातचीत में बेहद विनम्र और हंसमुख है। उनसे किसी भी विषय पर बात करते हैं। मन तो है कि एक दिन पूरी दोपहरी उनके साथ गुजारूं, उनके किस्से सुनते हुए, हंसते-हंसाते हुए।

देखना-समझना त्रिलोक दीप को

महेश दर्पण

साप्ताहिक का सम्पादकीय विभाग जिस बड़े कमरे में बैठता था, उसका रास्ता समाचार साप्ताहिक'दिनमान'के हाल से होकर ही जाता था। वहाँ मैंने इस पत्र के प्रथम सम्पादक अज्ञेय, श्रीकांत वर्मा, मनोहर श्याम जोशी और रमेश वर्मा को भले न देखा हो, शेष सम्पादकीय टीम के नए-पुराने सभी साथियों को देखा है। इनमें अज्ञेय की सम्पादकीय टीम से जुड़े रघुवीर सहाय, जितेन्द्र गुप्त, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, रामसेवक श्रीवास्तव, शुक्ला रुद्र, जवाहरलाल कौल, योगराज थानी और त्रिलोक दीप तो थे ही, वह श्यामलाल शर्मा भी थे जो कभी आकाशवाणी में रह चुके थे और महेन्द्र व देवेन्द्र भारद्वाज के साथ मिलकर 'देशकाल' नाम से समाचार साप्ताहिक प्रकाशित करते रहे थे। यही साप्ताहिक 'दिनमान' की प्रेरणा बना। बहरहाल, अपने'सारिका'-सेवा के दिनों में मैंने त्रिलोक दीप जी को 10 दरियागंज वाले कार्यालय में करीब से देखा, जो 1966 में 'दिनमान' से जुड़ चुके थे। उल्लेखनीय है कि'दिनमान'का प्रकाशन 21 फरवरी, 1965 से प्रारंभ हुआ। तब बताते हैं, इस साप्ताहिक का कार्यालय 7 बहादुरशाह ज़फ़र मार्ग पर हुआ करता था।

'सारिका'में नियुक्ति से पूर्व मैं 'सूर्या' (हिन्दी)

में कार्यरत था, जहाँ हमारे सलाहकार संपादक श्रीकांत वर्मा थे। इसी दौरान मनोहरश्याम जोशी 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' में मेरी कहानियाँ प्रकाशित कर मुझे प्रोत्साहित कर चुके थे। मैं 'दिनमान' के हाल को देखता, तो सोचता-अज्ञेय के साथ मनोहर श्याम जोशी और श्रीकांत वर्मा भी इसी पत्र का एक हिस्सा रहे थे। त्रिलोक दीप के पास इन सबके साथ काम करने और पत्रकारिता का इतिहास रचने के अनेक अनुभव हैं। अज्ञेय जी से मेरी पहली मुलाकात 'नवभारत टाइम्स' में हुई थी। बहरहाल, गुजरात के फालिया को अपनी जन्मभूमि बताने वाले दीप जी उसे अविभाजित भारत का हिस्सा कहते हैं जहां सन् 1935 में उनका जन्म हुआ। रावलपिंडी को वह अपनी पढ़ाई के लिए याद करते हैं जहाँ अपने फुफेरे भाई सुरजीत के साथ डेनीज़ स्कूल में उनकी शिक्षा की नींव पड़ी। अपने परिवार के साथ ही वह बुआ करतार देवी के स्वादिष्ट भोजन और चाय को स्मरण करते हैं। वह उनकी चार बुआओं में एक थीं। दीप जी मार्च, 1947 में हुए दंगों को याद कर उदास हो जाते हैं जब उन्हें परिवार सहित सेना के कैंपों में रहना पड़ा था।

उन्हें याद है महात्मा गांधी की वह सभा जहाँ उन्होंने अमन बनाए रखने की अपील की थी। वहीं पहली मर्तबा त्रिलोकदीप ने खान अब्दुल गफ्फार खाँ को भी देखा था। उन्हें पिता अमरनाथ का फिक्रमंद होना भी याद है और उनके मुस्लिम पार्टनर की यह सलाह भी कि'अपने और बेटे के बाल कटवाकर मज़े से हमारे साथ यहीं रहो।'सोचता हूँ, क्या आज चैरासी के दंगों के अनुभवों को भी वह ऐसे ही याद करते होंगे! तब वह'दिनमान'में ही कार्यरत थे। बहरहाल, कैसे वह रावलपिंडी छोड़कर लाहौर आये और वहाँ से ट्रेन पकड़कर लखनऊ और बस्ती में टिनिच पहुंचकर खबर मिलती है कि नाना-नानी का कत्ल हो गया, पर मामा बच गए। वह भी टिनिच में ही रहने लगे। परिवार के बाकी लोग भी वहीं पहुंच गए। त्रिलोक दीप का कहना है कि वहीं उन्होंने हिन्दी पढ़ना और लिखना सीखा। इससे पूर्व उनकी पढ़ाई उर्दू और अंग्रेजी में ही होती रही थी। टिनिच में हलवाई की कड़ाही से उछले उस छींटे को वह कभी नहीं भूलते जिसने उनकी एक आंख को प्रभावित कर दिया था।

दीप जी अपने रायपुर के दिनों को बड़े मन से याद करते हैं। वहाँ उन्हें उनकी मौसी ने बुलवाया था। 1949 में वह रायपुर पहुंचे और क्रमशः मकान मालिक, पड़ोसियों व सहपाठियों से ऐसी आत्मीयता मिली कि वह आज तक उसे भूले नहीं हैं। वहाँ उनकी पढ़ाई माधवराव सप्रे हाई स्कूल (हिंदी के प्रारंभिक कथाकार के नाम पर स्थापित स्कूल) में हुई। तब वह छठी कक्षा के छात्र थे। उन्हें अपने अध्यापक स्वराज्यप्रसाद त्रिवेदी की खूब याद है जिन्होंने उन्हें हिन्दी व बांग्ला साहित्यकारों की पुस्तकें पढ़ने के लिए उपलब्ध कराईं। यही वे दिन थे जब त्रिलोक दीप में अज्ञेय, यशपाल और धर्मवीर भारती से मिलने की इच्छा बलवती हो गई। यह समय और इसे निर्मित करने वाले अध्यापकों की स्मृतियाँ भी त्रिलोक दीप में अब तक गहरे में मौजूद हैं। किशोर वय की शैतानियाँ भी मज़ेदार हैं, जैसे अवधिया मास्टर साहब और बहल की पत्रिका के जवाब में निकाली पत्रिका का प्रसंग। स्कूल में उन्हें न सिर्फ अपना शिवजी बनना याद है, यह भी स्मरण है कि कौन सहपाठी तब उनका मेक-अप करता था! रायपुर का बूढ़ा तालाब, माँ का खुबो बनाना और श्याम टाकिज़ में लगी पहली रंगीन फिल्म की स्मृतियाँ ही नहीं, उस वक्त का समूचा इतिहास और भूगोल दीप के स्मृति लेखों में झलकता है। बड़ी बात है कि आज से करीबन सात दशक पूर्व जिस जयहिंद कमर्शियल इंस्टीट्यूट में उन्होंने हिन्दी व अंग्रेजी की टाइपिंग सीखी, उसे भी वह रायपुर की करीने से याद की गई चीज़ों में जगह देते हैं।

उन्हें यह मलाल है कि गांधी जी को दोबारा नहीं देखा। पर यह अच्छी तरह से याद है कि गांधी की हत्या के समय कैसी अफवाहें फैलने लगी थीं! किसी ने यह अफवाह फैला दी थी कि गांधी जी की हत्या किसी रिफ्यूज़ी ने की है। यह सुनकर त्रिलोक दीप के घर वाले भी सकते में आ गए कि कहीं अब फिर से 1947 जैसे दंगे तो नहीं होने लगेंगे! एक पत्रकार की हैसियत से जब दीप जी खान अब्दुल गफ्फार खां से एक बार फिर दिल्ली के एम्स में मिले तो उन्हें रावलपिंडी की बापू वाली सभा का स्मरण कराया। उनसे दीप की हुई बातचीत में खुला यह कड़वा सच कि इस सीमांत गांधी को जैसे कष्ट अंग्रेजों के समय में झेलने पड़े, वैसे ही पाकिस्तान में भी। 'दिनमान'में प्रकाशित इस साक्षात्कार में उन्होंने बताया कि पंद्रह बरस वह अंग्रेजों की

जेल में रहे और इतने ही साल उन्हें पाकिस्तानी जेल में काटने पड़े। रावलपिंडी के लोगों में त्रिलोक दीप बहुतेरे लोगों का स्मरण करते हैं जिनमें अलग-अलग क्षेत्रों की नामचीन हस्तियां भी हैं। विभाजन के बाद वह अपनी पाकिस्तान यात्रा को भी मन में बसाये हैं।

जितना वह रावलपिंडी को याद करते हैं, उतना ही रायपुर को भी। जिस समय वह रायपुर में रहे, तब वह एक खुला शहर था। उन्हें याद है कि रायपुर स्टेशन के पास स्थित गुरुद्वारा वह कैसे जाया करते थे। जुलूस में निशान साहब अपने हाथ में लेकर कैसे चलते थे और कितना उत्साह भरा होता था वह बैसाखी का मेला! वह यह याद कर दुखी हो जाते हैं कि उनके पिता का निधन केवल अड़तीस साल की उम्र में हो गया था। सन् 1952 में छत्तीसगढ़ की सार्वजनिक सभा में दीप जवाहरलाल नेहरू को देखने-सुनने जा पहुंचे थे। दूसरी बार उन्होंने पं. नेहरू को तब देखा जब वह भिलाई इस्पात कारखाने की आधारशिला रखने को आये थे। बरसों बाद रायपुर जाकर अपने सहपाठियों से मिलकर उनका खुश होना वैसा ही है, जैसे दिल्ली में लंबे समय बाद अपने आत्मीयों से मिलना।

उनके लिए यह खुशी की बात है कि जिन अज्ञेय जी से कभी वह मिलने को आतुर थे, बाद में उन्हीं से उन्हें पत्रकारिता के गुर सीखने का अवसर मिला। भारती जी से अपनी मुलाकात को वह जहां खुशनुमा लहज़े में स्मरण करते हैं, वहीं कथाकार-मित्र सुदीप के साथ श्रीपतराय से मिलना और उनकी पत्रिका'कहानी'में अपनी रचना के प्रकाशन को भी।

त्रिलोक दीप अपने बारे में लिखते हुए ज़माने भर के बारे में भी सहज भाव से लिखते जाते हैं। एक तरह से उनकी कहन में बैठकबाज़ी का शिल्प है। छोटी से छोटी चीज़ भी उन्हें याद रहती है। जब वह'आप्रवासी अमेरिका'शीर्षक अपनी पुस्तक मित्र रमेश नैयर के पास भिजवाते हैं, तो यह बताना नहीं भूलते कि यह काम उन्होंने प्रकाश उदय के हाथों करवाया था।

उनकी यह पुस्तक अपने शीर्षक की तहें बड़ी कुशलता से खोलती है। बताती है कि अमेरिका का दुर्भाग्य है कि किसी मूल नागरिक को अमेरिका का राष्ट्रपति नहीं चुना गया। वह इस प्रमेय को करीने से हल करते हैं कि संयुक्त राज्य अमेरिका किस प्रकार का देश है? क्यों ऐसा है कि देशज या मूल अमेरिकी लुप्तराय हैं? दरअसल, यह पुस्तक त्रिलोक दीप की अमेरिका के दस राज्यों की तीस दिन की यात्रा का परिणाम है। यहां वह यह तथ्य उजागर करते हैं कि पच्चीस करोड़ आप्रवासियों में से पन्द्रह प्रतिशत अमेरिका में रहते हैं।

उनकी इस पुस्तक में आप जान सकते हैं कि वहाँ प्रायः उच्च पदों पर कौन लोग रहते हैं? आयरलैंड से गए आप्रवासी गुट ने अर्जित की है सबसे ज्यादा ख्याति। यूरोपीय देशों का अमेरिका में अच्छा प्रभाव है। पोल लोग वहाँ व्यापार में नहीं, इंजीनियरिंग, डाॅक्टरी और अध्यापन में रहना पसंद करते हैं। यह पुस्तक बताती है कि भारतीय मूल के लोग अमेरिका कैसे और कब गए? करीबन सवा सौ साल पहले दो हजार सिख वहां ले जाए गए। तमाम दूसरे कामों के साथ इन लोगों ने अंग्रेज फौजों की ओर से दूसरे

विश्वयुद्ध में भाग भी लिया। मेहनती इस कौम ने अपनी एक विशेष पहचान कायम की है। दीप जी इस बात की प्रशंसा करते हैं कि अमेरिका में अल्पसंख्यकों को बराबरी का दर्ज़ा बाकायदा प्राप्त है। मज़ेदार बात यह है कि वहां बहुसंख्यक आप्रवासी हैं, कहकर दीप जी पाठक के लिए विचार का एक स्पेस छोड़ देते हैं।

खास किस्म की खोजी वृत्ति पाठक उनके लेखन में पा सकता है। इस वृत्ति को संतोष मिलता है उनके घूमने और यात्राओं से। यही कारण है कि वह यह जानना चाहते हैं कि ऐमिश वास्तव में हैं कौन? वे कैसे रहते हैं और उनके विश्वास क्या हैं? वह जानना चाहते हैं कि वह आम अमेरिकी से अलग कैसे हैं? करीब जाने पर वह पाते हैं कि परिवार-नियोजन पर उनका यकीन नहीं है। आमतौर पर उनका परिवार सात-आठ बच्चों वाला तो होता ही है। बस, आप उनकी जीवन शैली को प्रभावित नहीं कर सकते। उनकी माली हालत अच्छी है क्योंकि वह कृषक समुदाय की स्थिरता पर विश्वास करते हैं। आपको विचित्र लग सकता है, पर त्रिलोक दीप बताते हैं कि यह समुदाय बिजली उपकरणों का प्रयोग नहीं करता। टी.वी. तो उनके लिए जैसे कोई बीमारी ही है। इस समुदाय की महिलाओं द्वारा तैयार रजाइयाँ हर किसी को खूब भाती हैं। राजनीति से परहेज़ करने वाले इस समुदाय की मान्यता है कि दाढ़ी पौरुष की निशानी है। शांतिप्रिय जीवन जीने वाले ये लोग आपको पिछली शताब्दी से भी पूर्व के प्रतीत हो सकते हैं। फिर भी कुछ ऐमिश नया कल्चर अपनाने की दिशा में बढ़े हैं। इन्हें 'बीची ऐमिश' कहा जाता है। दूसरे ऐमिश 'हाउस ऐमिश' कहलाते हैं।

जब मैं यह वृत्तांत पढ़ रहा था, तब मुझे लगा जैसे दीप जी ने मुझे ऐन ऐमिश समाज के बीच पहुंचा दिया है। यह उनकी खूबी है कि वह जिस संलग्नता से उदय प्रकाश पर लिखते हैं, उसी आत्मीयता से लिखते हैं अभिषेक कश्यप पर। वह किसी का स्थानापन्न होकर भी खुशी से काम न सिर्फ करते रहे हैं, बल्कि बाखुशी बताते भी हैं कि योगराज थानी की अनुपस्थिति में वह 'दिनमान' में खेल पर भी लिखा करते थे। उन जैसा पत्रकार ही सहजता से यह स्वीकार कर सकता है कि इन्दिरा गांधी की हत्या की खबर उदय प्रकाश के सम्पर्क सूत्रों के कारण ही मिली थी। इसे कवर करने का दायित्व तब दीप जी को मिला था। वही हैं, जो 'दिनमान' के दिनों को याद करते हुए यह उजागर करते हैं कि रघुवीर सहाय ने कैसे अपनी कविताओं का पाठ दूसरों से करवाने का प्रयोग प्रारंभ किया था!

वह हर पल को खुश होकर जीना जानते हैं। नये-पुराने लोग उनका स्नेह पाते हैं और उनके साथ बैठकर एक समय को जी लेते हैं। वह किसी भी विषय पर गहराई में उतरकर लिख सकते हैं। उदाहरण के लिए सिद्धार्थ को ही लें! उम्र में अपने से दो दशक से भी अधिक छोटे सिद्धार्थ के जीवन और कला-प्रेम पर लिखते हुए वह उसी में डूब जाते हैं।

उनकी दृष्टि में यह कलाकार प्रकृतिप्रदत्त तो है ही, उसके काम की मौलिकता और नयापन भी उन्हें खूब पसंद आता है। वह उनके लिए एक खोजी और ऐसा यायावर चित्रकार है जिसकी कला में रेखाचित्र, स्कैच, पेड़-पौधे, पहाड़, सागर, पशु-पक्षी और मानव आकृतियाँ आदि सभी नज़र आते हैं। उसकी कला को वह अनेक रूपों में संभव होता देखते हैं, जैसे- पहाड़ की चढ़ाई पर बनाए

गए चित्र, बर्फीली चोटियों पर जाते हुए बनाए गए रेखाचित्र, समुद्र किनारे बनाए चित्रों में त्रिलोक दीप उसे एक टोही कलाकार के रूप में पाते हैं।

सिद्धार्थ के चित्रों की विशेषता उनके शब्दों में यह है कि वे देर तक एकदम नवनिर्मित होने का आभास देते हैं। अपने रंग वह स्वयं तैयार करते हैं। मिनरल में पत्थरों के साथ वह सोना, चांदी, तांबा, पीतल आदि का प्रयोग करते हैं। उनका कागज़ भी संगनेर की लुग्दी से बना खास'वसली'कागज़ होता है। बड़ी बात यह है कि इसकी उम्र इसके स्वरूप पर कोई प्रभाव नहीं डालती। दीप जी बताते हैं कि सिद्धार्थ के चित्रों में नीला रंग प्रमुखता लिए है। उसकी पहली गुरु हैं उनकी मां। बालपन से उन्होंने मां को बरतन रंगने के काम में डूबे जो देखा है। सीखने का माद्दा बचपन से है इस कलाकार में। गांव के मिस्त्रियों से उसने दीवार पर चित्र बनाना सीखा है। शुरुआती दिनों में सिद्धार्थ ने साइन बोर्ड भी बनाए। हैरानी की बात तो यह है कि केवल चैदह बरस की उम्र में वह शोभा सिंह का शिष्य बन गया। उनसे उसने सीखा सिख गुरु साहिबान के चित्र बनाना।

सिद्धार्थ का मूल नाम कम लोग जानते हैं। हरजिंदर सिंह के पूर्वज लायलपुर (अब पाकिस्तान में) से हैं। विभाजन के उपरांत इनका परिवार रायकोट के किले में आकर रहने लगा। इसका जिक्र भर कर के नहीं संतुष्ट हो जाते त्रिलोक दीप। वह रायकोट का ऐतिहासिक महत्व भी बताते हैं। हरजिंदर या सिद्धार्थ का परिवार वहाँ से कैसे बसियाँ गाँव आकर गुरुद्वारे की स्थापना में लग गया, जहाँ पूरी सेवाओं की व्यवस्था की गई। लंगर का इंतजाम बराबर रहता और चढ़ावा जरूरतमंदों पर खर्च कर दिया जाता।

त्रिलोक दीप के लेखन की विशेषता यह है कि वह हरदम फस्ट हैंड इन्फर्मेशन पाने में विश्वास रखते हैं। सिद्धार्थ से हुई चर्चा से वह जान सके हैं कि इस कलाकार के परिवार का सम्बन्ध तीसरे गुरु अमरदास जी से है। गुरु अमरदास जी द्वारा तैयार रागों और गायकों की व्यवस्था में उनके पुरखे भी शामिल थे। यही कारण है कि गुरुवाणी गायन की प्रथा उन्हें विरासत में ही मिली। कहते हैं- उनके दादा-परदादा को तो गुरु वाणी कंठस्थ थी, उनके मामाद्वय भी प्रसिद्ध कीर्तनिए हैं।

सिद्धार्थ नाम के अस्तित्व में आने की कथा भी दीप जी एक लोककथा की भांति वर्णित करते हैं। तिब्बती चित्रकारी थांगका सीखने के जुनून में, यह कलाकार तिब्बती गुरु शांग एशे के पास जाकर लामा बन गया। दीक्षित होने के बाद नाम रखा- सिद्धार्थ। सिद्धार्थ ने इसके उपरान्त विधिवत तिब्बती भाषा भी सीखी और कला भी। उन्हें दलाई लामा का सान्निध्य भी मिला। सिद्धार्थ ने एक बड़ा काम यह किया कि जहाँ-जहाँ गुरु नानक गए थे, उन सभी स्थलों की यात्रा की। वह तिब्बती गुरु के साथ स्वीडन भी गए। त्रिलोक दीप इस कलाकार की कला-शिक्षा और यायावरी से प्रभावित हैं। वह उनके पंजाब के गांवों के भ्रमण और लोककलाओं से सीखने की प्रशंसा करते हैं। चित्र बनाने की गति के मामले में सिद्धार्थ उन्हें हुसेन की भांति लगते हैं। उन्हें इस बात की खुशी है कि पेंटिंग की बिक्री से आये पैसे को सिद्धार्थ ने सन् 84 में हुए दंगों के पीड़ितों की मदद में लगाया। विशेषकर लड़कियों की पढ़ाई पर। वह उनके गुरुबानी गायन और लेखन की सराहना करते हैं। वह उनकी पुस्तक'द डेकोरेटेड काउ'के बारे में चर्चा करते हैं और'नेति नेति'में उन्हें सिद्धार्थ की जीवनी की झलक मिलती है। कुल मिलाकर त्रिलोक दीप सिद्धार्थ को एक हरफनमौला कलाकार मानते हैं। पाते हैं कि वह हरदम कुछ नया रचने के यत्न में लगे रहते हैं। प्रख्यात कलाविद और चित्रकार-कवि-कथाकार प्रयाग शुक्ल के दामाद के रूप में सिद्धार्थ का परिचय दीप जी बहुत बाद में देते हैं। बताते हैं कि यह कलाकार मूर्तिकार और वास्तुकार भी है। उसके और परिवार के सामाजिक सरोकारांे पर वह मन से बात करते हैं। जाने कितने संदर्भ और प्रसंग होंगे, जिनमें त्रिलोक दीप की परिश्रमशील संलग्नता छिपी मिलती है। खुलते वह बहुत धीरे-धीरे हैं जब आत्मीयता का तार सचमुच सधने लगे। इस आयु में भी उनमें जैसा उत्साह है, वह नई पीढ़ी के लिए निश्चित रूप से प्रेरक है।

‘हरीश जी, किद्दर जा रहे हो?’

हरीश चन्द्र सन्सी

आवाज सुन कर मैंने सड़क पर देखा। दीप जी की आवाज थी। वह पास आ कर रुकी कार में बैठे थे। मैं’संडे मेल’के उनके ग्रेटर कैलाश - 2 के कार्यालय से बाहर सावित्री सिनेमा के पास आ कर आटो की प्रतीक्षा कर रहा था। मेरे बताने पर उन्होंने कार में बैठने के लिए कहा। मैं संकोच में था अतः कहा‘‘अभी आ जाएगा।’’

मेरा संकोच देख कर वह कहने लगे‘‘आ जा, बैह जा, ऐथे आटो नहीं मिलना। जहां तक चाहो वहां तक हमारे साथ चलो।’’(‘‘आओ, बैठ जाओ, यहां आटो नहीं मिलता। जहां तक चाहो वहां तक हमारे साथ चलो।’’) वह घर जा रहे थे। कार में उनके साथ सर्जना शर्मा भी थीं। दीप जी ने उनसे मेरा परिचय करवाया। आगे जा कर रिंग रोड पर मैं उतर गया। इस प्रकार दीप जी ने बिना मांगे कई बार अपनी कार में लिफ्ट दी। यह उनका बड़प्पन है जो यह दर्शाता है कि वह सबका कितना ध्यान रखते हैं। इस घटना को याद करते ही उनसे जुड़े पूर्व के सारे दृश्य एक एक कर के मेरे सामने आने लगे।

‘दिनमान’में त्रिलोक दीप जी के अनेक लेख पढ़े थे। तब मन में इच्छा थी कि संभव हो तो उनसे मिला जाए। एक बार हमारे कार्यालय में आयोजित किए जाने वाले हिंदी परिषद के कार्यक्रम में कन्हैया लाल नंदन जी को आमंत्रित करने के लिए मैं हिंदी परिषद के एक पदाधिकारी के साथ 10 दरियागंज स्थित टाइम्स भवन गया था। नंदन जी के कक्ष के बाहर हमें खड़े देख कर एघ् केशधारी सज्जन ने आने का उद्देश्य पूछने के बाद हमें बैठने के लिए कहा और किसी सहयोगी को कह कर हमारे लिए चाय मंगवायी। फिर हमारी परिषद के बारे में जानकारी प्राप्त की।

कुछ देर बाद नंदन जी के आने के बाद वे हमें ले कर अंदर गए। हमारे बारे में बताने के बाद वह बाहर आने लगे तभी नंदन जी ने उन्हें कुछ कागज देते हुए कहा‘‘इन्हें देख लीजिए’’नंदन जी से हमारी बातचीत हुई और उन्होंने हमारा आमंत्रण स्वीकार किया और चाय मंगवाने के लिए घंटी बजाई। तब हमने उन्हें बताया कि चाय तो हम पी चुके हैं।

‘‘कब..’’नंदन जी ने पूछा।

‘‘जी, जो सज्जन हमें आपके पास लाए थे उनहोंने मंगवायी थी।’’मेरे साथी ने बताया। तब तक हमें उनका नाम नहीं पता चला था। नंदन जी ने मुस्कराते हुए कहा‘‘अच्छा, दीप जी के

साथ''तब मुझे पता चला कि वही'त्रिलोक दीप जी'हैं। बाहर आ कर उन्हें बताया कि हम उनके लेखों को रुचि के साथ पढ़तें हैं। चूंकि वह कुछ टाइप कर रहे थे अतः उनसे फिर मिलने की बात कह कर हम वहां से चले आए।

दीप जी से हुई इस संक्षिप्त भेंट के बाद उनसे लंबी बातचीत तब हुई जब नंदन जी के साथ उन्होंने 1990 में ग्रेटर कैलाश भाग - 2 से'संडे मेंल'शुरू किया। नंदन जी ने मुझे वित्तीय मामलों पर लिखने के लिए कहा। उन दिनों मैं'साप्ताहिक हिंदुस्तान'में 1981 मे शुरू हुया स्थायी स्तंभ'दिमाग लड़ाइए हल ढूंढिए'लिखता था। इसके अतिरिक्त 1986 में दिल्ली में आयोजित'शतरंत एशियाड'पर'दैनिक हिंदुस्तान'में दैनिक रिपोर्ट लिख चुका था तथा बाद में शतरंज एशियाड पर कई लेख भी लिखे थे। इनमें 20 अंकों में लिखा गया एक लेख'पग पग आगे ...'भी था। इन लेखों में नए खिलाड़ियों को शतरंज खेलने के बारे में विस्तारपूर्वक बताया गया था।

'संडे मेंल'में वित्तीय मामलों पर छपे मेरे लेखों पर उनकी सराहना और मार्गदर्शन ने मेरा मनोबल भी बढ़ाया। इसी का परिणाम था कि हमारे लेख में छपे विश्लेषण और उसमें चित्रित व्यंगचित्र का संज्ञान लेते हुए तत्कालीन'कंट्रोलर आफ कैपिटल इश्यूज'को शेयर आवेदनपत्र में एक महत्वपूर्ण शर्त जोड़नी पड़ी थी। इसके अनुसार निवेशकों को बैंक ड्राफ्ट पर किए जाने वाले व्यय को आवेदित राशि में से घटाने की अनुमति प्रदान की गई थी। किसी भी लेख के कारण'कंट्रोलर आफ कैपिटल इश्यूज'द्वारा की जाने वाली यह सबसे त्वरित कार्रवाई थी।

दीप जी को लेख देने के दौरान एक कार्टून की रूपरेखा का कागज भी साथ लगा रह गया। मैं वहां नीरज कुमाार के पास बैठा था कि दीप जी का बुलावा आया। मैं अंदर गया तो उनके हाथ में वही कागज था और वे नंदनजी के साथ चर्चा कर रहे थे। मुझे देखकर कहने लगे'हरीश, हमें ऐसे तीन बाक्स वाले कार्टून चाहिएं, 'समाचार मेल अपराह्न'के लिए।'मैंने कहा मैं इस तरह का खाका दे दूंगा आप अपने आर्टिस्ट से बनवा लीजिए।'दीप जी कहने लगे नहीं नहीं, आप पूरा दीजिए और यह आइटम उसमें नियमित छपेगी।'उल्लेखनीय है कि'समाचार मेल अपराह्न'सप्ताह में छह दिन प्रकाशित होना था।

खैर मैंने एक कार्टूनिस्ट से बात की और यह स्तंभ शुरू हो गया। फिर तो अनेक कार्टूनिस्टों के सहयोग से यह स्तंभ अंत तक चलता रहा। 'संडे मेंल'का कार्यालय कस्तूरबा गांधी मार्ग पर स्थित मर्केंटाइल हाउस में आ गया। मुझे भ आने जाने में सुविधा होने लगी।

बाद में फिर'संडे मेंल'का कार्यालय कालका जी में रवि दास मार्ग पर चला गया। मेरा संपर्क बना रहा और प्रकाशन बंद होने तक मेरा स्तंभ'रंग तरंग'जारी रहा। उसके बाद फेसबुक के माध्यम से संपर्क हुआ। योग से यही अनेक पत्रपत्रिकाओं के विपरीत दीप जी की व्यवस्था के कारण मुझे'संडे मेंल'से नियमित रूप से हर माह पारिश्रमिक मिलता रहा।

अक्तूबर 2017 की बात है, फेसबुक पर आई एक पोस्ट से पता चला था कि लगभग 25 वर्ष पूर्व बंद हुए'संडे मेंल'के सहयोगियों ने फेसबुक पर सितंबर 2017 में राजेश शर्मा और सुनीता सभ्भरवाल द्वारा'डंपस जोल'नाम से एक ग्रुप शरू किया गया है। इसमें पूर्व कर्मचारियों का शमिल किया गया था। अक्तूबर 2017 में प्रेस क्लब में इसकी बैठक हुई जिसमें काफी मित्रों ने भाग लिया था। अगली बैठक नवंबर 2017 में होनी तय हुई। इसके अतिरिक्त व्हट्सएप पर भी'नदकंल डंपस जोल'के नाम से ग्रुप बनाया गया। मुझे पता चला तो मैंने दीप जी को फोन किया और कहा कि क्या मुझे भूल गए सब? दीप जी ने कहा कि ऐसा नहीं है। आप तो निरंतर हमसे जुड़े रहे हो। अतः एडमिन सुनीता जी ने मुझे दोनों ही ग्रुप में शामिल किया और नवंबर 2017 में होने वाली अगली बैठक में शामिल होने के लिए कहा। परंतु मेरी पत्नी का स्वर्गवास हो जाने के कारण मैं इस बैठक में शामिल नहीं हो पाया।

उसके बाद मैं दिसंबर में हुई बैठक में पहली बार शामिल हुआ। बाद में इन बैठकों की अवधि लंबी होते होते समाप्त गई पर दोनों ग्रुपों के माध्यम से सबका संपर्क बना हुआ है। अब भी समय समय पर जब भी कोई कठिनाई सामने आती है दीप जी का मार्गदर्शन मिलता रहता है।

हरीश चन्द्र सन्सी

2000 से दैनिक हिंदुस्तान(सभी संस्करण) में वर्ग पहेली का देनिक प्रकाशन

2010 से दैनिक अमर उजाला सभी संस्करण)के उड़ान परिशिष्ट मे ज्ञान वर्ग पहेली का साप्ताहिक प्रकाशन

विभिन्न पत्र व पत्रिकाओं में जंबो वर्ग पहेली (15X15), शब्द वर्ग पहेली, ज्ञान वर्ग पहेली, खेल वर्ग पहेली, फिल्म वर्ग पहेली – सभी (9X9)

पुस्तकें

1. 101 दिमागी कसरतें (हिन्दी) 2. 101 दिमागी कसरतें (अंग्रेजी) 3. 101 दिमागी कसरतें (कन्नड़) 4. 121 दिमागी कसरतें (हिन्दी) 5. 50 दिमागी वर्ग पहेलियाँ 6. 50 तेज तर्रार वर्ग पहेलियाँ 7. रंगतरंग फुहार 8. रंगतरंग फुलझडियां 9. रंग तरंग चुस्कियां (तीन हास्य पुस्तकों की श्रृंखला) 10. बैंक सहायिका (बैंकों में हिन्दी में काम काने के लिए सहायक एक पुस्तक)

टीवी स्क्रिप्ट लेखन 1. "छत्तीसगढ़ की बेटी" (छत्तीसगढ़ की सुप्रसिद्ध बाल पंडवानी गायिका ऋतु वर्मा पर बना दो कड़ियों का डाक्युड्रामा) 2. विभिन्न जिलों (छिंदवाडा, मधुबनी, मंडी आदि) में DWACRA प्रोग्राम पर वृत्तचित्र

□□□

देश के शीर्ष पत्रकार

ललित वत्स

देश के शीर्ष पत्रकारों में माने गए त्रिलोक दीप पत्रकारिता ही नहीं, मानवीय मूल्यों की दृष्टि से भी बड़े प्रेरणास्त्रोत हैं। देश विभाजन से पहले सन् 1936 में रावलपिंडी में जन्मे दीपजी को बहुत ही संघर्षपूर्ण हालात का सामना करना पड़ा। संघषों से निकले कई व्यक्तियों के व्यवहार में मैंने कई बार कड़वाहट महसूस की है। लेकिन त्रिलोकजी मिठास और आत्मीयता से भरे हैं। बड़े संकटों की आंधियों में जलना शुरू हुआ यह दीया 87 साल की उम्र में भी प्रेरणा की रोशनी बिखेर रहा है। वह अब भी सक्रियता के साथ पत्रकारिता, समाज, देश और दुनिया के मुद्दों पर पैनी नजर रखते हैं। उन पर बात करते हैं, गाइड करते हैं। यह सब उनकी विलक्षण प्रतिभा और आत्मीयता का सबूत है। विनम्रता देखिए कि वह इस सबका श्रेय ईश्वर को देते हैं।

इंदिरा हत्याकांड और त्रिलोकदीप: मैंने उन्हें पहली बार बहादुर शाह जफर मार्ग पर टाइम्स ऑफ इंडिया ग्रुप की बिल्डिंग में 1985 में देखा था। लेकिन उनके बारे में चर्चा मैं 1984 के नवंबर महीने से ही सुन रहा था। नवभारत टाइम्स के रिपोर्टिंग डेस्क पर अक्सर उनका जिक्र वरिष्ठ पत्रकार करते थे। 31 अक्टूबर, 1984 को इंदिरा गांधी की हत्या के बाद के दिनों में ही मैंने वहां जाना शुरू किया था। वरिष्ठ साथियों के साथ रिपोर्टिंग के लिए कुछ इलाकों में भी मैं जाता था। उन दिनों इंदिरा गांधी हत्याकांड और उसके बाद हुए दंगों के बारे में मैं बहुत कुछ वरिष्ठ साथियों से सुनता, समझता और सीखता था। तभी त्रिलोकजी की चर्चा भी अक्सर वह वरिष्ठजन किया करते थे। यही कि त्रिलोकजी 31 अक्टूबर के अगले दिन 1 नवंबर को तीन मूर्ति भवन गए थे। वहां इंदिराजी का पार्थिव शरीर रखा था। 31 अक्टूबर की शाम को ही दंगे शुरू हो चुके थे। अगले दिन त्रिलोकजी तीन मूर्ति भवन से जैसे-तैसे बहादुर शाह जफर मार्ग पर टाइम्स बिल्डिंग आए थे। बिल्डिंग के बाहर भीड़ हो गई थी कि अंदर'दो सरदार हैं'। उन्हें देर रात ही जैसे-तैसे निकाला जा सका था।

तीन मूर्ति भवन में अकेले पत्रकार: इस बारे में त्रिलोकजी से बहुत बाद में बात हुई, तो उन्होंने पूरी घटना बताई थी। यही कि वह'दिनमान'के लिए खबर के लिहाज से अपने पुत्र अमरदीप को साथ लेकर सुबह छह बजे तीन मूर्ति भवन पहुंच गए थे। वह वहां राजीव गांधी, अमिताभ बच्चन, रोमी चोपड़ा और गांधी परिवार से बहुत निकट से जुड़े कुछ अन्य लोगों के साथ पार्थिव शरीर के निकट खड़े अकेले पत्रकार थे। इससे उनका बड़ा जोखिम लेकर काम करने का इरादा झलकता है। वह वहां जब खड़े थे, तो वरिष्ठ पुलिस अधिकारी गौतम कौल ने शहर भर के हालात उन्हें बताए और कहा कि'अपना स्कूटर लेकर बस यहां से निकल लो'। उसके बाद त्रिलोकजी बहादुर शाह जफर मार्ग पर टाइम्स भवन में आ तो गए, लेकिन वहां से निकलने में बड़ी कठिनाई हुई। देर रात वह वहां से निकलकर टाइम्स समूह से जुड़े 4, तिलक मार्ग पहुंच पाए थे और वहीं समय बिताया था।

कम ही हैं ऐसे किस्से: पत्रकारों के इस तरह के जोखिम भरे किस्से बहुत ज्यादा नहीं हैं। हालांकि, पंजाब में उग्रवाद और भिडरावाले से जुड़ी खबरें करने के लिए पत्रकार काफी जोखिम लेकर काम करते थे। बाद में जम्मू-कश्मीर के बारे में भी वह बात लागू हुई। लेकिन एक समुदाय विशेष का होने की

वजह से जान जोखिम में डालकर काम करने के किस्से कम ही हैं। मैंने भी पंजाब और जम्मू-कश्मीर में आतंकवाद की खबरों के लिए वहां कई बार जाने पर वहां कार्यरत पत्रकारों से कई बार की थी। वहां के भयभरे वातावरण और हर कदम पर खतरे के बारे में समझा था। लेकिन देश की राजधानी में वीवीआईपी इलाके से होकर नई दिल्ली के ही बहादुर शाह जफर मार्ग तक का वैसा जोखिम भरा किस्सा कोई नहीं है। इससे उन कुछ दिनों की दिल्ली के हालात के भी संकेत मिलते हैं।

रावलपिंडी से कहां और कहां तक: हाल ही में त्रिलोकजी से लंबी बात हुई। उनकी जीवनयात्रा का कुछ पता चला। रावलपिंडी में छठी क्लास तक पढ़े। फिर लाहौर से हायर सेकेंडरी। बाद में इंटर। बाद में विस्थापितों के लिए दिल्ली के मंदिर मार्ग पर बने कैंप में पढ़ाई की। वह कैंप हार्ट बटलर स्कूल में बना था। बीए (ऑनर्स)। वह भी हिंदी में लिखकर। वह बताते हैं कि उन्होंने बाद में आईएएस की लिखित परीक्षा दो बार और पीसीएस की परीक्षा तीन बार पास कर ली थी। लेकिन इंटरव्यू में रह गए थे।

हादसों की आंधियां: त्रिलोकजी और उनके परिवार को कई हादसों का सामना करना पड़ा। उनके छोटे भाई बचपन में ही गुजर गए थे। उसके बाद वह अकेली संतान थे और सिख बने। यह बात उनके बड़ों के जजबे को भी दिखाती है। उनका परिवार भारत-पाकिस्तान विभाजन के बाद दिल्ली होते हुए फिर उत्तर प्रदेश के बस्ती-गोंडा चला गया था। त्रिलोक वहां पर 1947 से 1949 तक रहे। वहां से रायपुर चले गए। बीच में दिल्ली आकर पढ़ाई पूरी की थी। त्रिलोक जब बस्ती में थे, तब एक हलवाई की कढ़ाई का तेल उछलकर उनकी एक आंख में गिर गया था। इस वजह से एक आंख खराब हो गई। पिता अमरनाथजी को एक जंगली बिच्छू ने काट लिया था। 1952 में बैसाखी के दिन पिता का निधन हो गया था। एक मामा रावलपिंडी में ही फंसे रह गए थे। वहां उनका भी निधन हो गया था। इस तरह मुसीबतों के पहाड़ के बीच त्रिलोक को आगे बढ़ना था। वह बढ़े भी। त्रिलोक दीप अर्थात तीन लोक और उसके दीप। यह उनके नाम का अर्थ है। आगे चलकर वह पत्रकारिता के भी दीप बन गए।

पत्रकारिता की शुरूआत कैसे: त्रिलोकजी बताते हैं कि उन्होंने 1952-53 में लिखना शुरू किया। तब त्रिलोक आज के छत्तीसगढ़ के रायपुर में थे। अखबार का नाम 'महाकौशल'। 'महाकौशल'से शुरू हुए लेखन में त्रिलोक का कौशल बढ़ता ही गया। उन्होंने टाइपिंग भी सीख ली थी। उनके एक चाचा उन दिनों दिल्ली में थे। चाचा ने त्रिलोक को दिल्ली बुला लिया। वह लोकसभा सचिवालय में नौकरी करने लगे। त्रिलोक बाद में तब के लोकसभा स्पीकर हुकम सिंह के प्राइवेट सेक्रेट्री भी रहे। 1965 में फिर से पत्रकारिता की तरफ झुकाव हुआ और फिर वह इसी कर्म में रम गए।

1966 में दिनमान में: त्रिलोकजी ने 1 जनवरी, 1966 को टाइम्स ऑफ इंडिया समूह की पत्रिका'दिनमान'में काम शुरू किया। वह बताते हैं कि उस दौरान सच्चिदानंद वात्स्यायन'अज्ञेय'दिनमान के संपादक थे। अज्ञेय जी जैसी हस्ती के साथ काम करने के बाद त्रिलोकजी ने रघुवीर सहाय और कन्हैयालाल नंदन जैसे बड़े संपादकों के साथ भी वहां पर काम किया। यह तीनों ही साहित्यकार थे और देश-दुनिया में उनका नाम रहा। ऐसी हस्तियों के साथ काम करते हुए व्यक्ति सीखता तो है, लेकिन खतरा भी रहता है कि भाषा और व्यवहार में बारीक गलती भी परेशान करा सकती है।

खैर, मैं भी किशोरावस्था से ही दिनमान पढ़कर बड़ा हुआ। दिनमान में त्रिलोकजी और अन्य पत्रकारों के लेख रिपोर्ताज पढ़ता था। बाद में नवभारत टाइम्स में आया और त्रिलोकजी को देखा तो बहुत ही अच्छा महसूस किया। मैं जब कभी किसी काम से दरियागंज में टाइम्स समूह की पुरानी बिल्डिंग में जाता था, तो बिना काम के भी दिनमान कार्यालय के हिस्से में होकर आता था। सिर्फ यह देखने कि त्रिलोकजी और अन्य कौन-कौन वहां बैठे हैं। त्रिलोकजी कभी-कभार बहादुर शाह जफर मार्ग स्थित कार्यालय भी आते थे। तब नवभारत टाइम्स के चीफ रिपोर्टर रमेश गौड़ मुझसे कहते थे कि'त्रिलोक को ध्यान से पढ़ा करो, बहुत सीखने को मिलेगा'।

अनेक विदेश यात्राएं: त्रिलोकजी'दिनमान'के साथ 28 वर्ष तक जुड़े रहे। उसके बाद 'संडे मेल'में भी बेहतरीन काम किया। पत्रकारिता की इस यात्रा के दौरान त्रिलोक ने कई बार विदेश यात्राएं कीं। वह बताते हैं कि 1975 में नेपाल, तब के पश्चिम जर्मनी, इंग्लैंड और फ्रांस गए थे। 1977 में तब के अविभाजित सोवियत संघ (आज रूस और कई अन्य देश) की यात्रा की। 1979 में अमेरिका गए। उसी साल ब्रिटेन में पीएम बनीं मारग्रेट थैचर के चुनाव की कवरेज की। अमेरिका से कनाडा आए। वहां भी चुनाव कवरेज। 1980 में जर्मनी में चुनाव कवरेज। 1983 में फिर जर्मनी और अमेरिका गए। अमेरिका के न्यू यॉर्क में उन्हें संयोगवश अटल बिहारी वाजपेयी मिल गए। अटलजी बोले'अरे त्रिलोकजी आप यहां?'जवाब था कि'आप दिल्ली में नहीं मिल पाते हैं, इसलिए मैं यहां आया हूं'। और दोनों के जोरदार ठहाके। त्रिलोक 1987 में फिर सोवियत संघ के साइबेरिया गए और तब की सबसे बड़ी ट्रेन दुनिया के उस सबसे ठंडे बर्फीले जंगल में देखी। साइबेरिया के बाद भारत का द्रास (करगिल) ही सबसे ज्यादा ठंडा स्थान माना जाता है। त्रिलोक द्रास भी गए थे। उनकी गिनती उन भारतीय पत्रकारों में भी होती है, जिन्होंने पाकिस्तान में एक नहीं, बल्कि तीन चुनावों की कवरेज की थी। वह कहते हैं कि '1990 में पाक अधिकृत कश्मीर के मुजफ्फराबाद जाने वाले वह अकेले पत्रकार हैं।' देश के भी लगभग हर हिस्से में जाकर त्रिलोक जी ने पत्रकार-कर्म किया। उनका यह कर्म और उनकी यह जीवनयात्रा अद्भुत है। संकटों के बीच से निकलकर इतना आगे जाना बहुत बड़ी बात है। ईश्वर उन्हें लंबी, सुखद और दीर्घायु प्रदान करे।

भोलेपन और सादगी की तरलता सरलता

जया रावत

अपने नाम से उजागर होता एक शाब्दिक अर्थ जो समूचे पत्रकारिता जगत के लिए एक नायाब उदाहरण और एक दिशा निर्देश दस्तावेज तो है ही मगर सम्बन्धों की प्रगाढ़ता को लेकर भी आपके व्यक्तित्व कृतित्व में एक समन्दर की गहराई को बखूबी भांपा जा सकता है

लहीम शहीम कद काठी--मगर भोलेपन और सादगी की तरलता सरलता सामने देखने सुनने वाले को किस कदर बाँध लेती है यह उनसे मिलने जानने वाले खूब बेहतर बता सकते हैं

यह सच है कि सम्बन्धों में मेरी भी खूब आस्था रही है --

स्वर्गीय रमेश बतरा से बड़े बहुत लोग मिले मगर कभी किसी के लिये कोई सम्बोधन नहीं टिक पाया या कहूॅ कि बन ही नहीं पाया- मगर त्रिलोक दीप "मेरे जेठ जी" बन ही गये और हम एक अनकहे प्रगाढ़ रिश्तों की मजबूत डोर में सदैव बन्धे रहे जो आज भी बरकरार है--

पहली मुलाकात में रमेश ने ऐलान जैसा कुछ कर दिया था--कि आज मैं जिनसे तुम्हें मिलवा रहा हूं उसे मैं अपना बड़ा भाई मानता हूं बस यही वो शख्स है जिसकी मैं तहे दिल से इज्जत करता हूं और डरता भी हूँ मेरी कोई भी नाफरमानी शिक़ायत और नाइंसाफी मसला तुम इनसे बिना सोचे समझे कह सकती हो और खुद के लिये एक बेहतर Judgement माँग सकती हो-

और बस तबसे मैं जेठ जी के पैर छूने लगी और ढेरों ढ़ेर आशीर्वाद लेने का खूब खूब लालच करने लगी--

जब जेठ जी खूब लिखते थे पढते थे पत्रकारिता जगत में छाये हुये थे या कहूॅ कि उनके झंडे गढे थे तब हम इन सब चीजों से बीत राग थे बस अपनी प्रेमिल और रोमांस की नौटंकी में उलझे रहते थे पढना वढना तो बहुत दूर की बात रहती-- बस एक अजीब तरह का रोमांच रहस्य और तिलिस्मी सा जीवन जी रहे थे अपना लेखकीय साम्राज्य किसी फिल्मी दुनिया के माफिक अजीबोगरीब फैंटेसी जैसा लगता -- साधारण उर्जावान तेजस्विता का सर्वथा अभाव---

धीरे धीरे सब बना बिखरा चमकीली रेत की तरह कब बिखर गया--पता ही न चला---

अन्तिम समय में रमेश जेठ जी से खूब झूठे सच्चे प्रॉमिस करते कसमें खाते कान पकडते मगर फिर वही ढाक के तीन पात-- कनहैयालाल नन्दन की तो सरेआम बेइज्जती करने से बाज न आते पर दीप जी का सदा आदर आदरणीय भाव उनके जेहन में रहा--

जेठ जी तब भी मेरे लिए बहुत-बहुत साधारण थे और आज भी बिल्कुल वैसे ही -

हाॅ हम तो इस कल्पना लोक से बिल्कुल कट गये थे किसी से हमारा सम्पर्क वास्ता या तीमारदारी न रही जैसे तैसे -बच्चे बडे हो गये अपनी अपनी राह लग गये --

नवभारत टाइम्स संडे मेल धीरे धीरे खत्म हो गये'-'बेकसी बेबसी के सैलाब में हम भी डूब गये बेटी!अन्नपूर्णा एक बड़े Brand के तहत

जनरल मेनेजर (डालमिया ग्रुप)त्रिलोक दीप के पास अचानक यकायक और बिना किसी जान पहचान के पहुंची अपना Visiting Card आदान प्रदान किया --जवाब में दीप जी ने पूछ ही लिया--

बेटा!

"तुम्हारे पिताजी क्या करते हैं?"

उसने उत्तर दिया--संडे मेल में थे

क्या नाम?

रमेश बतरा--

ओह ! बस बस तभी प्रश्नों की ढेर सारी लडिया ँ एक दूसरे के सामने बिखर गयीं

जेठ जी की आँखे नम हो आयीं बेटी ने अनायास छलकते आसुओं के पनीले पन को बखूब पढ़ लिया --

फिर तो जाने दोनों के बीच कितनी बातें घाते हुई सारा तमाम पुराना चिट्ठा यादें वादे इरादे बेटी सब बटोर लायी-

और त्रिलोक दीप एक बार फिर हम तीनों के मन में एक सम्मानीय धरोहर के रूप में प्रकट हो गये

मैने बच्चों को सब बताया कि कैसे हम उनको गोद में ले जाते थे उनके घर जब आप मोती नगर रहते थे हमारा खूब आना जाना रहा रमेश को राह पर ले आने की तमाम कोशिशें उनकी नाकामयाब रहीं दफ्तर में (अन्तिम समय)सबने रमेश का विरोध किया मगर जेठ जी हमेशा उनके साथ खड़े रहे उन्होने इन छोटे छोटे मासूम बच्चों और मेरा बहुत वास्ता दिया मगर उस जलती हुई दावानल अग्नि को नहीं रोक पाये --धीरे धीरे सब खत्म हो ही रहा था बचा-खुचा भी बहुत दूर जा छिटका-

लेकिन आज फिर हम जेठ जी की छत्र छाया में हैं बच्चों से यदा कदा उनकी बातचीत हो जाती है

हम तो रोजाना अब उनसे दुआ सलाम करते ही हैं और बस उनका आशीष लेने भर का खूब लालच बना रहता है

हैरानी होती है कि लेखन के प्रति आपकी तन्मयता कर्मठता और ईमानदारी उम्र के इस पड़ाव में हम सबके लिये एक सीख और गढ़ है पर लोग हैं नामी गिरामी प्रकाशक हैं जो अपनी वाकपटुता और तिलस्म से खूब छल रहें हैं आप फिर भी साफ दिल तराशा हुआ एक हीरा हैं जो कोयले की खदान में पडा रहकर भी अपनी चमक अपनी कीमत अलहदा दिखा जाता है

अभी पीछे आप ने बीमारी से खूब जंग जीती पुन: लेखन में सक्षम और सक्रिय हो गये जो भी इकरार और इसरार करता है आप उनके लिए लिखने के लिये पुन:प्रतिबद्ध हो जाते हैं और फिर से कमर कस लेते हैं--

एक वादा अवश्य लिया है मैने उनसे कि कभी मेरी विस्थापित अनौपचारिक पाठशाला में आयें ताकि उन्हे सम्मानित करने और सबके बीच उनका प्यार स्नेह दुलार सानिध्य भरपूर पाने का लालच हमेशा बना रहेगा

अब आप जो भी लिखते हैं जहा भी उनका लिखा पाती हूं जरूर पढती हूं यदपि अपनी मूढ़ता पर कोफ्त भी होती है मगर वो सुनहला अवसर तो हाथ से फिसल गया (इससे पहले भी जगदीश कश्यप के लिये भी एक छोटा सा लेख लिख चुकी हू")

बस आप पारिवारिक रूप से स्वस्थ्य सानन्द और सुन्दरतम बने रहें ईश्वर से कर बद्ध अनुनय विनय है

समाज के वंचित पीड़ित वर्ग के प्रति सहानुभूति

श्री बैजनाथ जी महाराज,

पत्रकारिता को लोकतंत्र का चौथा स्तंभ यूं ही नहीं कहा जाता। पत्रकारिता बड़ा गंभीर और जिम्मेदारियों से भरा पेशा है। पत्रकारिता के दायरे में मिट्टी के कण से लेकर अंतरिक्ष तक, सड़क पर बैठे एक मेहनतकश मोची से लेकर राष्ट्रपति तक का क्षेत्र आता है। स्थूल जगत की ऐसी कोई वस्तु, ऐसा कोई प्राणी, ऐसी कोई गतिविधि नहीं जो पत्रकारिता के दायरे में न आती हो। एक पत्रकार जहां अन्याय और अत्याचार के विरूद्ध आवाज उठा सकता है, वहीं अपनी लेखनी से समाज को सही दिशा भी दिखा सकता है। अंग्रेजों के शासन में अनेक क्रांतिकारियों ने अखबार निकालकर गुलामी के खिलाफ और आजादी के पक्ष में अलख जगाई थी। आजादी के बाद से लेकर वर्तमान तक अनेक यशस्वी, संघर्षशील पत्रकार हमारे देश में हुए हैं। राष्ट्रीय स्तर से लेकर स्थानीय स्तर तक अनेक पत्रकारों ने लेखनी की तपस्या की है। राष्ट्रीय स्तर पर जहां रामनाथ गोयनका और राजेंद्र माथुर जैसे अनेक सुनहरे नाम हैं वहीं स्थानीय स्तर पर स्व. कमल जी माथुर जैसे पत्रकारों की लेखनी अंधकार में मशाल जैसी साबित हुई है।

अच्छे पत्रकारों की श्रृंखला में श्री त्रिलोक दीप भी एक उल्लेखनीय नाम है। वे श्री कमल माथुर के साथ अनेक बार आश्रम में आये हैं और देश के विभिन्न समसामयिक विषयों पर उनसे गंभीर और यादगार चर्चाएं हुई हैं। मुझे यह देखकर बड़ी प्रसन्नता हुई कि श्री त्रिलोक दीप जी एक गंभीर और जिम्मेदार पत्रकार तो हैं ही साथ ही समाज सेवा, धर्म अध्यात्म, साधु संतों के प्रति भी उनमें रूचि और रूझान है। एक पत्रकार यदि केवल पत्रकारिता तक सीमित रहता है तो भी वह देश, समाज और मानवता के लिए बहुत कुछ कर सकता है। किंतु साथ ही किसी अच्छे पत्रकार में यदि समाजसेवा, धर्म, अध्यात्म और साधु संतों के प्रति लगाव है तो उस पत्रकार का दायरा बहुत अधिक बढ़ जाता है। वह पत्रकार अपनी लेखनी, अपने अखबार या अपनी मैगजीन के द्वारा सरकार का ध्यान समाजसेवा की तरफ दिला सकता है जिससे सरकार के संसाधनों का लाभ समाज सेवा में मिल सकता है। यदि कोई पत्रकार सही मायने में धार्मिक रूझान का है तो जाहिर है कि उसका खानपान, उसकी दिनचर्या और उसकी प्रत्येक गतिविधि सात्विक ही होगी। ऐसे सात्विक कलमकारों की मेधा शक्ति भी असाधारण रूप से बढ़ी हुई होती है और उसके द्वारा वे ऐसे बिंदुओं पर भी विचार कर सकते हैं जो किसी साधारण व्यक्ति के चिंतन से परे हों।

श्री त्रिलोकदीप का समाज सेवा के प्रति रूझान, साधु संतों के प्रति उनकी श्रद्धा के कारण वे एक अलग तरह के व्यक्तित्व के रूप में उभरते हैं। मैंने पाया कि उनमें मानवीय करूणा, समाज के वंचित, पीड़ित वर्ग के प्रति सहानुभूति और मानवता के लिए कुछ कर गुजरने की कोमल भावनाएं निहित हैं। वे एक पत्रकार के साथ ही समाज सेवा के प्रति भी रूझान रखते हैं और समाज सेवा के लिए वित्तीय संसाधनों का होना भी आवश्यक है। इसके लिए वे एक तरफ सरकार से यथासंभव सहायता पीड़ितों को दिलवाते हैं वहीं दूसरी तरफ सेवा भावी उद्योगपतियों, व्यवसायियों के साथ भी उनके घनिष्ठ संबंध हैं जिनके वित्तीय संसाधनों का लाभ वे समाज के वंचित वर्ग को दिलवाते हैं। जाहिर है कि श्री त्रिलोकदीप की पत्रकारिता केवल उनका रोजगार ही नहीं है बल्कि उन्होंने पत्रकारिता के कारण हुए अपने संपर्कों का लाभ समाज सेवा के क्षेत्र में दिलवाया है। वे इन सभी वर्गों के बीच एक कड़ी बनकर उभरे हैं। अन्य पत्रकारों को भी उनसे प्रेरणा लेनी चाहिए। न केवल गंभीर और जिम्मेदारी भरी पत्रकारिता की बल्कि समाज के पीड़ित वर्गों की सहायता की भी पेरणा उनके व्यक्तित्व और कृतित्व से यदि आज के पत्रकार लेते हैं तो वे सही मायने में एक महान मानव होने का कार्य करते हैं।

मेरा मानना है कि शिक्षा, चिकित्सा, राजनीति और पत्रकारिता आदि केवल पेशा या रोजगार का माध्यम नहीं है बल्कि ये सभी क्षेत्र समाजसेवा की अपार संभावनाएं अपने आप में रखते हैं। श्री त्रिलोकदीप ने अपने जीवन को जिस तरह से जिया है उससे यह साबित कर दिया है कि अपने सपने और इच्छाएं केवल अपने परिवार तक सीमित नहीं होने चाहिए बल्कि समाज और देश के लिए होने चाहिए। श्री त्रिलोकदीप के व्यक्तित्व और कृतित्व पर यह जो विशेषांक प्रकाशित हो रहा है यह अधिक से अधिक लोगों तक पहुंचना चाहिए ताकि ज्यादा से ज्यादा लोगों को उनके बारे में जानने का मौका मिले। मैं नई पीढ़ी के पत्रकारों से यह बात विशेष रूप से कहना चाहूँगा कि पत्रकारिता को मात्र सनसनीखेज खबरों का माध्यम न बनाएं बल्कि श्री त्रिलोकदीप जैसे पत्रकारों से प्रेरणा लेकर अपनी पत्रकारिता का दायरा बढ़ाकर उसे देश एवं समाज की सेवा के क्षेत्र में भी ले जाएं। मैं श्री त्रिलोकदीप को हृदय से आशीर्वाद और इस प्रकाशन से जुड़े प्रत्येक व्यक्ति को अपनी शुभकामनाएं देता हूं।

पीठाधीश्वर श्री श्रद्धानाथ जी का
आश्रम, लक्ष्मणगढ़ (सीकर - राज.)

त्रिलोक के पीछे का दीप

अनिल शुक्ल

यह उन्नीस सौ सत्तर के दशक का शुरूआती दौर था। छात्र जीवन में हिंदी न्यूज़ पत्रिका के बतौर'दिनमान'ही हम लोगों को भाती थी। छात्र जीवन की राजनीतिक सक्रियता शुरू हो चुकी थी, लिहाज़ा दिनमान के पन्नों पर छपे गहरे राजनीतिक विमर्श वाले आलेख ज़्यादा आकर्षित करते थे। धीरे-धीरे बिहार में जेपी आंदोलन अपनी चढान पर पहुंचा और रघुवीर सहाय के सम्पादन वाला 'दिनमान' इस आंदोलन का जैसे रोज़नामचा ही बन गया। तब यह'गूढ़ उक्ति'समझ में नहीं आती थी कि साहुओं की सेठ कंपनी कैसे व्यवस्था विरोध के सुर अलाप सकने में सक्षम है। यह बात काफी बाद में समझ आ सकी।

उन दिनों'दिनमान'के कंट्रीब्यूटरों में त्रिलोक दीप भी थे यद्यपि वह'दिनमान'के पृष्ठों पर उस तरह से सघन मुद्रा में नहीं दिखते थे जैसा कि बाद (सत्तर के दशक के अंत और अस्सी की शुरुआत) में दिखने लगे। उनके आलेख उस तरह से गहन राजनीति की चाशनी भी नहीं परोसते थे, हाँ उनमें कला संस्कृति, सोश्यो-पॉलिटिक्स और देश-विदेश के भ्रमण की रपटें ज़्यादा होती। मेरी रुचियाँ इन चीज़ों में कम थीं लेकिन जिस तरह की वह लिक्खाड़ी करते थे, पढ़ने में अच्छा लगता था।

सन 82 में सहाय जी का हटना हज़ारों'दिनमान'प्रेमियों की भाँति मेरे लिए भी वज्रपात की तरह था। इसे पढ़ने में मेरी रूचि कम हो गयी हालाँकि पत्रकारिता का जीवन शुरू हो चुका था लिहाज़ा पत्रिका के पन्ने उलट-पुलट लेना मेरी पेशेवर मजबूरी थी। पहली बार 84 के दंगों के समय की गयी त्रिलोक दीप की रिपोर्टिंग ने मुझे आकर्षित किया। वह एक सचेत भारतीय पत्रकार का विश्लेषण था इसलिये तब भी यह नहीं जान पाया कि वह एक 'केशधारी सिख' हैं। बाद में जब मैं 'रविवार' (आनंदबाजार पत्रिका समूह) में काम करता था उन दिनों किसी पत्रकार मित्र ने एक सन्दर्भ में ज़िक्र किया कि त्रिलोक दीप पगड़ीधारी सिख हैं।

उनसे विधिवत मुलाक़ात 89 में 'सन्डे मेल'शुरू होने के वक़्त हुई। 'रविवार'(आनंदबाजार पत्रिका समूह) के बंद हो जाने के बाद मैं जयपुर से दिल्ली आकर नौकरी की तलाश में था। स्व० कन्हैयालाल नंदन ने अपने नेतृत्व वाले साप्ताहिक अखबार में टीम चयन का दायित्व दीप जी को सौंप रखा था। प्रारंभिक बातचीत के बाद उन्होंने मुझे एक अमुख तिथि से जॉइन करने को कहा। ग्रेटर कैलाश पार्ट 2 के एक बेसमेंट में अखबार का कार्यालय था जो पहली नज़र में ही उदास 'लुक' देता था।

बहरहाल आना-जाना शुरू किया तो काम-धाम की उठाया-धरी और टीम के साथ गप-शप में बेसमेंट की उदासी गुम हो गयी। यहाँ आने से पहले मातहतों को बरतने में नंदन जी की नौकरशाहियत के भांति-भांति के क़िस्से मैंने सुन रखे थे। शुरू में मैं उनसे कुछ दूरी बनाकर रखता। कार्यकारी सम्पादक के रूप में त्रिलोक दीप सम्पादकीय प्रबंधन में नम्बर 2 पर थे। उनके केबिन में घुसते ही वह अपने पियोन को कॉफी का आर्डर करते। वहां पहुँचने का अर्थ अपनी स्टोरी पर चर्चा करना तो होता ही था, इधर-उधर की पार्टीगत राजनीति और देस-दुनिया पर गपशप करना भी होता। वह हम सब के बॉस ही नहीं थे, हमारे सुख-दुःख में भी जुड़े रहते थे। उनसे वार्ता करना बड़ा दिलचस्प होता। वह प्रायः ग्राह्य मुद्रा में मिलते। तब थोड़ा झुंझलाहट होती कि यह कुछ बोलते क्यों नहीं? पेशे में इतना वरिष्ठ होने के नाते कोई सुझाव क्यों नहीं देते?

जैसे-जैसे समय आगे बढ़ा, अखबार में प्रबंधन और कर्मचारियों के बीच दैनंदिन कार्य -व्यापार की समस्याएं शुरू हुईं। जिस दौरान अख़बार का दफ्तर कनॉट प्लेस पहुंचा, उसी दरमियान वहां 'सन्डे मेल इम्प्लॉईज़ यूनियन' का गठन हुआ। 'यूनियन' का संस्थापक महासचिव होने के नाते सारी सिरदर्दियों के 'फ़ोर फ्रन्ट' पर मुझे ही जूझना पड़ता। 'एक्ज़ीक्यूटिव एडिटर' होने के नाते दीप जी प्रबंधन का हिस्सा थे लेकिन उनकी मुश्किल यह भी थी कि उन्होंने अपने जीवन का बड़ा हिस्सा सम्पादक के 'स्टेनो' से शुरू करके संवाददाता और उप सम्पादक के रूप में बिताया था इसलिए हम लोगों की तमाम वाजिब मांगों के प्रति वह 'पॉज़िटिव' भी रहते थे। काफी बाद में मुझे मालूम हुआ कि हमारे आंदोलनों के दरमियान शीर्ष प्रबंधन की कई बैठकों में उन्होंने हमारे मसलों को उठाने की कोशिश भी की थी, यह दूसरी बात है कि मैनेजरों ने उनकी चलने नहीं दी।

मैं 'सन्डे मेल' के उन सौभाग्यशाली संवाददाताओं में था जिसकी कोई स्टोरी कभी रोकी नहीं गयी। मुझे पेशेवर तौर पर गंभीर मानते हुए ही सम्पादकीय बैठकों में संपादक और कार्यकारी संपादक दोनों मेरी कठोर आलोचनाओं और सुझावों को गंभीरता से ले लेते थे। अख़बार के'प्रमोटर'उद्योगपति संजय डालमिया थे। पुरानी समाजवादी वैचारिक पृष्ठभूमि के संजय डालमिया लोहिया जी के भारत-पाक-बांग्लादेश के पुनरीकरण की थीसिस से बाबस्ता थे और चाहते थे कि नए सिरे से एक बार फिर'सन्डे मेल 'अखबार' इसके पक्ष में अभियान चलाये। 'अभियान' शुरू हो गया। 18 पेज के अखबार में एक पन्ना इस अभियान को समर्पित हो गया। हमारे संवाददातागण इसके पक्ष में दनादन लेख और इंटरव्यूह छापने लगे। अखबार देखकर तो ऐसा इल्हाम होने लगा कि भारतीय उपमहाद्वीप फिर से अब एक हुआ कि तब।

मैं अखबार में काम करने वाले कुछेक उन पत्रकारों में शामिल था जो इसे लोहिया जी की 'सिरफ़िरी' और कभी न पूरी हो सकने वाली सोच के बतौर देखते थे। शुरूआती कई मीटिंगों में मैंने और राजकुमार शर्मा ने इसके प्रति अनासक्तिपूर्ण'श्रद्धा'दिखाई जिसका नतीजा यह हुआ कि नंदन जी ने दुखी होकर हमसे इस मामले में कुछ भी लिखवा पाने की उम्मीद छोड़ दी। दीप जी ने कभी ऐसी ख्वाहिश ज़ाहिर ही नहीं की। वह हमें शुरू में ही'इन तिलों से तेल नहीं निकलने वाला'मानकर चल रहे थे।

वह हालाँकि इस अभियान के सक्रिय प्रचारक थे और इस उद्देश्य से पकिस्तान के दौरे और वहां कई सेमिनार भी कर आये थे। लौट कर वह हर सप्ताह'सन्डे मेल'का एक पन्ना 'पकिस्ताननामा' लिखने में जुट गए। हमारी नज़रों में यह अख़बारी पन्नों की 'सरे-आम' बर्बादी थी। बेशक वह अख़बार के सम्पादक थे, संवाददाता होने के नाते अख़बार पर थोड़ी-बहुत अपनी मिलकियत मान लेने का मुग़ालता हमें भी था। अख़बार के एक और पन्ने का इस तरह 'चला जाना' हम जैसे संवाददातों को 'इर्रिटेट' करने के लिए काफी था। दोस्तों और सहकर्मियों के बीच हम इन दोनों पन्नों को'लोहिया जी की चिता'बोलने लग गए। मैं इस समूचे मुद्दे पर इतना 'बाइस्ड' था कि एक भी पीस पढ़ना मुझे मंज़ूर नहीं था। दीप जी के उन लेखों को मैंने कभी पढ़ा नहीं। काफ़ी बाद में, जब इस अभियान से अलग होकर आयी किताब के रूप में उन लेखों को पढ़ा तो दोनों देशों की आम जनता के बीच दोस्ती विकसित करने की दिशा में मुझे वह दीप जी का एक महत्त्वपूर्ण काम लगा। मुझे अपने पुराने 'बायस' पर खीज हुई, शर्मिंदगी तो हुई ही।

उन दिनों हम नौजवान थे और आप अगर हिम्मती नौजवान हैं तो यह नौजवानी किसी की भी टांग घसीटने की इजाज़त दे देती है। वह चाहे आपका सहयोगी हो, मित्र हो या बॉस। उनके 'पाकिस्तानी फ्रंट' की हमारी तमाम आलोचनाओं को वह मुस्कराते हुए सुनते और सुनते समय अपनी मेंहदी रची मूंछों पर उसी मुस्कराहटों के बीच ताव देते रहते। हम लोगों के मुंह से अपनी भर्त्सना सुनकर उनके चेहरे पर कभी रत्ती भर भी तनाव नहीं आता था। हमारे इतनी सारी'गाली गुफ़्ता'सुनकर भी वह गाहे-बगाहे मुझे और राजकुमार शर्मा को प्रेस क्लब में शराब की दावत देते रहते। वह अपने दूसरे सहायकों को भी ऐसी ही दावत देते। हम इतने नाशुक्रे कि उनकी शराब पीकर उन्हीं को गालियां सुनाते। वह फिर भी मुस्कराते रहते। हम अखबार की, उसमें अनेक ख़बरों के चयन की, अपने कुछ सहयोगियों की 'बेहूदा' ख़बरों की, नंदन जी की 'पीआर' स्टोरीज़ की तबियत से हवा निकालते। दीप जी हमारी कई शिकायतों से सहमत भी होते। तब हमारे हमले उन पर और भी तेज़ हो जाते कि वह कार्यकारी सम्पादक होने के नाते दख़ल क्यों नहीं देते? वह मुस्करा कर कहते कि वह 'एक्ज़ीक्यूटिव एडिटर' हैं, 'चीफ़ एडिटर' नहीं। हम थे कि हर बार उनके दावतनामे को आख़िरी मान और दोबारा न बैठ पाने का मौक़ा मिलने के चलते अपनी सारी भड़ास उसी दिन उड़ेल लेते। बाद में लेकिन हमें पता चलता कि हम निरे मूर्ख थे। कुछ दिनों बाद वह फिर मुस्कराते हुए हमें दावत दे बैठते और तब हम सचमुच शर्मिंदगी

महसूस करते।

उनसे वार्तालाप करना अमूमन इकतरफा होता। मोटे लैंस वाले अपने चश्में के भीतर से वह सिर्फ़ सामने वाले को ताकते और ख़ामोशी से उसकी सुनते रहते। वह टिप्पणियां कम ही करते थे। कई बार मेरी उनसे इस बात पर भी जिरह हुई कि वह सिर्फ़'मैनेजरी'में क्यों उलझे हुए हैं?'दिनमान'जैसे अद्भुत संस्मरण और शानदार यात्रा वृतांत क्यों नहीं लिखते? वह सफाई देते –"समय आने दो। वह भी करूँगा। " हम उनसे लड़ते-जूझते कि वह अपने संवाददाताओं को भ्रमण या यात्रा वृतांत के लिए क्यों नहीं भेजते? वह खामोश बने गर्दन हिलाते रहते।

बहुत बाद में, प्रेस क्लब की एक रात्रिकालीन बैठक में 4 पैग ख़त्म करने के बाद जब मैंने उनसे यह सवाल पूछा कि आप कैसे सारथी हैं जो अपने घोड़ों की सिर्फ सुनते हैं, जवाब में कुछ बोलते नहीं? वह मुस्कराये। अपनी मेंहदी लगी मूंछों पर हाथ फेरा और बोले "मेरी टीम के ज़्यादातर घोड़े बड़े अनुभवी हैं। उनका चयन मैंने इसी विश्वास से किया था। अब ऐसे अश्वों की रास मैं क्यों खींचूं जब मुझे उन पर यक़ीन है। मेरे घोड़ो, तुम्हें छुट्टा छोड़ने में मैं गौरव महसूस करता हूँ। मुझे पूरा विश्वास है कि तुम अपने रथ को किसी खड्ड में नहीं गिराओगे।" हम झेंप गए और हमारा सारा नशा क़ाफ़ूर हो गया।

आज के दौर में, जबकि सम्पादकों का अपने सहयोगियों के साथ सिर्फ़ जनसम्पर्क कार्यकारी- संवेदनहीनता से लबरेज़ नौकरशाह का रिश्ता बचा है, वैसे में दीप जी जैसे सम्पादकों को खोजना बड़ा मुश्किल है जो संवेदनाओं से भरे होते हैं और अपने मातहतों पर पूरा यक़ीन रखते हैं। त्रिलोक दीप के पीछे का दीप पेशे की पुरानी रवायतों की त्रिवेणी में डूबता-उतराता टिमटिमाता रहता है। प्रकाश से परे उसका अपना न कोई अतिरिक्त स्वार्थ है न अतिरिक्त वजूद। ऐसे दीप को सलाम।

शानदार व्यक्तित्व, सहज, सौम्य, मिलनसार

संगीता शर्मा

पत्रकारिता में आने के बाद राजस्थान केसरी और बाद में दैनिक भास्कर में कार्यरत रहते तत्कालीन संपादक श्री ओम गौड़ से. संडे मेल साप्ताहिक अखबार और उसके वरिष्ठ पत्रकार त्रिलोकदीप जी के बारे में बहुत बार जिक्र सुना था।

1997 में त्रिलोकदीप जी से पहली बार गौड़ साहब कें चैंबर में मिलने का मौका मिला। त्रिलोकदीप और उनके आलेखों के बारे में सुना था उससे कही अधिक शानदार व्यक्तित्व, सहज, सौम्य, मिलनसार और एक अच्छे वक्ता होने के वजह से मैं उनसे काफी प्रभावित हुई। देश विदेश में पत्रकारिकता क्षेत्र में अपनी एक अलग पहचाने बनाने वाले त्रिलोकदीप वाकई जिंदादिल इंसान ही नहीं बल्कि उनमे अपनापन भरा हुआ है। बुर्जुग होने के बावजूद उनकी सोच सकारात्मक और आधुनिक है। उनसे पहली सहज मुलाकात आज भी याद है और तब से उनसे एक ऐसा रिश्ता बन गया कि जो आज भी कायम है। डालमिया ट्रस्ट के सेहत फाउंडेशन से वे लंबे समय जुड़े रहे और उस सिलसिले में उनका हर महीने जोधपुर आना होता था। उनके जोधपुर प्रवास में होटल ताज हरीमहल में उनका एक रूम बुक रहता था। डीनर पर उनसे अपने पति मुकेश दत्त शर्मा के साथ मुलाकात होती थी। उनसे हर मुलाकात में पत्रकारिता की बारिकियों से लेकर उनके अनुभवों के बारे में सुनने और सीखने का मौका मिलता था। पत्रकारिता से लेकर देश की राजनीति तक के बारे में खुलकर लंबी चर्चा होती थी। बरसों बरस हर महीने होने वाली मुलाकातों सें उनसे एक पत्रकार के साथ बेटी सा रिश्ता बन गया। त्रिलोकदीप हमारे परिवार के एक सदस्य बन गए और हम हर सुख दुख की बाते सांझा करने लगे। उनसे मिलने के बाद वे मेरा, पति मुकेश शर्मा और बिटिया प्रेरणा का बर्थडे हो या हमारी मैरिज एनवेसिरी कभी नहीं भूले। हर तकलीफ में उन्हें हमेशा नजदीक पाया और हर कदम वे हौसलाअफजाई करते है। मुझे खुशी इस बात की है कि एक दशक पहले जब हमारा साध्य दैनिक मरू त्रिकोण परिक्रमा शुरू हुआ तो त्रिलोकदीप जी के आलेख नियमित रूप से प्रकाशित होने लगे। वाकई वे पत्रकारिता के भीष्म पितामह है और उनकी सटीक लेखनी की तो मैं कायल हू। उनके अमेरिका, बिट्रेन, पाकिस्तान, फ्रांस सहित कई देशों की यात्राओं के अनुभव कई प्रधानमंत्री राष्ट्रपति सहित बड़े नेताओं से उनकी मुलाकात के यादगार आलेख मैने पढ़े। अब पिछले कुछ सालों से त्रिलोकदीप जी का जोधपुर आना नहीं हुआ लेकिन दिल्ली में कई बार मुलाकात हुई और फोन पर अक्सर बात हो जाती है।

मेरे लिए वे सम्मानीय और सबसे अच्छे शुभचिंतक है। उनके उत्तम स्वास्थ्य और दीर्घायु की कामना करती हूं...और हमेशा उनका आर्शिवाद ऐसा ही बने रहे।

दैनिक राजस्थान केसरी से अपना कैरियर शुरू करने के बाद 1997 में दैनिक भास्कर ज्वाइन किया। वहां क्राइम, पॉलटिकल व डिफेंस रिपोर्टिंग में खास पहचान बनाने के बाद भास्कर गुरप में पहली महिला संपादकीय इंचार्ज के रूप मे चयनित हुई। तब बतौर पाली एडीशन में सम्पादकीय प्रभारी काम किया। पन्द्रह साल की लंबी पारी खेलने के बाद भास्कर छोड़कर दस साल पहले अपना सांध्यकालीन अखबार शुरू किया।

अज्ञेय जी की कसौटी पर त्रिलोक दीप हमेशा खरे उतरे

इंद्रजीत सिंह

त्रिलोक दीप जी पत्रकारिता की दुनिया का एक ऐसा जगमगाता नाम है जिनके नाम और काम की कीर्ति आज भी बरकरार है। उनका नाम आज भी पत्रकारिता की दुनिया में बड़े आदर और सम्मान के साथ लिया जाता है। काम के प्रति समर्पण, जुनून, ज़ज़्बा और समझ ने उन्हें लोकप्रिय और हरदिल अजीज पत्रकार बनाया। इंदिरा गांधी, राजीव गांधी, जेल सिंह, अटल बिहारी वाजपेई, बलराम जाखड़ और सरदार हुकुम सिंह जैसे बड़े नेताओं से उनके आत्मीय संबंध थे। इस आत्मीयता और मधुर संबंधों का मूल कारण त्रिलोक दीप जी की पत्रकारिता की गहरी समझ और उनकी विनम्रता है। हर व्यक्ति के जीवन पर कुछ महान लोगों की शख्सियत का प्रभाव पड़ता है। त्रिलोक दीप जी बचपन में सिख धर्म के दसवें गुरु गुरु गोविंद सिंह जी के व्यक्तित्व और कृतित्व से प्रभावित होकर सिख धर्म को अपनाने का प्रण लिया। हिन्दू परिवार में जन्में त्रिलोक नाथ, त्रिलोक सिंह बन गए। अविभाजित भारत के फालियां शहर में त्रिलोक जी का जन्म हुआ और बचपन बीता रावलपिंडी में। बलराज साहनी, भीष्म साहनी, गीतकार शैलेन्द्र और आनंद बक्शी का संबंध भी रावल पिंडी से रहा है। देश 15 अगस्त 1947 को आज़ाद हुआ। लेकिन बटवारे की आवाज़ धीरे धीरे बुलंद हो रही थी और हिन्दू - सिख और मुस्लिम के दिलों में दरारें पैदा होनी शुरू हो गई थीं। त्रिलोक दीप जी का परिवार 15 अगस्त 1947 से एक सप्ताह पहले ही रावल पिंडी छोड़कर पूर्वी उत्तर प्रदेश चला आया। वह स्थान रास नहीं आया तो त्रिलोक दीप जी के पिता अपने परिवार के साथ रायपुर (वर्तमान छत्तीसगढ़ की राजधानी) चले गए। त्रिलोक दीप जी के पिता का निधन 1952 में हो गया। उस समय

त्रिलोक दीप जी केवल 17 साल के थे। पिता का साया सर से उठ जाने के कारण इंटर की पढ़ाई के बाद ही नौकरी ढूंढने पर विवश होना पड़ा। त्रिलोक दीप जी की नैसर्गिक प्रतिभा को निखारने और संवारने में उनके हिंदी शिक्षक स्वराज प्रसाद जी का बड़ा हाथ है। उनकी प्रेरणा और रहनुमाई में जीवन का पहला लेख लिखा जो एक स्थानीय अखबार में छपा। प्रेमचंद जी, जैसे बड़े लेखकों की रचनाओं को पढ़ने के लिए प्रेरित किया। अपने हिंदी शिक्षक की प्रेरणा से साहित्य अध्ययन और सृजन के प्रति उनकी दिलचस्पी बढ़ती गई। भीष्म साहनी, अज्ञेय, कृष्ण चन्दर आदि प्रसिद्ध साहित्यकारों की रचनाओं ने उनके जीवन को नया मोड़ दिया। नौकरी के लिए हिंदी और अंग्रेजी की टाइपिंग सीखी। अपने चाचा जी के निमंत्रण पर नौकरी की तलाश में दिल्ली पहुंचे। त्रिलोक दीप जी की मेहनत रंग लाई और 1956 में उन्हें लोकसभा में क्लर्क की नौकरी मिल गई। नौ साल उन्होंने लोकसभा में नौकरी की। नेहरू जी, डॉक्टर राजेन्द्र प्रसाद, सरदार हुकुम सिंह, फिरोज गांधी, अटल जी जैसे बड़े नेताओं से मिलने और संवाद करने का सौभाग्य उन्हें मिला। सरदार हुकुम सिंह, लोक सभा उपाध्यक्ष के पंजाबी लेखों का

हिंदी में अनुवाद करके उन्होंने पंजाबी और हिंदी भाषा के बीच पुल बनाने का महत्वपूर्ण काम किया। यह सभी अनुवाद "धर्मयुग" और"सप्ताहिक हिन्दुस्तान" जैसी पत्रिकाओं में छपने लगे । एक लेखक और अनुवादक के रूप में त्रिलोक दीप जी की पहचान बनने लगी। तत्कालीन राष्ट्रपति राधाकृष्णन जी के सचिव कर्नल नरेंद्र पाल जी की पंजाबी रचनाओं का हिन्दी में अनुवाद किया। उनकी पत्नी प्रभजोत कौर पंजाबी की प्रसिद्ध कवयित्री थी। प्रभजोत कौर को 1964 में पंजाबी भाषा के लिए साहित्य अकादेमी का पुरस्कार मिला । प्रभुजोत जी ने दीप जी को अपना छोटा भाई बना लिया । प्रभजोत जी ने है त्रिलोक दीप जी को देश के जाने माने साहित्यकार और संपादक अज्ञेय जी से मिलवाया। दीप जी ने अज्ञेय जी की अधिकांश पुस्तकें जैसे नदी के द्वीप और शेखर एक जीवनी आदि पढ़ी हुई थी। अज्ञेय जी ने दीप जी की प्रतिभा को पहचाना और उन्हें उस दौर की हिंदी की प्रसिद्ध पत्रिका " दिनमान" में आने का निमंत्रण दिया। त्रिलोक दीप जी भी बाबूगिरी छोड़कर पत्रकार बनना चाहते थे । उन्हें यह सुनहरा अवसर अज्ञेय जैसे महान साहित्यकार और संपादक दे रहे थे । 1 जनवरी 1966 को त्रिलोक दीप जी ने लोकसभा की नौकरी छोड़कर " दिनमान" में संवाददाता के रूप में नई पारी प्रारंभ की । अमेरिका की टाइम मैगजीन की प्रतिष्ठा पूरी दुनिया में थी । उस जैसी पत्रिका हिंदी में निकालने का सपना टाइम्स ग्रुप के मालिकों का था । इस सपने को साकार करने की जिम्मेदारी अज्ञेय जी ने संभाली । " दिनमान" सचमुच अपने नाम के अनुरूप ही चमक-दमक रहा था । प्रबुद्ध हिंदी पाठकों के बीच "दिनमान " की प्रतिष्ठा लगातार बढ़ रही थी । अज्ञेय जी ने अपनी टीम में मनोहर श्याम जोशी, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना जैसे प्रसिद्ध कवियों और लेखकों को शामिल किया था। "दिनमान" के लिए अज्ञेय जी के आग्रह पर रेणु जी भी बिहार की रिपोर्ट भेजते थे । अज्ञेय जी की रहनुमाई में त्रिलोक दीप जी ने पत्रकारिता के सभी गुर सीखे। दीप जी हमेशा अज्ञेय जी को अपना गुरु मानते रहे है। जिस तरह भगवान कृष्ण ने कुरूक्षेत्र में अर्जुन को उपदेश दिया । उसी तरह अज्ञेय जी ने त्रिलोक दीप जी को अर्जुन मानकर अच्छी-सच्ची पत्रकारिता का गुरु मंत्र दिया। अज्ञेय जी की कसौटी पर त्रिलोक दीप हमेशा खरे उतरे। " दिनमान" के कारण ही उन्होंने 20 से अधिक देशों की यात्रा करके वहां की प्रामाणिक जानकारी अपने लेखों के जरिए देश की जनता तक पहुंचाई । अविभाजित भारत के लाहौर शहर में जन्में प्रसिद्ध उद्योगपति संजय डालमिया की हार्दिक इच्छा थी कि भारत और पाकिस्तान के लेखकों, पत्रकारों और बुद्धिजीवियों के बीच संवाद हो और दोनों देशों के बीच मधुर संबंध बने । संजय डालमिया के आग्रह पर दीप जी 1990 में पाकिस्तान गए । वहां के पत्रकारों, लेखकों और बुद्धिजीवियों के सामने भारत में आयोजित होने वाले सेमिनार में शामिल होने का प्रस्ताव दिया । यह प्रसन्नता की बात थी कि दीप जी ने जिन विद्वानों को निमंत्रण दिया वे सभी भारत आने को तैयार थे । आखिरकार 1991 में अशोक होटल नई दिल्ली में सेमिनार आयोजित किया गया जिसमें भारत और पाकिस्तान के अनेक बुद्धिजीवियों ने हिस्सा लिया और दोनों देशों के बीच मैत्री और मधुर संबंध स्थापित करने की पहल हुई । त्रिलोक दीप जी का सारा जीवन पत्रकारिता को समर्पित रहा है । पत्रकारिता को उन्होंने नई दिशा दी । अच्छी- सच्ची पत्रकारिता के मानक स्थापित किए । अज्ञेय जी के बारे में दूसरी और तीसरी लोकसभा की कार्यवाही के बारे में उनके पास अनमोल खजाना है । दिल्ली विश्वविद्यालय से संबंधित कॉलेज के हिंदी और पत्रकारिता विभाग उन्हें अपने यहां बुलाकर विद्यार्थियों से सीधे संवाद कराकर विद्यार्थियों को लाभान्वित करा सकते हैं । ईश्वर से यही प्रार्थना है कि त्रिलोक दीप जी स्वस्थ और सक्रिय बने रहे और अपने संस्मरणों द्वारा हम सभी को समृद्ध करते रहे ।

पूर्व प्राचार्य, केन्द्रीय विद्यालय संगठन। सम्प्रति भारतीय दूतावास मॉस्को (रूस)

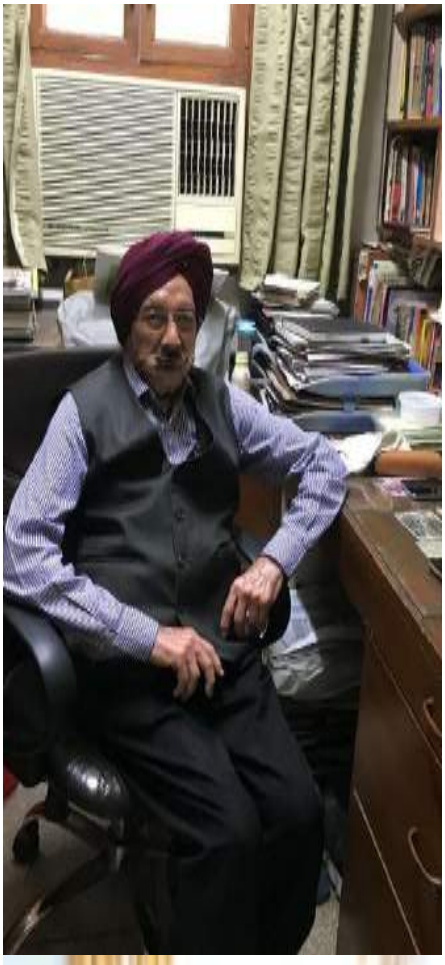

दीप : प्रकाश ही प्रकाश

डा. विनीता गुप्ता

हर रोज़ सुबह जब भी मोबाइल देखती हूँ तो दीप जी का'गुड मोर्निंग'या'सुप्रभात'का सन्देश मन को एक ताजगी और ऊर्जा से भर जाता है | और सोचती हूँ, एक शख्स इस उम्र में भी इतना सक्रिय !!! खैर उम्र तो लगता है दीप जी हावी कभी नहीं हुई | दो साल पहले ही उनके जन्मदिन पर एक पार्टी से मन नहीं भरा तो हमने दूसरी पार्टी आयोजित की | चंद और यादगार पल समेट लिए उनके साथ | साथ की तो बात क्या करें 34 साल पहले जाना होगा 1989 में |

लोग कहते हैं बॉस के अगाड़ी और घोड़े के पिछाड़ी नहीं चलना चाहिए | अब अगाड़ी या पिछाड़ी क्या, हम तो अपने पूर्व बॉस तिलोक दीप जी के साथ पिछले 34 साल से हैं | बाद में बॉस बदलते रहे, आते रहे, जाते रहे लेकिन दीप जी से संपर्क कभी टूटा नहीं | कोई तो बात है, कुछ तो अलग सा है श्री त्रिलोक दीप जी के व्यक्तित्व में |'दिनमान'के समय से उन्हें पढ़ती रही हूँ | पिछले दिनों उन्होंने फेसबुक पर अपने संस्मरण पोस्ट किये जो कि अनमोल प्रतीत हुए | लेखनी में गज़ब का प्रवाह, समय को दृश्यमान करती यादों नदी जैसे निर्बाध बह रही हो |

यादें तो हमारे पिटारे में भी हैं जिनका सिलसिला'सन्डे मेल'के कार्यकारी संपादक त्रिलोक दीप के रूप में खुलता है | इस सिलसिले की पहली कड़ी थे'टाइम्स ऑफ़ इंडिया'के मुख्य संवाददाता योग्रन्द्र बाली | उन्होंने बताया था कि संजय डालमिया नया अख़बार शुरू कर रहे हैं'सन्डे मेल', कन्हैया लाल नंदन संपादक हैं | तुम त्रिलोक दीप जी से मिल लेना, वे कार्यकारी संपादक हैं | उनके बताये पते 595, ग्रेटर कैलाश पार्ट -2 पहुँच गयी | दीप जी बेसमेंट में अपने कमरे में बैठे थे, उन्होंने मुझे'सन्डे मेल'के बारे में विस्तार से बताया और कहा, आप ज्वाइन कर लीजिये | ज्यादा सोचा नहीं, हामी भर दी | निश्चित दिन एक बार फिर बुलाया गया | मैं फिर पहुंची, पता चला दीप जी कमरे में अन्दर हैं | बाहर सोफे पर कई और लोग थे, थोड़ी देर में अंदाज़ा हो गया कि ये सब एक – दूसरे को जानते हैं और'टाइम्स ऑफ़ इंडिया'ग्रुप से हैं | मैं एकदम अजनबियों के बीच, जो बाद में संडे मेल में मेरे सहयोगी बने और मार्गदर्शक | सबसे बहुत कुछ सीखा सबसे जैसे कि महेश्वर दयालु गंगवार जी, रमेश बतरा जी , उदय प्रकाश जी ...| सबको एक - एक कर अन्दर बुलाया गया | मेरी भी बारी आई | अन्दर केवल वेतन पर बात हुई | मैंने बिना कुछ सोचे 2, 500 बोल दिए | दीप जी ने मेरी तरफ देखा फिर मेज़ की उस तरफ बॉस कि कुर्सी पर बैठे संजीव जी की तरफ देखकर बोला, 2, 500 तो इन्हें सैलरी मिलती थी, 700 रुपये कनवेंस के थे | अब मुझे क्या पता था, बाहर बैठे लोगों के लिए कितना वेतन तय था वो भी उपसंपादक के लिए | दीप जी के शब्द मुझे ढाल की तरह लगे |'सन्डे मेल'की टीम एक तरह से बन गयी थी, बाद में इसका विस्तार हुआ | प्रवेशांक की तैयारी पूरे जोश – खरोश के साथ शुरू हुई |'सन्डे मेल'जैसे कि नाम से ही जाहिर है, रविवार को पाठकों तक पहुँचाने वाला साप्ताहिक था | खबरों और उनके के विश्लेषण के साथ, मनोरंजन के लिए पत्रिका मुफ्त में | मुझे पत्रिका वाली टीम में शामिल किया गया | उदय प्रकाश जी मार्गदर्शन में संजय चौहान, विनोद चंदोला भी इसी टीम में थे | प्रवेशांक में पत्रिका की आवरण कथा का जिम्मा मुझे दिया गया | व्यंग्यकार, कथाकार, हम लोग टी वी सीरियल के लेखक और साप्ताहिक हिंदुस्तान के संपादक मनोहर श्याम जोशी जी के साक्षात्कार पर आधारित थी आवरण कथा | प्रवेशांक के विज्ञापन देश और दिल्ली में बड़े – बड़े होर्डिंग्स पर चमक रहे थे और साथ में चमक रहा था मनोहर श्याम जोशी के फोटो के नीचे लिखा शीर्षक –'पहले मैं बहुत लल्लू था': मनोहर श्याम जोशी | जोशी जी की ही व्यंग्यात्मक शैली में लिखी आवरण कथा पाठकों को खूब भाई, ढेरों चिट्ठियां आयीं, लेकिन बात बिगड़ गयी| जोशी जी खासा नाराज़ हो गए, शायद शीर्षक से | बिगड़ी बात सँभालने के लिए दीप जी मोर्चा संभाला | खैर ! बाद में सब ठीक हो गया |

'सन्डे मेल'में अपने पूरे कार्यकाल में मैंने दीप जी को एक शांत, धीर – गंभीर और संवेदनशील प्रशासक के रूप में पाया, जो सामने वाले को हमेशा सहज महसूस कराता है | हमेशा सूट – बूट, टाई, लगभग मैचिंग पगड़ी, चश्मे के पीछे से झांकती नज़रें और तनी हुई मूंछों के नीचे स्मित मुस्कान, उनकी यह धज आज 34 साल बाद भी वैसी है | वे अपने साथियों की हौंसला अफजाई में कभी पीछे नहीं रहे | एक बार पत्रिका का शानदार अंक निकला'प्यारगाहों की सैर'| आज की भाषा में कहें तो इस सुपर – डुपर अंक का जश्न मनाने दीप जी पत्रिका की चार सदस्यीय टीम को सूरज कुंड के होटल राजहंस ले गए | वहां संजय चौहान (फिल्म पान सिंह तोमर के लेखक) की तबियत बिगड़ गयी, उन्हें उल्टियाँ होने लगीं तो दीप जी के साथ हम सब संजय

को जे एन यू में उनके कमरे तक छोड़ने गए |

यादों पर जमी धूल की परत हटाती हूँ तो वह रात याद आती है जब ऑफिस में रात तक मैं पत्रिका की फाइनल प्रूफ रीडिंग कर रही थी, मैं अकेली ही थी | तब तक पत्रिका की टीम लगभग टूट चुकी थी | अंक था'अँधेरी सुरंग के पार है, मॉडलिंग कि दुनिया'| मैं नीचे सिर किये आँखें प्रूफ में गडाए हुए थी, तभी महसूस किया मेरे पास कोई खड़ा है | ऊपर देखा तो संपादक और कार्यकारी संपादक यानि कि कन्हैया लाल नंदन जी और त्रिलोक दीप जी दोनों ही थे | मैं चौंक कर खड़ी हो गई | दीप जी नंदन जी से बोले – "विनीता जी बहुत मेहनत करती हैं, इन्हें शाबाशी मिलनी चाहिए |" उन्होंने अपना हाथ मेरे सिर पर रखकर शाबाशी दी, नंदन जी के चेहरे पर भी ऐसा ही भाव थान | दीप जी का वह शाबाशी देने वाला हाथ आज भी मैं अपने सर पर महसूस करती हूँ |

'सन्डे मेल'में हालात धीरे-धीरे बिगड़ने शुरू हो गए थे, कई लोग निकाल दिए गए थे और कईयों ने खुद ही अलविदा कह दिया था | रोज़ बस यही बातें -'सन्डे मेल'बंद हो जाएगा | अंततः एक दिन (26 अप्रैल 1995) सन्डे मेल में ताला बंदी हो ही गई, हम सब बिखर गए, अलग-अलग रास्तों पर चले गए | लेकिन एक डोर कहीं-न-कहीं सब को बांधे रही | फिर एक दिन वही डोर हमको खींचकर प्रेस क्लब ले आई | दीप जी ने पार्टी दी थी | शायद 26 साल बाद मिले थे हम सब | दीप जी का स्नेह दीप वैसे ही प्रकाश फैला रहा था | उनसे मिलने का लालच हम कभी-भी छोड़ नहीं पाए | चार साल पहले 5 अक्टूबर 2019 को आनंद विहार, दिल्ली के पेसिफिक मॉल में मैं और सुमेधा बैठे गप-शप कर रहे थे, उन बातों में दीप जी कि बातें भी थीं | तभी सूझा, चलो दीप जी से मिलने चलते हैं | पास में ही तो है उनका घर | मैंने दीप जी को फ़ोन किया और बस धमक गए उनके घर | हमारी ख़ुशी का ठिकाना नहीं था | दीप जी भी बहुत उत्साहित थे | उन्होंने पहले आंटी (दीप जी की पत्नी) से मिलवाया फिर बड़े चाव से अपना स्टडी-रूम, पुराने फोटो और अपना सबसे प्रिय रेमिंग्टन का टाइप-राइटर भी दिखाया जिस पर उन्होंने न जाने कितनी ही स्टोरीज लिखीं जो यादगार बन गईं | अनायास ही उनकी उँगलियाँ फिर टाइप-राइटर पर थिरकने लगीं| फिर किताबों की बारी आई | पूरा घर दिखाया और लौटकर हम फिर सलीके से सजे ड्राइंग-रूम में आ गए | फल का नाश्ता किया | ऐसे अनमोल अवसर पर फोटो खींचना तो बनता ही था | चलने की बारी आई तो दीप जी हमें सोसाइटी के गेट तक छोड़ने आए |

दो साल पहले दीप जी के जन्मदिन पर प्रेस-क्लब में हम सब लोग फिर मिले | इस बार दीप जी का विस्तारित परिवार, नामी-गिरामी पत्रकार, लेखक सबके साथ थे दीप जी | उन पर लखी गयी पुस्तक का लोकार्पण हुआ | केक काटा गया, लंच किया, फोटोबाज़ी हुई, लेकिन मन नहीं भरा | सो, तय हुआ एक दिन और दीप जी का जन्मदिन मनाएँगे, बस'सन्डे-मेल'वालों के साथ | वह दिन आया और हम सब IWPC में इकट्ठे हुए | खूब देर तक बातों का सिलसिला चला | खाया – पीया, केक काटा (सुनीता सब्भरवाल ने विशेष केक बनवाया था, पत्रिका के आवरण की तरह जिस पर लिखा था 'सन्डे मेल', दीप जी को जन्म दिन की बधाई) दीप जी ने हम सबको आशीर्वाद दिया | खुश रहो बच्चे, खुश रहो बेटे जैसे शब्दों में उनका आशीर्वाद और स्नेह हमने अपनी यादों के पिटारे में सहेज लिया |

@@@@@@@@@@@@@@@@

डा. विनीता गुप्ता

केंद्रीय फिल्म प्रमाणन बोर्ड (फिल्म सेंसर बोर्ड) की सदस्य रहीं प्रो. (डा.) विनीता गुप्ता 1986 से साहित्य और पत्रकारिता में सक्रिय रहीं और उन्होंने समाचारपत्रों से लेकर टेलीविजन की दुनिया तक का लम्बा सफ़र तय किया | जिसमें सन्डे मेल अख़बार, ए एन आई और बी बी सी टेलीविजन भी शामिल हैं |दूरदर्शन के टीवी कार्यक्रमों, 'देखते रहिये', 'एशिया ए एम' और 'कलम का अग्निपथ', 'शब्द यात्रा'आदि अनेक डॉक्युमेंट्री फिल्मों के निर्माण और पटकथा लेखन से सम्बद्ध रहीं | पत्रकारिता के दौर में विशेष संवाददाता से लेकर ब्यूरो चीफ और समाचार संपादक पर कार्य किया | सियाचिन ग्लेशियर से ले कर अंडमान निकोबार तक देश के दुर्गम स्थानों तक पहुँच कर रिपोर्टिंग की | 2006 में वह पत्रकारिता शिक्षण से जुड़ीं, साथ ही विभिन्न समाचारपत्रों, आकाशवाणी और दूरदर्शन के लिए स्वतंत्र लेखन करती रहीं|

हिन्दी ग़ज़ल में पीएच डी करने के साथ ही ग़ज़ल लेखन करती रहीं |'क़तरा – क़तरा ज़िन्दगी'और'इन दिनों'इनके बहुचर्चित ग़ज़ल संकलन हैं | विभिन्न विषयों पर पुस्तक लेखन के साथ बहुचर्चित अंग्रेजी कृतियों के हिंदी अनुवाद किये | अनूदित कृतियों में प्रमुख हैं'कुफ़्र'नाम से पाकिस्तानी लेखिका तहमीना दुर्रानी का उपन्यास'ब्लासफेमी'और'बर्फ का गोला'नाम से बापसी सिध्वा के उपन्यास'द आइसकेन्डी मैन'का अनुवाद |इनके अतिरिक्त और भी कई विषयों पर पुस्तकों का अनुवाद किया जिनमें सेना और रक्षा सम्बन्धी विषय प्रमुख हैं | इनके हिंदी उपन्यास'हंस अकेला'का कन्नड़ भाषा में भी अनुवाद हुआ | पत्रकारिता पाठ्यक्रम के लिए'संचार एवं मीडिया शोध'पुस्तक पत्रकारिता के छात्रों के लिए महत्वपूर्ण पुस्तक है | सिंगापुर की नान्यांग टेक्नीकल यूनिवर्सिटी के रिसर्च प्रोजेक्ट में इन्वेस्टिगेटर के रूप में जुड़ीं रहीं | राष्ट्रिय सांस्कृतिक दूत, दिव्या सम्मान के अतिरिक्त हाल ही में इन्हें हेल्थ केयर चेंजमेकर लीजेंड अवार्ड से अलंकृत किया गया |

फिलहाल महाराजा अग्रसेन इंस्टिट्यूट ऑफ़ मैनेजमेंट स्टडीज के पत्रकारिता विभाग की अध्यक्ष और मेम्स मीडिया ग्राफ की मुख्य संपादक हैं |

सामाजिक सरोकार, लेखन और पत्रकारिता त्रिलोक के अद्भुत दीप

अयोध्या प्रसाद

एक पत्रकार समाज और अपने समय का आईना होता है और आज के दौर में जब लोकतंत्र का चौथा स्तंभ अपनी जड़ें तलाशता नजर आता है तो त्रिलोकदीप जी जैसी शख्सियत के अनुभव और आदर्श हमारे लिए प्रेरक बनते हैं।

वैसे तो त्रिलोकजी को मैं नब्बे के दशक से जागता हूं लेकिन एक पत्रकार के रूप में उनकी कहानी लगभग पचपन साल पहले शुरू हो चुकी थी जब टाइम्स समूह के साहू शांति प्रसाद जैन और रमा जैन का सपना कि टाइम और न्यूज़वीक के स्तर की हिंदी में भारतीय कलेवर की साप्ताहिक समाचार पत्रिका के प्रकाशन का सपना लिए दिनमान मैगजीन को शुरू किया था। संपादक सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन अज्ञेय के लिये यह प्रतिष्ठा का प्रश्न था कि दिनमान एक स्तरीय प्रकाशन हो। इसलिए मनोहर श्याम जोशी, श्रीकांत वर्मा, जवाहर लाल कौल, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना दिनमान से जोड़े गए। उसी सिलसिले में खोज हुई त्रिलोक जी की।

लोकसभा के अध्यक्ष सरदार हुकम सिंह के यहां अज्ञेय जी की मुलाकात लोकसभा सचिवालय में बतौर हिंदी टाइपिस्ट की नौकरी कर रहे तीस बरस के त्रिलोक दीप से हुई। उन्होंने त्रिलोक दीप को प्रेरित किया और सरकारी नौकरी छोड़ वे संपादकीय टीम में शामिल हो गए। वे 1966 से 1989 तक दिनमान के संपादकीय विभाग में विभिन्न पदों पर तथा 1989 से 1995 तक संडे मेल साप्ताहिक के कार्यकारी संपादक तक रहे।

नब्बे के दशक का वो दौर आज भी मेरी आँखों के सामने जीवंत है जब मैं जोधपुर विश्वविद्यालय से स्नातक कोर्स कर रहा था।

डायरी लिखने से शुरू हुआ शब्दों से रोमांस परवान चढ़ रहा था और उस प्रेम कहानी को हवा देने का काम करता था...'संडे मेल'साप्ताहिक अखबार। मुझे याद है रविवार की दुपहरी मेरे कदम रेल्वे स्टेशन के पास स्थित बुक स्टोर की तरफ बढ़ जाते थे। मुख पृष्ठ के आलेख से शुरू करते हुए मैं पेज दर पेज इस साप्ताहिक ट्रीट को अपने में घोल लेता था। उसी सम्मोहन भरी यात्रा में मेरी मुलाकात होती थी त्रिलोक दीप जी की लेखनी से सजे यादगार आलेखों से। मैंने ना जाने कितने कतरनों के मोती अपनी डायरी के पन्नों के बीच ख़ज़ाने के तौर पर सहेज रखे थे।

फिर समय बह चला और मैंने दैनिक भास्कर बतौर रिपोर्टर ज्वाइन कर लिया। एक दिन डालमिया ट्रस्ट के सेहत फाउंडेशन के एक कार्यक्रम के सिलसिले में त्रिलोक दीप जी का जोधपुर प्रवास हुआ और संयोगवश उस कार्यक्रम का कवरेज मेरे जिम्मे था। त्रिलोक जी से मुलाक़ात एक सपने के सच होने जैसी थी। जितनी सहजता और सौम्यता से उन्होंने मुझ जैसे नौसिखिए से संवाद किया, वो ही अपने आप में एक अनूठा अनुभव था। उस दिन, आभासी दुनिया का एक रिश्ता वास्तविकता के धरातल पर उतरा और तब

से ले कर वो लगातार मजबूत होता जा रहा है।

त्रिलोक जी की सबसे बड़ी खासियत उनकी ज़िंदादिली और पलक झपकते ही अपनापन कायम कर लेने वाला जादू है। जोधपुर शहर, और वहाँ का ताज होटल मानो उनका घर से दूर एक और घर बन गया था। वहाँ के प्रेस क्लब के अधिकांश साथी उनके फैन थे। अक्सर हम उनके साथ बैठ कर उनके संस्मरण सुनते, खुद की समस्याओं को शेयर करते और सहज तरीके से गाइडेंस पा जाते।

आठ साल पत्रकारिता के सक्रिय स्वरुप से जुड़े रहने के बाद मेरे जीवन में एक मोड़ ऐसा आया जब मैंने अपने आपको अनिर्णय की स्थिति में, एक दोराहे पर खड़ा पाया। ये बात थी 2001 की, जब मैं हिंदुस्तान टाइम्स का पश्चिमी राजस्थान ब्यूरो संभाल रहा था। सेहत फॉउंडेशन के एक शिविर के सिलसिले में हम दोनों साथ में यात्रा कर रहे थे। उसी यात्रा के दौरान मुझे एक मल्टीनेशनल कंपनी में कॉर्पोरेट कम्युनिकेशन विभाग में नौकरी का ऑफर फोन कॉल के ज़रिए मिला। पत्रकारिता करते हुए टेबल के दूसरी तरफ शिफ्ट हो कर पब्लिक रिलेशन वाला जॉब करना मेरे लिए संभव होगा या नहीं? क्या ये ऑफर स्वीकार करना बुद्धिमत्ता होगी? कई सवाल अचानक मेरे सामने मुँह बाएँ खड़े थे।

मेरे माथे पर परेशानी भरी लकीरें त्रिलोक जी से छुपी नहीं रहीं। उन्होंने कुरेदा और मैंने सब कुछ खोल कर रख दिया। सफर का अगला हिस्सा मेरी ज़िन्दगी की दिशा बदलने वाला साबित हुआ। उन्होंने मुझे धैर्य से सुना और अपने अनुभव के निचोड़ को काम में लेते हुए मेरे मन में उपजे सभी संदेहों को दूर कर दिया। मैंने नौकरी के प्रस्ताव को स्वीकार करने का निर्णय ले लिया। उसके बाद कई बार मुलाकातों या फोन पर बातचीत के दौरान मैंने उन्हें याद दिलाया कि कैसे उनकी सलाह मेरे लिए एक सकारात्मक बदलाव लाने वाली सिद्ध हुई।

नई नौकरी के साथ मेरे दिल्ली प्रवास बढ़ गए। अब दिल्ली प्रेस क्लब मेरे लिए वो ठिकाना बन गया जहाँ मेरे लिए त्रिलोक जी से मुलाक़ात करना ही मेरे लिए एक ट्रीट बन जाता। कितने ही किस्से और कितनी ही बातें सहज बह निकलती। फेसबुक पर में उनकी यादों से सजी पोस्ट्स का सबसे बड़ा फैन रहा हूँ। उनके संस्मरण इतनी विस्तृत जानकारी के साथ सामने आते हैं कि सुनने, पढ़ने वाले के सामने एक पेंटिंग बननी शुरू हो जाए।

त्रिलोक जी पत्रकारिता और लेखन के एक युग का प्रतीक बन मेरे लिए उस रोशनदान के समान हैं जहाँ पहुँच कर में सुकून की रौशनी पा जाता हूँ। उनके उत्तम स्वास्थ्य और दीर्घायु की कामना...

अयोध्या प्रसाद गौड़ एक लेखक, रंगकर्मी और पेशे से एक बहुराष्ट्रीय कंपनी में महाप्रबंधक हैं। बाद दैनिक भास्कर में चीफ रिपोर्टर और हिंदुस्तान टाइम्स में ब्यूरो चीफ रहे और अब तक पांच पुस्तकों का लेखन।

□□□

पानी री पानी तेरा रंग कैसा

कमल लाल

पानी री पानी तेरा रंग कैसा , जब भी इस गाने को सुनता हूं तो मुझे सिर्फ एक व्यक्ति का संस्मरण आ जाता है और वो हैं मेरे प्रिय पूर्व सहयोगी और मित्र श्री त्रिलोक दीप जी का। जैसे पानी का अपना कोई रंग नहीं होता और वो हर वस्तु के साथ ऐसे मिल जाता है की उसी का हिस्सा बन जाता है, दीप जी का जीवन भी ऐसा ही रहा है। जब वो अपनी यात्राओं का वर्णन करते हैं तो वहां का हर दृष्ट मानो सजीव हो उठता है। एक चलचित्र की भांति वहां का पूरा दृश आंखों के सामने घूमने लगता है। उसके साथ उस देश की आबोहवा, रहन सहन, खाना पीना, वेशभूषा ईत्यादि का भी पूरा चित्रण भी उनके लेखों में अक्सर पढ़ने को मिल जाया करता है। वहां की राजनीति की पकड़ उनके लेखों को समग्र रूप से पड़ने पर मजबूर कर देती है। यही कारण है कि विश्व का शायद ही कोई ऐसा हिस्सा बचा होगा जहां वो न गए हों।

विदेशों में ही नहीं भारतीय परिपेक्ष में भी मुझे दीप जी में एक संपूर्ण पत्रकार दिखाई देता है। बड़े से बड़े नेताओं का साक्षात्कार उन्होंने किया। हालांकि सभी बड़े नेता उनको बड़ी अच्छे से उनको जानते हैं पर मैंने कभी उनको इन नेताओं का निजी लाभ लेते नहीं देखा। आज के जमाने में यह एक बहुत बड़ी बात है। शायद यही कारण है उम्र के इस पड़ाव पर जब लोग रिटायरमेंट लेकर आराम की जिंदगी काट रहे होते हैं, दीप जी 87 वर्ष की आयु में भी सक्रिय हैं।

एक और बात की सराहना किए बगैर यह संस्मरण अपूर्ण रह जायेगा। दीप जी अहंकार रहित हैं। यही कारण है की जो कोई भी उनके करीब आया वह उनका हो कर रह गया। दोस्तों के लिए सदा उपस्थित रहते है पर यदि हम कभी पीछे रह गए तो उन्होंने कभी हमें कुछ कहा नहीं। हर किसी रंग में घुल मिल जाना और उस रंग को निभाना उन्हें बहुत अच्छे से आता है।

पिछले 40 वर्षो के अनुभव के आधार पर सिर्फ इतना ही कह सकता हूं की दीप जी एक सच्चे पत्रकार , एक अच्छे साथी,एक पक्के मित्र और एक धार्मिक प्रवत्ति के ईमानदार व्यक्ति हैं। उनकी दीर्घायु की कामना करता हूं।

संवेदनशील पत्रकारिता के शिखर त्रिलोकदीप जी

उदय वीर सिंह

मेरा सौभाग्य मुझे सराहेगा मेरी कलम मुझे दुलारेगी संभवतः इस लिए नहीं कि मैं कलमपोषी का कायल हूं इसलिए की एक निर्विवाद अजीम भाषाई पत्रकारिता संवेदनशीलता संस्कृति शिक्षा व मानवीयता के उच्च मानविन्दु, प्रखर रश्मिरथी की ओर निरेखने का एक अनौपचारिक सरोकारी आत्मिक प्रयास का उद्योग कर पाया हूँ।

कितना कठिन होता है किसी उजड़े हुए दयार को पुनः बहारों में शुमार करना। देश विभाजन की तेजाबी बारिस से तबाह गुलशन का पुनः गुलजार होना एक सामान्य प्रक्रिया नहीं थी अर्थ समाज भाषा सरोकार सृजन सहकारिता के छिन्न -भिन्न पड़े ताने-बाने को सृजन, विकास के एक सूत्रीय धागे में पिरो कर चलने के उपक्रम को एक उद्दाम लालसा का धनी मनीषी ही साध सकता था, और इस अविस्मरणीय अभामयी दीपों में आदरणीय सरदार त्रिलोक दीप सिंह जी भी आदर से शुमार होते हैं। अति विषम परिस्थितियों में जब व्यक्ति अर्थ शक्ति, सत्ता तख्त की ओर आसक्त होता है, उस बेला में एक 25 वर्षीय सेवादार सिक्ख युवक का देश धर्म कौम समाज की आवाज बनने के निर्णय संकल्प साधारण नहीं असाधारण था। यह संयोग था या वतन की मांग अपनी लोकसभा सचिवलयी सेवा का परित्याग कर त्रिलोकदीप सिंह जी ने पत्रकारिता को अपने साध्य का साधन बनाया। देश की प्रगति नये आयाम का विमर्श मानस का निहितार्थ था, इस वैचारिक प्रवाह में डॉ सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन अज्ञेय, डॉ सर्वेश्वर दयाल जी जवाहरलाल कौल मनोहर श्याम जोशी श्रीकांत वर्मा आदि प्रबुद्ध गुणी जनों का सानिध्य मिला सुप्त सोते मिल जाग्रत धार बनते गए, प्रवाह बनता गया।

आप यशश्वी दिनमान साप्ताहिक पत्रिका के संपादक मंडल में बातौर सह संपादक 1966 में शामिल हुए। और वर्ष 1989 तक 'दिनमान' के लिए अपनी अनमोल सेवा प्रदान की। आप को आमो -खास, जन-मानस, सेवा सरोकारियों की चेतना उनके भावों की आवाज बनने का अवसर मिला। अंधेरों में एक समर्थ दीप, सरदार त्रिलोक दीप सिंह बनते गए। कितने झंझावात आंधी तूफान आये अमर दीप सास्वत निर्बाध जलता रहा। राष्ट्र के तकरीबन सभी सरकारों के साथ अपनी सक्रिय सेवा में कार्य करने का अनमोल अवसर आपको मिला, निष्पक्षता सजगता निर्भयता व अडिगता के साथ आपका पक्ष स्थान पाता रहा, की एक अवसरों पर सत्ता की विमुखता भी मिली परन्तु आपका निष्पक्ष स्वतंत्र दृष्टिकोण पूर्वत रहा। अपने पथ व सम्मान से कभी से समझौता स्थान नहीं पाया।

पत्रिका दिनमान की सक्रिय सेवा में कुशल नेतृत्व के साथ विभिन्न पदों पर रहकर दिनमान की कीर्ति को अप्रतिम उचाईयों पर पहुंचाया।

आपके देश विदेश के भ्रमण संस्मरण मानस पटल पर चल चित्र की भांति चलते प्रतीत होते हैं। व्यक्ति उन संस्मरणों के साथ एक संवाद सा करने लगता है, यह कहना अतिश्योक्ति नहीं होगी कि भाषायी कलात्मकता के कौशल के साथ तथ्यात्मकता के साथ आपकी लेखनी ने कोई समझौता नहीं किया है। भाषाई उग्रता या नग्नता आपके लेखन आलोचन समालोचन से सर्वथा विलुप्त पाए जाते हैं, कभी उन्हें पनाह नहीं मिली। परिवेशिक महत्वपूर्ण यह कि भेद, मतभेद की परंपरा भी रही थी परंतु आपने वैचारिक मतभेद को कभी सामाजिक, धार्मिक मतभेद नहीं बनने दिया। यह आपके व्यक्तित्व का क्षेष्ठतम प्रतिदर्श है।

सरदार त्रिलोक दीप सिंह जी के विषय में मुझे कहने का साहस धृष्टतापूर्ण होगा हम उनका अनुसरण कर अपना अभीष्ट प्रप्त करने योग्य बन सकते है। उल्लेखनीय यह है कि जब आप युवा वय में पत्रकारिता वैचारिकता के उद्दाम प्रवाह में थे उस समय (वर्ष1964 में) में हमारा जन्म हुआ। सौभाग्य है कि हमें आपकी कृतियों को पढ़ने समझने का अवसर लाभ मिल। उपकृत होता हूँ।

आप उम्र के आखिरी पड़ाव पर भी वैचारिक व सामाजिक रूप से बेहद सजग व संवेदनशील हैं। संबंधों के प्रति उद्दात्त सरल दृष्टिकोण व प्रगतिशीलता सम्यक रूप में विद्द्यमान है। यह ऊर्जा अपरिमित व अभिसरित होतिबजाये रब से मेरी अरदास है।

उदय वीर सिंह। गोरखपुर।

कवि एवं लेखक, स्थान – गोरखपुर, जन्म 23 जुलाई 1964, प्रकाशित पुस्तकें-

काव्य विधा उदय शिखर, टूटे सितारों की उड़ान (सम्मिलित) प्रीतम, मधुपर्ण। निहितार्थ, तनया, वाणी संजीवन *कहानी संग्रह* समिधा। निर्वाण। साक्ष्य। बंजर होती संस्कृति। ब्लॉग-उन्नयन, शिफत

दीप जी की अनेक सुंदर यादें

वसंत सहाय

मुझे दीप जी को बहुत बचपन से जानने का सौभाग्य मिला है. मेरे स्वर्गीय पिता रघुवीर सहाय 14 साल दिनमान के मुख्य सम्पादक थे और उनका दफ़्तर दरियागंज में था। मैं स्कूल के बाद कभी इलेक्ट्रॉनिक्स का समान लेने लाजपत राय मार्केट आता तो पापा के दफ़्तर चला जाता था, फिर उन्हीके साथ वापस घर जाता था. वहाँ उनके सहकर्मियो को देखने और उनसे बात करने का मौक़ा भी मिलता था. मुझे दीप जी की अनेक सुंदर यादें अभी तक हैं. एक तो ये कि वे आम पत्रकार, और साहित्यकार से अलग दिखते थे. उनके कपड़े और जूते टिप-टॉप होते, चेहरे की गरिमा और व्यवहार से भी ज़िम्मेदार और बहुत सुलझे हुए व्यक्ति दिखते थे. पापा उनसे बहुत आत्मीयता से बात करते थे. कभी कभी घर पर आना जाना भी होता था.दिनमान में स्वदेश और विदेशयात्राओं पर अक्सर लिखा करते थे. उनका लेखन मुझे हमेशा बहुत रोचक, और ज्ञानवर्धक लगता था. एक बार उन्हें मॉस्को से एक हफ़्ते के टुअर का आमंत्रण आया. फिर पापा ने सुझाया कि आप इसी के साथ कुछ पड़ोसी देशों की भी यात्रा करें तो बेहतर है. दीप जी ने अपने सम्बन्धों से कुछ और देशों को सूचित किया और फिर एक हफ़्ते की मास्को यात्रा दो महीने तक 6 युरोपीय देशों में बीती. हर देश की यात्रा से दिनमान में २-३ स्टोरीज़ तो बनती ही थीं. पाठकों की जानकारी के अलावा पापा कहते थे कि इससे दिनमान का प्रसार भी बढ़ता है. दीप जी कहते थे विदेशी दूतालय दिनमान को न्यूज़वीक और टाइम्ज़ के समकक्ष मानते थे. विदेश में रहते पिछले तीन दशकों से उनसे संपर्क छूट गया था. फिर पिछले कुछ सालों से फ़ेसबुक और फिर ह्वाट्सऐप पर हम जुड़ गये. कुछ बार अमेरिका से फ़ोन पर बात भी हुई. पिछले साल एक अर्से बाद उनसे मिलने का मौक़ा बना. उन्होंने कहा - मैं हर बुधवार को प्रेस क्लब में लंच पर जाता हूँ. आप भी आइए, बैठ कर तसल्ली से बात करेंगे. मेरी प्रेस क्लब की भी बचपन की बहुत यादें हैं. पापा हमारे परिवार को लगभग हर रविवार प्रेस क्लब ले जाते थे. वो अपने दोस्तों के साथ बैठ कर बातचीत करते और मम्मी और बच्चे टीवी पर फ़िल्म देखते. उन दिनों दूरदर्शन पर हर रविवार एक फ़िल्म दिखाई जाती थी. विदेश जाने के बाद से भारत की यात्राओं के दौरान वहाँ जाने का संयोग नहीं बन पाया था, और मैं तीन दशक बाद दीप जी से मिलने वहाँ गया. प्रेस क्लब काफ़ी बदल गया है पर दीप जी की जो छवि मुझे बचपन से याद थी, वह अब भी बिलकुल वैसे ही दिखे. सूटेड बूटेड, टाई, पगड़ी और दाढ़ी बिलकुल साफ़ सुथरी और एकदम सीधे खड़े होना. बस उम्र दिखती है. आजकल ऐसी सौम्य वृद्धावस्था को ग्रेसफुल एजिंग कहा जाता है. वे बहुत आत्मीयता से मिले और बेहद प्रेम से ख़ाना खिलाया.

बिलकुल पारंपरिक भारतीय तरीक़े से - मैं किसी संकोच में कुछ ख़ाना छोड़ न दूँ, इस बात पर नज़र रखना, और बार बार आग्रह कर के कुछ नया मंगाना और खिलाना. वेटर से हमारी कुछ तस्वीरें भी खिंचवाई. और फिर अपनी तीन नयी पुस्तकें भी भेंट करीं. "संस्मरण नामा" में कई जाने-माने लोगों के बारे में दीप जी के संस्मरण हैं. मैंने घर जा कर पढ़े तो बहुत ही दिलचस्प और पके हुए अनुभवों से भरा पाया. साहित्यकारों में अज्ञेय, रघुवीर सहाय से ले कर राजनीतिज्ञों में इंदिरा गाँधी, राजीव गांधी, ज़ैल सिंह, अटल बिहारी वाजपेयी और अनेक नेताओं के संपर्क में रहे और कई आत्मीय और गहरे संस्मरण पढ़ने को मिले. मेरे पिता के ज़रिये मुझे अज्ञेय को बचपन से जानने का अवसर मिला और मेरा विद्यारंभ संस्कार भी उन्होंने किया था. इसलिए मुझे ख़ास तौर से दीप जी के लिखे अज्ञेय के संस्मरण दिलचस्प लगे. इनमें दीप जी ने अपने और अज्ञेय के गहरे संबंध और अज्ञेय का उन पर भरोसा करने का ज़िक्र किया जो एक अनमोल याद है दूसरी पुस्तक है "त्रिलोक दीप का सफ़र". इसमें अनेक जाने माने लोगों ने दीप जी के बारे में अपने विविध संस्मरण लिखे है. बहुत ही रोचक पुस्तक है. तीसरी पुस्तक है "आप्रवासी अमेरिका". इसमें दीप जी ने अपनी अमेरिका की यात्रा के संस्मरण लिखे हैं. यह पहले फ़ेसबुक पर भी कई किश्तों में लिख चुके हैं और मैं वहाँ भी पढ़ चुका हूँ. इनमे वहाँ के भूगोल, व्यापार, पर्यटन, राजनीति, संस्कृति, कला, प्रवासी भारतीयों के जीवन इत्यादि पर उनका 360 डिग्री परिप्रेक्ष्य दिखता है. 1979 में अमेरिका की यात्रा में मीयामी और ऑर्लैंडो के संस्मरण बेहद रोचक और जीवंत ही नहीं, जानकारी से भी भरे हुए हैं. मैं 3४ साल से अमरीका में रहता हूँ पर मीयामी के जातीय वर्ग, भूगोल, इतिहास और क्यूबा से सम्बन्ध के बारे में कई नयी बातें सीखने को मिलीं. उनके चालीस साल पुराने संस्मरण आज भी उतने ही रेलेवंट है. वैसे शायद ही कोई जानता हो की मीयामी के होटेल में उन्हें शेख़ समझ कर उनका सामान चुरा लिया गया था.

मुझे इस बात से बहुत प्रेरणा मिलती है कि रिटायरमेंट के बहुत बाद आज भी दीप जी नियम से कुछ न कुछ रोज़ ही फ़ेसबुक पर लिखते रहते हैं. उनके लेखन में एक ताज़गी और सकारात्मक प्रवाह महसूस होता है और हमेशा उनके संस्मरणो से कुछ सीखने को मिलता है. आज के समय में लगता है पत्रकारिता में नकारात्मक आलोचना किए बिना लिखना असम्भव है. परंतु दीप जी की लेखनी में राजनीति और गिले-शिकवों से परे भी बहुमूल्य अनुभवो की एक बहुत बड़ी दुनिया है. आपकी ख़ुद की जीवन यात्रा भी सराहनीय है. विभाजन के बाद रावलपिंडी से बस्ती, फिर रायपुर और फिर दिल्ली आए. पहले उर्दू ही जानते थे, बाद में रायपुर में अच्छी हिंदी भी सीखी. लोकसभा सचिवालय में हिंदी टाइपिस्ट की नौकरी करते हुए BA किया. फिर अपने लेखन और रिपोर्टिंग के हुनर के कारण दिनमान में उपसंपादक की नौकरी, लगातार सफलता की सीढ़ियाँ चढ़ते गए. दीप जी की सफलता सिर्फ़ उनके लेखन ही नहीं बल्कि उनके जीवन के संतुलन और परिपूर्णता में है. अच्छा स्वास्थ्य, सौहार्दपूर्ण स्वभाव, मित्रों और परिवार का साथ, अपने सिख मत की समझ और पालन, और सेवा भाव भी आपके जीवन का हिस्सा है.

कर्मपथ का एक गुपचुप यात्री तारा

प्रेम जनमेजय

न मालूम किसका लिखा था, कब पढ़ा था, पर सटीक लिखा था इसलिए याद रह गया। किसी ने कहा था-- तारा इसलिए महत्वपूर्ण नहीं होता है कि उसका आकार बड़ा है अपितु इसलिए बड़ा होता है कि उसकी रौशनी कितनी अधिक है।'' मेरा यह भी मानना है कि 'सितारे' का बढ़पन्न इसमें है कि वह निरेपेक्ष भाव से देर तक अपने समय और समाज को अपनी रौशनी से समृद्ध करता रहे। ऐसे सितारे अपने को रेखांकित करने से बचते हैं, बस अपने कर्मपथ पर चलने में विश्वास करते हैं। वे असंख्य मे अलग होते हैं पर स्वयं को असंख्य का क्षुद्र अंश मानते हैं। 'प्रसाद' एक कविता है- 'परिचय' । इस कविता में वे अपने जैसे ऐसे ही विनम्र के लिए कहते हैं-

इस गंभीर अनंत नीलिमा में असंख्य जीवन इतिहास

यह लो करते ही रहते हैं, अपना व्यंग्य मलिन इतिहास।

त्रिलोक दीप मेरी दृष्टि में ऐसे ही गुपचुप तारे हैं। ऐसे व्यक्तित्व पर 'संपर्क भाषा भारती' अंक केंद्रित करती है तो उनकी सोच को सलाम करने का मन होता है। और इस पत्रिका के संपादक, सुधेंदु ओझा जब मुझसे इस अंक में लिखने के लिए कहते हैं तो दोहरा सलाम। सुधेंदु का व्यक्तित्व और सोच मुझे त्रिलोकदीपीय लगती है। ऐसा नहीं है कि त्रिलोक दीप अजातशत्रु हैं। वैसे कोई भी अजातशत्रु नहीं होता है। हर अजातशत्रु की भी पीठ होती है और पीठ के पीछे-- त्रिलोक दीप ने दिनमान, संडे मेल आदि में काम किया है और वहां सबसे आमने सामने दिल खो लकर बात तो की नहीं होगी---यह सम्भव नहीं। किसी से सामने मुस्कराकर बात करो तो दूसरे के सामने पीठ करनी ही पड़ती है।

मेरा और उनका लरकाई का प्रेम नहीं है। लरकाई के प्रेम के समय तो मैं अन्य के साथ अपनी प्रेम की पींगे बढ़ा रहा था। टाईम्स आफ इंडिया के दफतर में जाना होता था पर उस समय पींगें कन्हैयाला नंदन , अवध नारायण मुद्गलखमेश बत्तरा, सुरेश उनियाल,बलराम, महेश दर्पण आदि से बढ़ रही थीं। नंदन जी से मेरा सम्पर्क उनके दिल्ली आने से पहले का था। दिल्ली में पहले वे पराग फिर सारिका के संपादक बन दो नावों के सवार बने। धीरे -धीरे जब वे टाइम्स ऑफ इंडिया के ब्लू आई बॉय बनने लगे तो लगा कि जैसे वे हर मर्ज की दवा हैं। उनके 10 दरियागंज से 7 बहादुरशाह मार्ग पर विराजमान होने पर मेरा भी आवागमन आरम्भ हो गया। दिनमान की जिम्मेदारी संभाली तो मुझमें जिम्मेदार पत्रकार के गुण विकसित करने के लिए नंदन जी ने दिल्ली विश्वविद्यालय की गतिविधियों का संवाददाता सा बना दिया। वहीं मुलाकात हुई उनकी टीम के प्रमुऽ सदस्य त्रिलोक दीप से।

त्रिलोक दीप निसंकोच मिलते थे पर मैं निसंकोच नही मिल पाता था। आड़े आता था नंदन जी का आदरणीय व्यत्तिफ़त्व और यह भाव कि आदरणीय का दोस्त भी आदरणीय है। संडे मेल में मेरा अधिक समय रमेश बत्तरा के साथ बीतता और त्रिलोक दीप आदरणीय बने रहे। ंसंडे मेल के गलियारों में मिलना होता तो मैं उन्हें देऽकर औपचारिक मुस्कान से मुस्कराता पर बदले में वे आत्मीय मुस्कान भेज देते। हान नूं हान प्यारा के सिद्धांत पर मैं अपने प्रचीनकालीन मित्र रमेश बत्तरा से मिलता बतरस करता। यह दीगर बात है कि अब इस अतीतकालीन मित्र का अच्छा अतीत उसका साथ छोड़ रहा था। अब वह बातें कम करता था और---। पहले भी वह बातें कम करता था, तब उसके मुह में पान होता था पर अब चाय का ढाबा उसे बुलाता था-- चाय पीने को नहीं ---। एक दिन त्रिलोक दीप रमेश के पास किसी काम से आए और मुझे बैठा देख बोले,'' मैं वहां सामने बैठता हूं। '' मैं उनका व्यंग्य समझ गया पर वहां जाना न हो पाया।

पर रमेश बत्तरा के कारण ही वर्षों बाद त्रिलोक दीप से फिर जुड़ाव हुआ और इस बार इतना कि रोज एक दूसरे को सुप्रभात के बहाने याद कर लेते हैं। रमेश बत्तरा पर 'त्रासदी का बादशाह' संपादन करने का मन बनाया तो उनके करीबियों की खोज आंरभ की। इसी खोज का परिणाम अग्रज मित्र त्रिलोक दीप हैं। मैंने उनसे रमेश पर लिखने का आग्रह किया तो बिना अपने बड़े और श्रेष्ठ पत्रकार का अहसास कराए लिखने को तैयार हो गए। सच कहूं तो मुझे इसकी उम्मीद कतई नहीं थी। और मेरे संदेशों का जवाब भी ऐसे दिया जैसे बरसों से पहचना है।

रमेश बत्तरा पर मेरे अग्रज मित्र ने बहुत मन से लिखा है। वैसे तो वह जो भी लिखते हैं पूरे मन से लिखते हैं, संस्मरण लेखन में तो सिद्धहस्त हैं हीं। चाहे धर्मवीर भारती पर लिखने के लिए सहयोग चाहा हो या रमेश बत्तरा पर उन्होंने सहयोग दिया है। रमेश बतरा पर लिखे के कारण मैं उस समय के टाईम्स का उनकी दृष्टि से जान पाया। ये वह पक्ष भी जिसे मैं रमेश बतरा का अभिन्न मित्र होने के बावजूद नहीं जानता था। रमेश बत्तरा के माध्यम से वे अपने दिनमानी समय को याद करते हुए लिखते हैं- सही मायने में हम दोनों एक दूसरे के करीब 'संडे मेल' में आये ।वहीं आकर मुझे पता चला कि नंदन जी उन्हें सहायक संपादक बना कर लाये हैं। इसके साथ ही मुझे यह सुनने को भी मिला कि मुद्गल जी नहीं चाहते थे कि रमेश बतरा सारिका छोड़ कर नंदन जी के साथ श्नवभारत टाइम्सश् जायें। उन्होंने संभवत: नंदन जी से भी इस बाबत बात भी की थी ।इस पर नंदन जी ने मुद्गल जी को यह उत्तर दिया बताते हैं कि रमेश दैनिक समाचारपत्र में जा रहा है जहां उसकी तरक्की की ज्यादा गुंजाइश,तुम इसके रास्ते का रोड़ा क्यों बन रहे हो ।इस पर मुद्गल जी उस समय चुप्पी तो साध गये थे लेकिन उन्हें नंदन जी का यह व्यवहार कुछ नागवार गुजरा,ऐसा मुद्गल जी से जुड़े कुछ लोग बताया करते थे । 'नवभारत टाइम्स' से नंदन जी उन्हें 'संडे मेल' में सहायक संपादक बना कर लाये थे ।खैर , कार्यकारी संपादक होने के नाते मैंने दिलखोल कर उनका स्वागत किया ।नंदन जी ने यह जानकारी भी दी कि रमेश बतरा संडे मेल के रंगीन पृष्ठ देखेंगे,पत्रिका उदय प्रकाश और पेपर महेश्वरदयालु गंगवार ।इन वरिष्ठ लोगों की सलाह से बाद में कुछ और नियुत्तियां हुईं। धीरे-धीरे रमेश जी मेरे करीब आने लगे ।हमने एक दूसरे के मिजाज को समझना शुरू कर दिया ।अब हर छपने वाली सामग्री पर मुझ से भी सलाह मशविरा करने लगे ।मुझ से हमेशा वह पंजाबी में ही बातचीत किया करते थे ।मुझे रमेश बहुत तहजीबयफ्ता और काम में निपुण लगते थे ।इन तीनों वरिष्ठ सहयोगियों की अलग-अलग कैबिन थीं लिहाजा मैं भी इन लोगों से मिलने के उनकी कैबिन में चला लिए चला जाया करता था ।रमेश अपनी सीट से उठ खड़ा होकर मुझे बैठने के लिये कहते और कुछ देर तक मैं उसके पास बैठता भी।

इस बीच मुझे पाकिस्तान जाना पड़ा ।'संडे मेल'के मालिक संजय डालमिया भारत और पाकिस्तान के बीच गैरराजनीतिक स्तर पर एक सेमिनार करना चाहते थे, उस सिलसिले में मैं कई बार पाकिस्तान गया ।लौट कर या तो मैंने कोई राजनीतिक संवाद लिख दिया अथवा उस समय चलने वाले स्तंभ 'भारत-पाक महासंघ' के अंतर्गत कुछ और ।एक दिन रमेश बतरा मेरे कैबिन आकर खड़े खड़े बोले,भ्रा जी,आप से एक जरूरी बात करनी है।' वह मुझे हमेशा भ्रा जी कह कर संबोधित किया करते थे ।उनके बैठने पर पूछा,',बोलो इतने उत्तेजित क्यों हो ।किसी से कहासुनी हुई है ।'उसने जवाब दिया ऐसा कुछ नहीं है ।मुझे आपसे शिकायत है । मैंने जब अपने कसूर के बारे में पूछा तो एक फरमान जारी करके मुझे हुक्म सुनाया गया कि कल से हर हफ़्ते के लिए रंगीन पृष्ठों के लिए पाकिस्तान की कला, संस्कृति,जीवनशैली आदि पर एक लेख लिखेंगे।

--- - एक दिन पता चला कि उसने त्यागपत्र दे दिया है ।इस्तीफा उसने नंदन जी को दिया था। त्यागपत्र देने से पहले दोनों के बीच क्या बातचीत हुई इसकी मुझे कोई जानकारी नहीं थी ।यह दोनों के बीच का मामला था, क्योंकि नंदन जी के आग्रह पर ही वह सारिका से नवभारत टाइम्स आया था तथा नंदन जी ही उसे श्संडे मेल श् में लेकर आये थे ।मेरे लिए उसका श्संडे मेल' से जाना निजी तौर पर आघात पहुंचाने वाली और पीड़ादायक घटना थी जिस को मैं लफ़्जों में बयां नहीं कर सकता ।मैंने रमेश बतरा में अपने छोटे भाई जगदीश का अक्स देऽा था जिसे हमने बचपन में खो दिया था। रमेश का जुदा होना मेरे लिए जगदीश को दूसरी बार खो ने के समान है ।भाई मेरे जहां भी हो अच्छे रहो ।तुम्हारी यादें दिलों में अमिट है जो ताजिंदगी तुम्हारे खो ने के दर्द का अहसास कराती रहेंगी ।य् ऐसे हैं त्रिलोक दीप जो एक बार दिल से जुड़ जाते हैं उसे उसके जाने के बाद भी दिल में रखते हैं। उसके न होने की कसक उन्हें लगातार सालती रहती है और वे सदा उसका शुभ चाहते हैं।

श्री त्रिलोक दीप ने न केवल भारत के विभिन्न स्थानों की यात्र कर वहां की जमीनी हकीकत जानी अपितु जर्मनी, अमेरिका,

सोवियत संघ, पूर्वी और पश्चिमी यूरोप के देशों, पाकिस्तान आदि देशो की यात्र समय में हिंदी भाषा संबंधी सहायक सामग्री उपहार में दी। त्रिलोक दीप ने कैसी भी,कहीं की भी यात्र की हो,उनका उद्देश्य हिंदी भाषा के विकास के लिए अवसर ढूंढना रहा है। उन्हें हिंदी का पर्यटक भी कहा जा सकता है। यदि वे ताशकंद गए तो वहां के शास्त्री स्कूल में जाना नहीं भूले।जिस देश मे गए वहां के हिंदी सेवी से मिलकर उनके कार्यों की प्रशंसा करना नहीं भूले।ताशकंद में हिंदी के सैनिक मीर कासिमाव से मिले या वारसा(पोलैंड) के प्रोफेसर बैरस्की से तो न केवल उनका अभिनंदन किया अपितु स्वदेश लौटकर ,उनकी आवश्यकतानुसार हिंदी की अनेक पत्रिकाएं और पुस्तकें भिजवाईं।

उनकी इस यायवरी का लाभ मुझे भी मिला। बात 2022 के मई माह की है। मुझे एक दिवसीय व्यंग्य की कार्यशाला में विषय विशेषज्ञ की भूमिका निभाने के लिए विश्व हिंदी सचिवालय का निमंत्रण मिला। कार्यशाला का आयोजन 'विश्व हिंदी सचिवालय, मॉरिशस ने शिक्षा, तृतीयक शिक्षा, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्रलय तथा भारतीय उच्चायोग के संयुत्तफ़ तत्वावधान में एवं हिंदी विभाग, महात्मा गांधी संस्थान के सहयोग से किया था। किसी भी अंतरराष्ट्रीय मंच पर आयोजित होने वाली यह हिंदी व्यंग्य की पहली कार्यशला थी। अच्छा लगा रहा था कि हिंदी व्यंग्य को मॉरीशस में विमर्श की अंतरराष्ट्रीय जमीन मिल रही थी। जून के आरंभ में मैंने इस सूचना को मैंने अपनी फेसबुक वॉल पर साझा किया । तत्काल त्रिलोक दीप जी का व्हाट्सएप् पर संदेश मिला,'' विजय मधु और सुचिता रामदीन, स्वामी कृष्णानंद शास्त्री के शिष्य है। उनके इन दोनों शिष्यों ने दिल्ली में शिक्षा प्राप्त की थी इसलिए मैं उन्हें जानता हूं। मधु तो शायद वहां टीवी में हैं,पक्का नहीं ---'' इसके बाद उन्होंने स्वामी कृष्णानंद शास्त्री के संबंध में एक व्हाट्सएप् और किया जिसमें लिखा था,'' 1992 के शुरू के किसी महीने में दिल्ली के जोरबाग स्थित डालमिया गेस्ट हाउस में स्वामी कृष्णानंद सरस्वती से शाम को मिला। उद्देश्य था 'संडे मेल' के लिए इंटरव्यू लेना ।फोटोग्राफर परमेश्वरी दयाल मेरे साथ थे ।हमेशा की तरह हंसते हुए स्वामी जी ने कहा 'आओ त्रिलोक मेरे पास बैठो ।' फोटोग्राफर अपना काम कर रहे थे। इंटरव्यू के लिए जब मैंने टेपरिकार्डर निकाला तो स्वामी जी बोले 'पहले फोटोग्राफर को अपना काम ऽत्म कर लेने दो।' फोटोग्राफर के काम ऽत्म करने के बाद स्वामी जी ने कहा कि कुछ बातें तो तुम रिकॉर्ड कर लो और उसके बाद तुम टेपरिकार्डर बंद कर देना और हम लोग सामान्य बातचीत करेंगे । मेरी कुछ बातें ध्यान से सुनना जो तुम्हारी जानकारी के लिए हैं ।उचित समय पर ही इन्हें लिऽना ।यह मैं तुम्हारे विवेक पर छोड़ता हूं।

हां,अब शुरू करो।स्वामीजी ने कहा कि तुम मुझे लगभग तीन दशकों से जानते हो,तुम से न कुछ छुपा है और न ही कुछ भूला है फिर भी पूछो क्या पूछना चाहते हो । मैंने अपनी बात शुरू करते हुए पूछा,आप सर शिवसागर रामगुलाम के निवेदन पर 1967 में मॉरिशस आ गये थे। यहां आये आपको पच्चीस बरस हो गये हैं यानी रजत जयंती पूरी कर ली है ।इन पच्चीस बरसों में मॉरिशस कहां से कहां पहुंचा है और इसमें आपका कैसा और कितना योगदान है? अपनी आदत के मुताबिक पहले तो स्वामीजी हंसे फिर गंभीर होकर बोले, श्मुझे इस पचड़े में क्यों डाल रहे हो ।मेरा महज इतना भर योगदान रहा कि पहले रामगुलाम और बाद में अनिरुद्ध जगन्नाथ द्वारा कुछ सलाह मांगने पर मैं उन्हें अपने मन की बात बता देता था यह कहकर कि अंतिम फैसला आपको लेना है ।पिछले पच्चीस सालों में मॉरिशस ने बहुत उन्नति और प्रगति की है जिसकाश्रेय वहां के राजनीतिक नेतृत्व के साथ साथ वहां की आम जनता को जाता है ।वहां के लोग बहुत समझदार हैं ।''जहां तक मैं जानता हूं आपने सर शिवसागर रामगुलाम की बहुत सहायता की थी, देश की स्वाधीनता के दौरान और बाद में भारतीय नेताओं से भेंट कराने में भी।अपनी प्रकृति के अनुकूल वह हंस भर दिये। लेकिन अपना अधिकारपूर्ण हक जताते हुए मैंने उन्हें बताया कि समय समय पर आप और सर शिवसागर रामगुलाम मॉरिशस में आपकी महती भूमिका की मुझसे चर्चा करते रहे हैं लेकिन अब मैं आपके मुंह से सुनना चाहता हूं ।बहुत जिद्दी हो, कहते हुए मेरी पीठ पर प्यार से हल्का सा थप्पड़ मार दिया और बोले,---''

त्रिलोक दीप जी द्वारा दी गईं यह सूचनाएं मेरे बहुत काम आईं। व्यंग्य कार्यशला की उपलब्धि रही माधुरी रामधारी के परिवार से मिलना। वापसी की पूर्व संध्या पर माधुरी रामधारी ने रात्रि भोजन पर मुझे और मेरी पत्नी आशा को अपने घर बुलाया। माधुरी के पिता डॉक्टर उदय नारायण गंगू की भरा पूरा परिवार है। अच्छा लगा देखकर कि पूरा परिवार रात्रि भोज पर एकत्रित था। डॉक्टर उदय नारायण गंगू का परिवार आर्यसमाजी परिवार है। उन्होंने हमारी वापसी की यात्र के लिए यज्ञ का आयोजन किया था। यह आत्मीयता हम दोनो को भावुक करने वाली थी। जब हम दोनो उनके आवसा पर पहुंचे तो माधुरी की माता यज्ञ आरंभ करने वली थीं। उन्होंने प्रथम आहूति के देने के लिए हम दोनों से कहा। यज्ञ के दौरान पूरा परिवार, बिना पढ़े मंत्रेचारण कर रहा था। विदा करते समय अन्य उपहारों के साथ डॉक्टर उदय नारायण गंगू ने उपहार में मुझे अपनी पुस्तक' मॉरिशस आर्यसमाजः स्वातन्=योतर इतिहास' भेंट की। ज्ञानवृद्धि के लिए एक अमूल्य उपहार था। त्रिलोक दीप जी के कारण ,स्वामी कृष्णानंद शास्त्री के संदर्भ से, मैं डॉक्टर उदय नारायण गंगू और माधुरी से चर्चा कर पाया।

यह किस्सा यहीं खत्म नहीं हुआ। 2022 का अगस्त। बारिशों के दिन थे, रातें भी बारिशों की थीं। 'धर्मवीर भारती' पर किताब पर काम चल रहा था। त्रिलोक जी से भी लिखने का आग्रह था। 21 अगस्त को उनका संदेश मिला-- प्रेस क्लब में मिला जाए--- क्या 23 की दोपहर संभव है?' मैंने उत्तर में लिखा,'' मिलता हूं, बशर्ते बारिश खलनायक न बने।'' हृदय रोग से पूर्व, एक दोपहरी उनकी

अपने बहुत नजदीकी दोस्तों-- जसविन, कमलेश कुमार कोहली, शम्भूनाथ शुक्ला आदि के साथ अवश्यमभावी होती थी। दोस्ती की इस चौकड़ी को फेसबुक पर देखकर इर्ष्या होती थी। पर 23 को इर्ष्या समाप्त होने वाली थी। उस दिन की हल्की पुहार वाली दोपहरी मेरी यादगार दोपहरी है। जान उन्हें कबसे रहा था, वहाट्सऐपीय और फेसबुकिया नजदीकियां भी थीं, पर मिल बरसों बाद रहा था। इसलिए मैंने उन्हें लिखा- मेरे वड्डे भ्रा जी! आपके साथ पहली बार आमने सामने, इकलौता बैठा और यह बैठक मेरे लिए यादगार बन गई। विश्वास है कि धीमी आंच पर पकने वाले हमारा मिठास भरा रिश्ता देर तक चलने वाला है। आप तो अनुभवों का खजाना हो जिसे मुझे धीरे धीरे लूटना है। आशा है इस प्यासे को पानी पिलाते रहेंगे।''

23 अगसत को उन्होंने मुझे एक खजाना सौंपा। खजाना था-- स्वामी कृष्णानंद शास्त्री पर किताब की पांडलिपि। पांडलिपि सौंपते हुए बोले,'' वीरे। एक प्रकाशक कब से इसे दबाए बैठा है। चाहता हूं कि मेरे जीते जी यह किताब आ जाए। तुझे तो बहुत प्रकाशक जानते हैं, तेरी मानते हैं, कोशिश कर के देख--- और इसका संपादन तुझे करना है। ''

मैं हतप्रभ। कैसा हो गया है हमारा प्रकाशक वर्ग जो कुर्सी पर बैठे हुए को, महत्वहीन होने के बावजूद महत्व देता है। जो काम की नहीं लेखक की ,खरीद प्रतिभा की कद्र करता है। अपने अग्रज मित्र, देश विदेश की सैंकड़ों यात्रओं के अथक यात्री और गुणवत्तापूर्ण संपादकीय के अनुभव के खजाने से समृद्ध श्री त्रिलोक दीप ने, अपनी इस पुस्तक को संपादित करने और संपादकीय लिखने का आग्रह कर रहे हैं। श्री त्रिलोक दीप की पांडलिपि को पढ़ा तो मैनें पाया कि नादान प्रकाशक ने एक हीरा अनदेखा किया। एक माह बाद मेरे अभिन्न मित्र, मेरे कहे कि कद्र करने वाले और लेखक का संवदेनशील हृदय रखने वाले डॉ0 संजीव कुमार मेरे घर आए तो मैंने पांडलिपि देते हुए कहा,'' फिर भी इसे देख लें।'' फिर भी उन्होंने देखा और जब संपादक के आगे मेरा नाम देखा तो मुस्कराकर बोले, ' देख लिया। जल्द छपेगी।''

व्हाट्सएप पर उनका लिखा आत्मीयता से पूर्ण होता है। 'जीवंदे रहो' जेसे आत्मीय शब्दों का प्रयोग करते हैं। अनेक बार तो मूड में आएं तो व्यंग्यकार पर व्यंग्य कर देते हैं। एक बार उनसे मैंने 'व्यंग्य यात्र' भेजने के लिए पता देने का अनुरोध किया तो उनका उत्तर आया ,'' मुझ पर भी कुछ व्यंग्य लिऽने का इरादा है क्या, वीरे!

त्रिलोक दीप हिंदी के एक अहिंदी भाषी सैनिक हैं। हिंदी भाषा, साहित्य और पत्रकारिता को अपने लेखन द्वारा समृद्ध करने और उसके प्रचार-प्रसार में इनकी महत्वर्पूण भामिका है। त्रिलोक दीप ने हिंदी के प्रचार-प्रसार के लिए न केवल भारत में अपितु विदेशों में भी वहां के मनीषियों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर, एक श्रमिक की तरह श्रम किया है। हिंदी की प्रतिष्ठित समाचार पत्रिका 'दिनमान' के संपादकीय विभाग में त्रिलोक दीप ने 24 वर्ष तक कार्यरत रहकर पत्रकारिता के नए प्रतिमान गढ़े हैं। अपने लम्बे सक्रिय संपादकीय जीवन में इन्होंने अज्ञेय और रघुवीर सहाय जैसे संपादकों के साथ न केवल काम किया अपितु ' विदेश' और 'प्रतिरक्षा' जैसे विषयों पर अपने स्तंभों के माध्यम से अनेक महत्वपूर्ण मुद्दों पर ध्यानाकर्षित किया। इनके उठाए गए प्रश्नों ने नीतिनिर्धारकों को सोचने के लिए बाध्य किया।

त्रिलोक दीप एक बहुत कुशल अनुवादक भी हैं। इन्होंने अपने अनुवादों के माध्यम द्वारा, हिंदी और पंजाबी भाषा के मध्य एक पुल का निर्माण किया है। साहित्य अकादमी द्वारा पुरस्कृत पंजाबी के प्रमुख उपन्यासकार पद्मश्री कर्नल नरेंद्र पाल के तीन उपन्यास हिंदी में रूपांतरित किये। उनके द्वारा रूपांतरित 'कड़ियाँ टूट गईं' तो 'साप्ताहिक हिंदुस्तान' ने धारावाहिक प्रकाशित किया। त्रिलोक दीप द्वारा अनुदित/रूपांतरित कृतियां 'धर्मयुग' 'नवनीत' आदि में भी प्रकाशित हुए। साहित्य अकादमी से सम्मानित पंजाबी की कवियत्री श्रीमती प्रभजोत कौर की अनेक रचनाओं के अनुवाद किये।लोकसभा के पूर्व अध्यक्ष सरदार हुकमसिंह के पंजाबी में लिखे यात्रा संस्मरण बहु चर्चित हैं। त्रिलोक दीप ने इनका अनुवाद पंजाबी और हिंदी में किया जो 'कई देश कई लोग' नाम से प्रकाशित हो चर्चित हुआ।

इन्होंने हिंदी को भी अनेक महत्वपूर्ण कृतियाँ दी हैं। इनका न केवल 'चढ़ता हुआ रंग' नामक उपन्यास चर्चित हुआ अपितु इनके कहानी संकलन 'स्वप्न और परछाई' बहु चर्चित हुआ। इनके द्वारा लिऽी बाल कथाएं पढ़कर पता चलता है कि इन्हें बाल मनोविज्ञान का कितना ज्ञान है।

87 वर्षीय त्रिलोक दीप गीता के कर्म किये जा--वाले सिद्धांत पर विश्वास करते हैं। हिंदी भाषा के विकास में वे उम्र को आड़े नहीं आने देते हैं। लेऽन उनके प्रतिदिन का कर्म है। वे 87 वर्ष के वृद्ध हैं पर उनकी सोच वृद्ध नहीं युवा है। वे आधुनिक संचार माध्यमों का मानव समाज की बेहतरी के लिए उपयोग कर रहे हैं। उनमें गजब का आत्मबल है। पिछले दिनों इसी आत्मबल के द्वारा उन्होंने बीमारी गंभीर रोग का पराजित किया। वे समाज के रोगों से भी निंरतर लड़ रहे हैं और उन्हें पराजित कर रहे हैं।

श्री त्रिलोक दीप का मानना है कि जब तक भाषा के प्रति हमारे मन में गौरव नहीं होगा, 'निज भाषा उन्नति ',किसी भी तरह के पूर्ण स्वराज की चाह, हिंदी की वैश्विक शत्तिफ़ आदि अधूरी ही रहेगी।और मेरा मानना है की जब तक हम एक कर्मठ, नेकदिल , आत्मीय इंसान का शुभ नहीं चाहेंगे मानव हित की वैश्विक शत्तिफ़ अधूरी रहेगी।

अग्रज मित्र के साथ आत्मीयता पुराने चावलों की सुंगधित मिठास से भरपूर है। जिस मिठास की आज के असहिष्णु समय में बहुत जरूरत है। यह मिठास बनी रहे।

त्रिलोक दीप: आत्मयी व्यक्तित्व और समृद्ध योगदान के प्रतीक

दिविक रमेश

वरिष्ठ पत्रकार,कथाकार और यात्रावृत लेखक त्रिलोक दीप मुझे हमेशा एक बहुत ही बेहतरीन इंसान और आत्मीय व्यक्तित्व से सरोबार इंसान लगे हैं।उपन्यास, कहानी और बाल साहित्य की भी उनकी अनेक पुस्तकें प्रकाशित हैं।

अविभाजित भारत में, 1935 में जन्में त्रिलोक दीप जी जीवन की चुनौतियों को सहज रूप में स्वीकार करते हुए, अपनाए गए अपने हर क्षेत्र में अपनी प्रतिभा का ध्वज बखूबी फहराया है। लोकसभा सचिवालय की दसियों वर्ष तक की गई सरकारी नैकरी को त्याग कर, प्राइवेट जगत में, पत्रकारिता के अपने मनपंसद क्षेत्र में आ जमें, जो एक असाधरण निर्णय कहा जाएगा। यह वह समय था जब साहू शांति प्रसाद जैन और रमा जैन ने टाइम और न्यूजवीक के स्तर की हिंदी में भारतीय कलेवर की साप्ताहिक समाचार पत्रिका के प्रकाशन का सपना देखा था। सपने को मूर्त रूप देने के लिए अज्ञेय को, संपादक के रूप में, काम सौंपा था जो बर्कले विश्वविद्यालय में विजिटिंग प्रोफेसर के पद पर कार्यरत थे। वर्ष 1965 में दिनमान का प्रकाशन शुरु हुआ। अज्ञेय के पारखी आँख ने जहाँ एक ओर उस समय के दिग्गज मनोहर श्याम जोशी, श्रीकांत वर्मा, जवाहर लाल कौल, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना को जोड़ा. वहीं

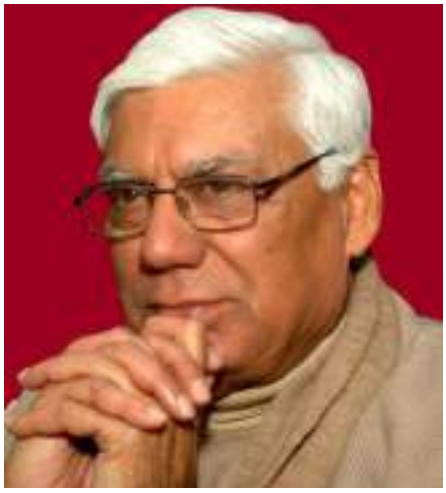

लोकसभा सचिवालय में हिंदी टाइपिस्ट के रूप में काम कर रहे तीस वर्षीय त्रिलोक दीप को भी, उनके भीतर बैठे पत्रकार को पहचानते हुए. जोड़ लिया। त्रिलोक दीप 19966 में दिनमान की संपादकीय टीम में शामिल हो गए थे। 1989 तक विभिन्न पदों पर रहे और 1989 से 1995 तक संडे मेल साप्ताहिक के सफल कार्यकारी संपादक रहे। संडे मेल समूह के अध्यक्ष संजय डालमिया त्रिलोक जी को बहुत मानते थे। वजह था, उनका लेखन और विश्व के चोटी के नेताओं से उनका सीधा संवाद। यह साहस दिनमान ही दे सकता था, कि उसका संवाददाता हर राष्ट्राध्यक्ष से रू-ब-रू बात करे। त्रिलोक जी की हिंदी और अंग्रेज़ी में ज़बरदस्त पकड़ थी, इसलिए उन्हें कभी कोई हिचकिचाहट नहीं थी। डालमिया सेवा ट्रस्ट से जुड़े रहे। 2017 तक सक्रिय योगदान के बाद स्वतंत्र लेखन कर रहे हैं। लेखन यह प्रसंग न केवल प्रेरणादायी है बल्कि श्रम और प्रतिभा की दुनिया के लिए गौरवप्रद भी है।

दिनमान रहते हुए, या कहूँ पत्रकारिता की दुनिया में रहते हुए त्रिलोक दीप जी को देश-विदेश की कितनी ही यात्राएँ करने का अवसर मिला। इस अवसर का उन्होंने भरपूर लाभ उठाया। उन्हें यात्रा वृतांत की दुनिया में सार्थक लेखन का अवसर दिया। 'देश और निवासी ' शृंखला के अंतर्गत 'लद्दाख 'और 'कनाडा' पर पुस्तकें लिखीं। हंगरी और पाकिस्तान पर यात्रा वृतांत लिखे ।अमेरिका और तत्कालीन सोवियत संघ की दो बार विस्तृत यात्राएं कीं । उनकी एक पुस्तक है - आप्रवासी अमेरिका। इस पुस्तक की भूमिका में उन्होंने बताया है कि यात्राओं में उनकी कितनी रुचि रही है और राजनीतिक तथा सामाजिक यात्राओं में उनकी पैठ रही है।इस कृति में वाशिंगटन, कनाडा का चुनावी माहौल, न्यूयार्क, न्यूजर्सी, आरलोडो, सिटी आफ

गोल्डेन गेट सैनफ्रांसिसको, मौसम की आँख मिचौली, ऐमिश और आप्रवासी अमेरिका आदि का वर्णन मिलता है। उन्होंने जहाँ भारतीयों के प्रति इन स्थानों के दृष्टिकोण को महीन निगाह से देखा-समझा है वहीं विदेशी पत्रकारिता और पत्रकारों, मशीनरी आदि का गहरा जायजा लिया है। इस लेखन में त्रिलोक दीप जी की सामाजिक, आर्थिक और राजनीति की अध्ययनशीलता, उनकी जरूरी तैयारी, आवश्यक जिज्ञासा-भाव आदि बराबर प्रमाणित होते हैं।वस्तुत: त्रिलोक दीप जी के पास ऐसा अभिव्यक्ति कौशल है जिसके द्वारा केवल लिखा केवल लिखा ही नहीं रहता बल्कि दृश्यमान भी हो जाता है। उनके पास सहज और सरल भाषा में गंभीर और जटिल विषयों को भी सहज और रोचक बना देने की विरल सामर्थ्य है।

त्रिलोक जी की बालसाहित्य की उल्लेखनीय पुस्तकों में 'सुनो कहानी' (आर्य बुक डिपो) और 'सीख भरी कहानियाँ हैं जिनकी प्राप्ति अब दुर्लभ है। 40-50 बरस पहले लिखी गई थीं। उनकी एक पुस्तक है, शकुन प्रकाशन के द्वरा प्रकाशित 'हमारा संविधान' जिसकी भूमिका तत्कालीन लोकसभा अध्यक्ष सरदार हुकम सिंह ने लिखी थी। सरदार हुक्म सिंह के शब्दों में, " मत देने का अधिकर स्वतंत्र भारत में प्रत्येक को प्राप्त है। नागरिकों के क्या अधिकार हैं और क्या कर्तव्य हैं, इस की जानकारी उन्हें हो, यह बड़ी आवश्यक बात है। श्री त्रिलोक दीप ने आम बोलचाल की भाषा में यही जानकारी इस पुस्तक में दी है। संविधान की मुख्य-मुख्य बातें इस में आ गई हैं। यह पुस्तक नवाक्षर प्रौढ़ों और भारत के भावी नागरिकों के लिए निश्चय ही बड़ी उपयोगी है।" वस्तुत: तत्थों पर आधारित एक बालोपयोगी पुस्तक ही कही जाएगी। त्रिलोक जी के रचनात्मक बाल साहित्य का आनंद लेने के लिए उनकी आशा प्रकाशन गृह, करोल बाग, नई दिल्ली से प्रकाशित 'सुनो कहानी' को पढ़ना होगा। यहाँ उनकी कथावाचक या किस्सागो वाली रोचक शैली भी मिलेगी। भाषा-शैली तो बालकों के अनुकूल सहज-सरल पाएँगे ही। कोई उलझाव नहीं। रोचकता,प्रश्नाकुलता, जिज्ञासा को बनाए रखते हुए पूरी कहानी को पठनीयता के गुण से संजोने की कुशलता यहाँ देखी जा सकती है। तथ्यात्मक जानकारी को कैसे रचनात्मक बनाया जा सकता है इसका उदाहरण उनकी खूबसूरत कहानी ' मैं गुलदस्ता हूँ' है। बेहतरीन संवाद-शैली और नाटकीयता का उपयोग करते हुए 'पिताजी अपने बेटे मनदीप को भारत देश के गुलदस्ते जैसे रूप, उसमें विद्यमान प्रजातंत्र, सरकारी तंत्र आदि की समझ को बेहतरीन तरीके से साझा कारते हैं। इसी प्रकार गुरु गोविंदसिंह के चर पुत्रों की दुखद लेकिन गर्व से भर देने वाली गाथा 'बच्चे जो दीवार में चुन दिये गये' कहानी में पढ़ी जा सकती है। त्रिलोक दीप जी के पास बाल कहानी लेख्नन की सामर्थ्य रही है। क्या ही अच्छा होता यदि वे इस क्षेत्र में भी निरंतर सक्रिय रहते।

बहुत ही खुशी की बात है कि संपर्क भाषा भारती मासिक पत्रिका ने हिंदी के वरिष्ठ रचनाकारों के सम्मान में उनके कृतित्व और व्यक्तित्व पर विशद चर्चा करते हुए विशेषांक निकालने की योजना बनाई है। इस क्रम में त्रिलोक दीप जी से इसका आरंम्भ किया जाना बहुत ही शुभ है।

मैं अपने बहुत ही प्यारे और जरूरी वरिष्ठ लेखक तथा पत्रकार आदरणीय त्रिलोक दीप जी को हृदय की गहराई से शुभकामनाएं दे रहा हूँ। मुझे पूरा विश्वास है कि उनकी स्नेह-वर्षा आगे आने वाले कितने ही वर्षों तक हम पर होती रहेगी।

एल-1202, ग्रेंड अजनारा हेरिटेज, सेक्टर-74, नोएडा-201301

मो. 9910177099

divikramesh34"gmail.com

[5:00 pm, 23/04/2023] Tirlok Deep: दिविक रमेश (वास्तविक: रमेश चंद शर्मा)

सुप्रतिष्ठित वरिष्ठ कवि, बाल-साहित्यकार, अनुवादक एवं चिन्तक ।

जन्म-स्थान: 6 फरवरी, 1946 (वास्तविक:28 अगस्त, 1946) , गाँव किराड़ी (दिल्ली)

प्रमुख कृतियाँ: कविता संग्रह: कवि के मन से, जब घुटती है साँस आदमी की, पचास कविताएँ, वहाँ पानी नहीं है, माँ गाँव में है, गेहूं घर आया है, खुली आँखों में आकाश, रास्ते के बीच, छोटा-सा हस्तक्षेप,हल्दी-चावल और अन्य कविताएँ, बाँचो लिखी इबारत, वह भी आदमी तो होता है, फूल तब भी खिला होता। काव्य-नाटक: खण्ड-खण्ड अग्नि। आलोचना-शोध: नये कवियों के काव्य-शिल्प सिद्धांत, संवाद भी विवाद भी, कविता के बीच से, साक्षात त्रिलोचन,समझा-परखा, Some Aspects of Korean and Indian Literature हिंदी बाल-साहित्य:कुछ पड़ाव, बाल साहित्य, कुछ और पढ़ा-समझा ।

संस्मरण: यादें महकीं जब साक्षात्कार: सवालों से टकराते हुए।

अनुवाद : कोरियाई कविता-यात्रा, सुनो अफ्रीका, खलनायक (कोरियाई उपन्यास),कोरियाई बाल-कविताएं, और पेड़ गूंगे हो गए, कोरियाई लोक कथाएं, जादुई बाँसुरी और अन्य कोरियाई

कथाएं।

संपादन : निषेध के बाद, हिन्दी कहानी का समकालीन परिवेश, बालकृष्णभट्ट, प्रतापनारायण मिश्र, आंसांबल, दिशाबोध, दूसरा दिविक, प्रतिनिधि बाल कविता संचयन (साहित्य अकादेमी) आदि।

बाल-साहित्य : लगभग 50 पुस्तकें (कविता, कहानी, नाटक, संस्मरण आदि)

प्रमुख पुरस्कार/सम्मान:: साहित्य अकादेमी पुरस्कार, 2018 (बाल साहित्य)। गिरिजाकुमार माथुर स्मृति पुरस्कार, 1997 (काव्य नाटक खण्ड खण्ड अग्नि पर), सोवियत लैंड नेहरू पुरस्कार, 1984 (रास्ते के बीच ओर खुली आंखों में आकाश पर),दिल्ली हिन्दी अकादमी का साहित्यिक *कृति पुरस्कार, 1983(खुली आंखों में आकाश पर),दिल्ली हिन्दी अकादमी का साहित्यकार सम्मान 2003-2004।एन.सी.ई.आर.टी. का राष्ट्रीय बाल-साहित्य पुरस्कार, 1989(हंसे जानवर हो हो हो पर), दिल्ली हिन्दी अकादमी का बाल-साहित्य पुरस्कार, 1987 (कबूतरों की रेल पर), इंडो-रशियन लिटरेरी कल्ब, नई दिल्ली का सम्मान 1995, कोरियाई दूतावास से प्रशंसा-पत्र 2001(कोरियाई साहित्य के हिन्दी अनुवाद पर),अनुवाद के लिए भारतीय अनुवाद परिषद,दिल्ली का द्विवागीश पुरस्कार (2009),भारतीय स्तर का श्रीमती रतन शर्मा बाल-साहित्य पुरस्कार, 2009(101 बाल कविताओं पर)।उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान का सर्वोच्च बाल साहित्य सम्मान 'बाल साहित्य भारती सम्मान',2013, Life-time Achievement Award, Global Literary Festival, 2021. पंडित जवाहरलाल नेहरू बाल साहित्य अकादमी, राजस्थान का बाल साहित्य मनीषी सम्मान, 2022*

दिविक रमेश अनेक देशों जैसे जापान, कोरिया, बैंकाक, हांगकांग, सिंगापोर, इंग्लैंड, अमेरिका, रूस, जर्मनी, पोर्ट ऑफ स्पेन, नेपाल, श्रीलंका, मॉरीशस, आबू धाबी आदि की साहित्यिक-सांस्कृतिक-शैक्षणिक यात्राएं कर चुके हैं।

2011 में दिल्ली विश्वविद्यालय के मोतीलाल नेहरू महाविद्यालय के प्राचार्य-पद से सेवानिवृत्त।पूर्व अतिथि आचार्य, हांगुक यूनिवर्सिटी ऑफ फोरन स्टेडीज़, सोल, दक्षिण कोरिया(1994-1997)।

संपर्क: संपर्क : एल-1202, ग्रेंड अजनारा हेरिटेज, सेक्टर-74, नोएडा-201304, फोन:91-120-4168219 , 9910177099, ई-मेल: divikramesh34@gmail.com

व्यक्ति से परे एक बड़ी संस्था हैं त्रिलोक दीप

आधुनिक भारत के सबसे अहम कालखंडों के साक्षी

अरविंद कुमार सिंह

कोरोना संकट के कारण राष्ट्रीय राजधानी में काफी लंबे समय तक या तो तमाम आयोजन करीब-करीब स्थगित रहे या फिर ऑनलाइन ही हुए। लेकिन 2022 में आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी की 158वीं जयंती पर राइटर्स एंड जर्नलिस्टस एसोसिएशन और आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी स्मारक राष्ट्रीय समिति, रायबरेली ने तय किया कि आयोजन हर हाल में किया जाएगा। 09 जुलाई 2022 को गांधी शांति प्रतिष्ठान में समारोह की तैयारी पूरी हो गयी और कुछ चुनिंदा पुरस्कारों को लेकर भी चंद वरिष्ठ लेखकों और पत्रकारों के नाम पर सहमति बन गयी, लेकिन शीर्ष पुरस्कार आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी स्मृति अलंकरण,2022 किसे दिया जाये इस पर सहमति बन नहीं पा रही थी। नाम कई थे लेकिन जूरी में सबके साथ कुछ 19-20 लग जा रहा था और सहमति बन नहीं पा रही थी। इस बीच में अस्वस्थता के बावजूद हिंदी की विख्यात रचनाकार चित्रा मुदगलजी ने मुख्य अतिथि के तौर पर पधारने की भी सहमति दे दी और रायबरेली से आचार्यजी के गृह जिले से भी करीब 50 लोगों के आगमन की सूचना मिली।

चूंकि 2022 के साल में ही आचार्य स्मृति अभियान का रजत जयंती वर्ष भी आरंभ हो थी, जिसकी पहली कड़ी दिल्ली का समारोह था, इस कारण तमाम तरह की तैयारियों में हम उलझे थे। इसी बीच किसी वरिष्ठ पत्रकार ने शीर्ष पुरस्कार के लिए त्रिलोक दीप के नाम का सुझाव दिया। फिर क्या था दोनों संस्थाओं के शीर्ष पदाधिकारियों और जूरी की आम राय त्रिलोक दीपजी के नाम पर बन गयी। यह संयोग ही था कि इस श्रेणी में पिछला अलंकरण पद्मश्री विजयदत्त श्रीधरजी को दिया गया था।

समय कम था और मैने निजी तौर पर त्रिलोकजी को अपना परिचय देते हुए अपना निवेदन किया। उन्होंने स्वीकृति दे दी और यह हिदायत भी दे दी कि किसी औपचारिकता में पड़ने की जरूरत नहीं है। मैं सही समय पर आ जाऊंगा।

अच्छा आयोजन रहा और काफी बड़ी संख्या में लेखकों और पत्रकारों का जमावड़ा इस मौके पर हुआ। इस घटना का उल्लेख केवल एक संदर्भ के तौर पर कर रहा हूं। बीते तीन दशकों से अधिक समय से मैं भी

पत्रकारिता में हूं दो तीन सालों को छोड़ दें तो अधिकतर समय देश-विदेश में घूमते-घामते तमाम घटनाओं को रिपोर्ट करते ही बीता है। हिंदी पत्रकारिता में ऐसे कई लोग हो सकते हैं, जिनकी उम्र त्रिलोकजी से अधिक हो सकती है, लेकिन उनमें कोई ऐसा नहीं है जो त्रिलोक दीप जैसा हो, उनके जैसा व्यापक अनुभव रखता हो या जिसन अपनी आखों से देश-विदेश के बदलते रूप रंग और राजनीति को इतने करीब से देखा हो।

राजनीति और पत्रकारिता का आज बहुत तेजी से बदलता दौर है। मीडिया बीते दशकों में काफी बदल चुका है। प्रिंट मीडिया, ब्राडकास्ट न्यूज और इंटरनेट आज इसकी दुनिया में एक नया आय़ाम जोड़ रहे हैं। देश में आरएनआई से पंजीकृत 1,44,893 अखबार और पत्र-पत्रिकाएं निकल रही है। भारत में 926 अनुमति प्राप्त सैटेलाइट चैनल हैं, जिसमें से 387 समाचारों से संबंधित हैं और 539 गैर समाचार और समसामयिक श्रेणी के। दूरदर्शन के 36 चैनल हैं, आकाशवाणी के 495 एफएम स्टेशन हैं और 384 निजी एफएम हैं। इसी के साथ सोशल मीडिया प्लेटफार्मों जैसे व्हाटसअप, फेसबुक, इंस्टाग्राम और ट्विटर आदि ने व्यक्तिगत उपकरणों और सेल फोन की मदद से पत्रकारिता में नागरिकों तक पहुंच आसान बनायी है।

यानि पत्रकारिता आज ताकतवर हुई है लेकिन पत्रकार की प्रतिष्ठा आहत हुई है। समाज में सम्मान का जो दौर त्रिलोक दीपजी ने अपने पत्रकारिता के विभिन्न कालखंडों में हासिल किया है, वह आज के पत्रकार को नहीं है। उसके पीछे के तमाम कारणों को हम सभी जानते हैं, इस नाते उसकी तह में जाने की जरूरत नहीं है। और इसी नाते समाज की निगाह में जो रूतबा त्रिलोक दीपजी और उनके समकालीन कई पत्रकारों ने हासिल किया है, वह आज की पीढी की नसीब नहीं है।

त्रिलोकजी ने हिंदी पत्रकारिता और लेखन की दुनिया में जो सम्मान हासिल किया है, बेशक अपने खास कामकाज से ही किया है। दोनों क्षेत्रो में लगातार दखल देना और इतने सारे लोगों से निजी संबंधों का निर्वहन करना कोई सहज बात नहीं होती है। मैने बहुतों के बारे में बहुत कुछ सुना है लेकिन त्रिलोकजी ऐसे चंद लोगों में है जिनकी आलोचना करने वाला मुझे कोई नहीं मिला। उसकी एक बड़ी वजह है कि उन्होंने समर्पण के साथ पत्रकारिता की सेवा की और अपने मिलनसार और मददगार प्रवृत्ति के साथ एक संस्था बन कर उभरे। तमाम युवा पत्रकारों और लेखकों को समय-समय पर मार्गदर्शन

दिया, संरक्षण दिया।

मैं त्रिलोकजी का स्नेहपात्र रहा हूं लेकिन मेरे पास उनको लेकर निजी अनुभव सीधे तौर पर नहीं है। मैं उनको जानता रहा हैं और उनके साथियों सुभाष किरपेकर, डॉ नंदकिशोर त्रिखा, रामसेवक श्रीवास्तव और मेरे मित्र शम्मी सरीन (अमृतसर) आदि के साथ मेरा गहरा संबंध रहा है। सर्वेश्वरजी मेरे जिले बस्ती के ही थे और उनके साथ मेरा पत्राचार भी था। लेकिन दिनमान में रामसेवकजी के साथ मेरा गहरा संबंध बना था क्योंकि उनकी पत्नी नीलम सिंहजी हमारे इलाहाबाद से थीं। मैं उनसे बहुत बार मिला था। और दिनमान में भिक्षुकगृहों पर छपी एक कवर स्टोरी में मैने इलाहाबाद से कुछ काम किया था, जिसका क्रेडिट भी मुझे मिला था।

पत्रकारिता का कीड़ा मेरे भीतर दिनमान और रविवार ने जगाया। दिनमान का पाठक मैं 1978-79 के आसपास बना। ऐसा प्रतिबद्ध पाठक कि इलाहाबाद में पुस्तकालयों में यथासंभव उपलब्ध अंकों को पढ गया। त्रिलोकजी का लेखन तो मैं पढता ही था, सर्वेश्वरजी का कालम भी और कई रिपोर्ताज भी।

मैं जब इलाहाबाद विश्वविद्यालय में पढाई कर रहा था तो दिनमान की अनूठी लोकप्रियता अपनी आंखों से देखी। लोग इंतजार करते थे। अंक आते ही हाथों हाथ बिक जाता था। ऐसा नहीं था कि उस दौर में वही एकमात्र पत्रिका थी। कई पत्रिकाएं खुद टाइम्स समूह निकाल रहा था जिसमें धर्मयुग, सारिका.माधुरी और पराग थी तो हिन्दुस्तान टाइम्स समूह से साप्ताहिक हिन्दुस्तान, कादम्बिनी और नंदन जैसी पत्रिकाएं निकल रही थी। आनंद बाजार पत्रिका ने रविवार निकाला था। अग्रेजी में कई पत्रिकाएं थीं। लेकिन दिनमान और रविवार जैसे आंदोलन सा था। उसी के बाद अस्सी के दशक में ही साप्ताहिक अखबार चौथी दुनिया निकाला, जिसके बाद संडे मेल साप्ताहिक एक नए तेवर और कलेवर से निकला, जिसका नेतृत्व त्रिलोक जी ने किया।

यह अजीब बात है कि आज कि पीढ़ी इस धरोहर से अनजान है। खास तौर पर दिनमान और रविवार की पत्रकारिता से जिन्होंने समाज को झकझोरा, जगाया और देश-दुनिया की सच्ची तस्वीर के साथ पाठकों के ज्ञान भंडार को विस्तृत किया। मैं भाग्यशाली था कि इन पत्र पत्रिकाओं में अधिकतर में उस दौरान छप गया था जिस समय पढाई कर रहा था।

बेशक मैं भी त्रिलोकजी से प्रेरित रहा। मैं कई सोचता था कि वे रिपोर्ताज लिखने के लिए कितना अधिक श्रम करते थे, कितने लोगों से मिलते थे, कहां कहां जाते थे। सत्तादल के नेताओं से लेकर विपक्षी दिग्गजों औऱ शिखर नौकरशाहौं तक वे सहजता से मिल लेते थे। आज के राजनेताओं या नौकरशाहों की तुलना में वे बहुत बड़े-बड़े नम थे। लेकिन आज सत्ता शीर्ष पर बैठे लोगों के साथ मीडिया का कैसा संवाद है और किस तरह की एजेंडा पत्रकारिता चल रही है, इस बारे में कुछ कहना उचित नहीं।

बेशक त्रिलोकजी भाग्यशाली थी कि उनको 'दिनमान' जैसी पत्रिका के साथ बहुत लंबा दौर मिला। उनको महान संपादक, रचनाकार और स्वाधीनता आंदोलन से जुड़े रहे सच्चिदानंद हीरानंद वात्सायन 'अज्ञेय' के साथ काम करने का मौका मिला। बहुत कुछ सीखने समझने का मौका मिला। रघुवीर सहायजी के साथ काम करने का मौका मिला।

त्रिलोकजी एक बहुमुखी प्रतिभा के धनी पत्रकार और लेखक हैं। विभिन्न विधाओं में उन्होंने काम किया। उनका जन्म अविभाजित भारत में 11 अगस्त, 1935 को आज के पाकिस्तान में गुजरात जिले में हुआ और आरंभिक शिक्षा रावलपिंडी में हुई। बाद में रायपुर पहुंचे जहां उनके भीतर का रचनाकार जगा। दिल्ली में आकर काफी कुछ धक्के खाये और लोकसभा सचिवालय में काम करते हुए उच्च शिक्षा भी हासिल करना। फिर जमी जमाई नौकरी छोड़ कर पसंदीदा पत्रकारिता में दिनमान के साथ जुड़ना कैसा फैसला था, उनके दोस्तों और परिवारजनों ने तब क्या सोचा था, यह त्रिलोकजी बेहतर बता सकते हैं, लेकिन सामान्यतया मैने यही देखा है कि इन सचिवालयों में एक जमी जमायी स्थिति के बाद तमाम प्रतिभाशाली लोग वहीं के हो जाते हैं, कोई प्रयोग करने से बचते हैं।

दिनमान में त्रिलोकजी की लंबी पारी 1989 तक रही। 1966 से 1989 के राजनीति पर अगर आप गौर करें तो भारत इन सालों में इतना कुछ बदला, राजनीति और समाज जिस तरह बदली, उसे सत्ता शीर्ष के करीब से रह कर देखने का अनुभव जो त्रिलोकजी ने हासिल किया है, वह उनको बाकियों से अलग और विशिष्ट बनाता है। इस दौरान वे लगातार हिंदी साहित्य और पत्रकारिता दोनों के लिए योगदान देते रहे। नियमित कामकाज के अलावा तमाम पुस्तकें लिखीं, उपन्यास लिखा, हिंदी के ज्ञान भंडार में रत्न जोड़े और जिस काम को मैं बहुत कठिन मानता हूं, बाल साहित्य में भी योगदान दिया। देश के तमाम दिग्गज राजनेताओं के साथ उनके बहुत गहरे संबंध रहे। ऐसे राजनेता जो बहुत बड़े ओहदे पर रहे, प्रधानमंत्री तक बने और उनकी दोस्ती कायम रही, लेकिन त्रिलोकजी ने मान-सम्मान और स्वाभिमान के साथ काम किया। आजादी के बाद के बहुत अहम कालखंडो के साक्षी त्रिलोकजी खुद में एक संस्था और चलती फिरती इंसाक्लोपीडिया हैं। बहुत कठिन दौर और बहुत कड़वे और खट्टे मीठे और बहुत से दुखद छड़ों के अनुभव उनके पास हैं। कठिन से कठिन दौर में भी उन्होंने अपना कर्तव्यपालन किया। पंजाब में आतंकवाद के कठिन दौर में उन्होंने जमीनी स्तर पर जो काम किया है, वह अनुसंधानकर्ताओं के लिए सबसे अहम संदर्भ सामग्री है।

मुझे यह जानकर खुशी हुई है कि त्रिलोकजी पर केंद्रित एक विशेष अंक संपर्क भाषा भारती निकाल रही है। उसमें बहुत से जाने-माने रचनाकारों और पत्रकारों के विचार देखने को हमें मिलेंगे। इस मौके पर मैं भी अपने कुछ विचार साझा करते हुए यही कहना चाहूंगा कि मैं भाग्यशाली हूं कि मैने त्रिलोकजी को पढ़ा है और उनको देखा है।

संजीव आचार्य

हिंदी पत्रकारिता के आकाश

हिंदी पत्रकारिता के आकाश में त्रिलोक दीप एक अद्वितीय, शानदार और चमकते हुए नक्षत्र हैं। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद से अब तक इतने बहुआयामी, सतत सक्रिय पत्रकार- लेखक मुझे संज्ञान में नहीं है कि कोई और होगा। 90 वर्ष की उम्र को छू रहा उनका दैदीप्यमान व्यक्तित्व आज भी पत्रकारों की कई पीढ़ियों को प्रेरणा दे रहा है, ये कह रहा है कि, देखो, कैसे लगन, समर्पण और सौम्य अनुशासन से पेशेगत जीवन को अनुकरणीय और गौरवपूर्ण बनाया जा सकता है। कैसे मनुष्य जीवन को बहुत सफल और सार्थक जिया जा सकता है।

छत्तीसगढ़ के रायपुर शहर से देश की राजधानी दिल्ली के पत्रकारीय क्षेत्र में आना और अपनी विशिष्ट शैली और मेहनत से छा जाना, यह लिखना बड़ा आसान है। मगर हम बीते साढ़े छह दशक के त्रिलोक दीप जी के सफर पर नजर डालेंगे तो समझ में आयेगा कि आखिर ईश्वर ने क्यों उन्हें सर्वगुण सम्पन्न बनाया।

हिंदी की बेहतरीन पत्रिका रही "दिनमान" में

अपने कालखण्ड के सिरमौर सम्पादक सच्चिदानंद हीरानन्द वात्स्यायन (अज्ञेय) कन्हैयालाल नन्दन, रघुवीर सहाय के साथ बतौर रिपोर्टर- समाचार सम्पादक त्रिलोक जी ने विविध विषयों पर बेमिसाल लेखन किया है।

हिंदी पत्रकारिता के शायद ही कोई अन्य पत्रकार होंगे जिन्होंने देश के पांच प्रधानमंत्रियों -श्रीमती इंदिरा गाँधी, राजीव गांधी, चन्द्रशेखर, इंद्रकुमार गुजराल और अटलबिहारी वाजपेयी का समय समय पर सारगर्भित साक्षात्कार लिया। राष्ट्रीय, अंतरराष्ट्रीय, विदेश मंत्रालय, राजनीति, फ़िल्म जैसे विविध विषयों पर त्रिलोक जी ने सैकड़ों सहेज कर रखने वाले संग्रहनीय लेख लिखे हैं। पंजाब समस्या के दौरान उन्होंने सन्त हरचंदसिंह लोंगोवाल का पहला साक्षात्कार किया था। तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी से दीप जी बतौर पत्रकार मिलते रहते थे। जब इंदिरा जी की खालिस्तान

समर्थक आतंकवादियों ने हत्या कर दी थी तो उनके अंतिम दर्शन की रिपोर्टिंग के दौरान त्रिलोक जी उस दौरान उपजे सिख विरोधी गुस्से का शिकार होते बचे थे। चूंकि जोखिम उठाने का जज़्बा ही उनकी ताकत रहा, वह कभी भी रिपोर्टिंग से पीछे नहीं हटे।

त्रिलोक जी के ज्ञानवर्धक और बेमिसाल लेखन का राज यह रहा कि उन्होंने खान अब्दुल गफ्फार खान, जाकिर हुसैन, इंदिरा गांधी,सर शिवसागर रामगुलाम,ज्ञानी जेल सिंह, राजीव गांधी, इंद्रकुमार गुजराल, कांशीराम, पीलू मोदी, कैप्टन अमरिंदर सिंह सहित राजनीति के कई दिग्गजों के साथ कई मुलाकातें की और इनके संस्मरणों के रूप में पाठकों को अनमोल ज्ञानवर्धक जानकारी उन्होंने उपलब्ध कराई। उनका यह योगदान पत्रकारिता की नयी पीढ़ी के लिए वरदान की तरह है। मैं स्वयं भी उनमें से एक हूँ।

आदरणीय त्रिलोक दीप जी ने देश की राजनीति की महत्वपूर्ण घटनाओं को तो एक पत्रकार के नाते रिपोर्ट किया ही, अद्भुत बात यह है कि इससे भी ज्यादा, उन्होंने दुनियाभर के देशों की यात्राएं करके अपने वृतांत और रिपोर्टिंग से पाठकों को दांतो तले उंगली चबाने को मजबूर कर दिया है। ऐसी जीवंत और विस्तृत जानकारी इनकी यात्रा वृतांत श्रंखलाओं में दर्ज है कि सहसा यकीन ही नहीं होता कि कोई इतना सुंदर लिख सकता है। पढ़ो तो ऐसा लगता है कि वही भृमण कर रहे हैं। उन मौकों, स्थानों पर हम भी मौजूद हैं। लाईव रिपोर्टिंग।

मेरा सौभाग्य है कि मैं विगत 25-26 वर्षों से त्रिलोक दीप जी को जानता हूँ, उनका स्नेह और मार्गदर्शन मिलता रहा है। इतने बड़े व्यक्तित्व के मालिक हैं लेकिन एकदम सहज, सरल एवं सौम्य। उनको समझने एवं उनके किये हुए काम को जानने के लिए सबसे srl है उनके फेसबुक अकाउंट की सैर कर लीजिए। यकीन से कह सकता हूँ कि अगर आप में देश-दुनिया को जानने-समझने की जिज्ञासा है, भूख है, तो आप कई दिन तक उनके फेसबुक पेजों को पढ़ते रहेंगे।

कैसे बड़े बड़े लोगों का साक्षात्कार किया जाता है, सहजता से निर्विवाद रहते हुए, ईमानदार बने रहकर पत्रकारिता के क्षेत्र में झण्डे गाड़े जाते हैं ये समझने के लिए किताब संस्मरणनामा': त्रिलोक दीप

समय,समाज और सरोकार की पत्रकारिता पढ़ डालिए। संपादक: Abhishek Kashyap प्रकाशक:इंडिया टेलिंग)शीर्षक से एक बेहद महत्वपूर्ण पुस्तक आयी है।300 रुपये मूल्य की 271 पेज की इस पुस्तक को पाँच खण्डों में बांटा गया है।

पहला खंड 'दस्तावेज' है। इसमें अज्ञेय का एक अब तक अप्रकाशित साक्षात्कार है।दूसरा खण्ड 'अग्रजों की स्मृतियां' हैं।इसमें अज्ञेय, रघुवीर सहाय,सर्वेश्वरदयाल सक्सेना,भीष्म साहनी और मनोहरश्याम जोशी से जुड़े संस्मरण हैं। तीसरा खण्ड 'शब्द संसार के सहयात्री' है जिसमें राजेन्द्र माथुर, उदयन शर्मा, रमेश बत्तरा, सुदीप, सुरेन्द्रमोहन पाठक, प्रयाग शुक्ल, शेखर गुप्ता आदि से जुड़े संस्मरण हैं। चौथा ' राजपथ से गुजरते हुए' एक बड़ा खण्ड है।

उम्र के इस पायदान (88 वर्ष) पर भी त्रिलोक दीप जी ज्ञान की जगमगाहट बिखेर रहे हैं। सतत सोशल मीडिया पर सक्रिय हैं। ईश्वर उन्हें शतायु बनाये यही मंगल कामना है।

पत्रकारिता लोक का एक दीप

राजेश बादल

भारतीय हिंदी पत्रकारिता के इतिहास में बीते पचास बरस बड़े ख़ास हैं। इस दरम्यान मुल्क़ ने पत्रकारिता का स्वर्णकाल और पतनकाल का सामना किया है।शिखर पर सरोकारों भरी पत्रकारिता देखी है और अभिव्यक्ति के लिए संघर्ष भी किया है।मंडी में ख़बरों के दाम लगते पाए हैं तो सियासी गलियारों में भटकी हुई कलम भी हमारे सामने है। गुज़िश्ता आधी सदी में से सैंतालीस साल मेरे भी गुज़रे हैं और गर्व से कह सकता हूँ कि हमारी पीढ़ी ने अपने पेशे में ऐसे संपादकों के साथ काम किया है ,जो अपने आप में संस्थान थे। डॉक्टर धर्मवीर भारती, हीरानंद सच्चिदानंद वात्सायन अज्ञेय, रघुवीर सहाय, राजेंद्र माथुर, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना और सुरेंद्र प्रताप सिंह ऐसे ही कुछ नाम हैं।लेकिन, त्रिलोकदीप एक ऐसी ख़ुश्बू हैं, जिनसे पत्रकारिता का गुलशन साठ वर्षों से लगातार महक रहा है।

बात 1980-81 की है। उन दिनों मैं नई दुनिया,इंदौर में सहायक संपादक के पद पर काम कर रहा था।हमारे लिए दिनमान और रविवार साप्ताहिक के रूप में हिंदी पत्रकारिता की दो मिसालें थीं।हमारी नौजवान पीढ़ी प्रति सप्ताह इन पत्रिकाओं का ऐसे इंतज़ार करती थी ,जैसे सदियों से कोई विरही अपनी प्रेमिका का करता रहा होगा।दोनों पत्रिकाओं के लेखक और संपादक हमारे आइकॉन होते थे।दिनमान में पहले अज्ञेय, रघुवीर सहाय और त्रिलोक दीप ऐसे ही थे। दिनमान से एक दीवाने पत्रकार जैसा मेरा रिश्ता था।हर हफ्ते जैसे ही दिनमान इंदौर के उस एजेंट के पास आता ,पहली प्रति मेरे लिए सुरक्षित हो जाती थी। फिर एक सप्ताह तक यह नायाब पत्रिका मेरे जिस्म का हिस्सा बनी रहती। उन दिनों समाचार पत्रिकाओं के लिए आकर्षण इतना गहरा था,जिसे आज की पीढ़ी नहीं समझ सकती। नई दुनिया के प्रधान संपादक राजेंद्र माथुर ने मुझे रविवार और दिनमान में कभी कभी लिखने की अनुमति दी थी।अगर मुझे ठीक ठीक याद है तो 1982 या 1983 में मेरी पहली रपट दिनमान में प्रकाशित हुई थी। एक दलित आई पी एस के साथ ऊँची जाति के एक आई ए एस ने सार्वजनिक रूप से उसकी जाति पर हमला बोलते हुए अपमानित किया था। इस घटना के आधार पर मैंने अखिल भारतीय सेवाओं में व्याप्त इस बीमारी का विश्लेषण किया था। वह रिपोर्ट बहुत चर्चित हुई थी। उसके बाद त्रिलोकदीप जी ने मुझे उस रपट की तारीफ़ में एक पत्र लिखा था। अपने मित्रों को उनका यह पत्र मैं कई दिन तक दिखाता रहा था। इसके बाद दिनमान से मेरा लेखक - पत्रकार के रूप में रिश्ता बन गया। त्रिलोकदीप जी की चिट्ठियाँ मेरा हौसला बढ़ाती रहीं।

उन्होंने मेरी एक रपट भोपाल गैसकांड के बाद एक वरिष्ठ नौकरशाह के बयान से उठे विवाद के बारे में छापी थी। उस अफसर ने गैसपीड़ितों के बारे में बड़ी क्रूर और असंवेदनशील टिप्पणी की थी। उन्होंने कहा था कि कुछ मौतों से शहर नहीं मर जाता। दिनमान में मेरी रिपोर्ट प्रकाशित होने के बाद उस नौकरशाह की बड़ी किरकिरी हुई थी। त्रिलोकदीप जी ने उस वक़्त भी मेरा हौसला बढ़ाया था। एक युवा पत्रकार के लिए इससे बड़ी बात और क्या हो सकती थी।आज कितने संपादक हैं ,जो नए पत्रकारों के लेखन को संरक्षण प्रदान करते हैं ? इसके बाद मैंने 1985 में नवभारत टाइम्स ज्वाइन किया।मैं वहाँ मुख्य उप संपादक था।इस तरह मैं उसी संस्थान में काम कर रहा था,जो दिनमान का प्रकाशन करता था। इसके बाद राजस्थान से

मेरे एयर पैकेट दिनमान जाते रहे और मेरे आलेख दिनमान में छपते रहे। त्रिलोकदीप जी वरिष्ठ सहकर्मी के रूप में मुझे तराशने का काम एक शिल्पी की तरह करते रहे।हमारे दौर के पत्रकारों के वे मार्गदर्शक थे।उन्हें शायद पता नहीं होगा ,लेकिन मैं कह सकता हूँ कि वे अपनी तिलिस्मी कलम से हमें सम्मोहित कर देते थे और हम उनकी शैली के क़ायल थे। मुझे इस बात का हमेशा मलाल रहेगा कि मेरी नियति ने उनके सानिध्य में काम करने का अवसर नहीं दिया। पर, मैं कह सकता हूँ कि उनकी अदबी अदा से हरदम कुछ न कुछ सीखता ही रहा। त्रिलोकदीप जी के संस्मरण अदभुत हैं। वे अपने दौर का एक विलक्षण दस्तावेज़ हैं। गर्व की बात है कि त्रिलोकदीप जी सदी के सुबूत की तरह हमारे सामने हैं।उन्होंने किशोर आँखों से अविभाजित हिन्दुस्तान को महसूस किया है और बँटवारे का भयावह मंज़र भी देखा है।बरतानवी हुक़ूमत के चंगुल से मुल्क़ की आज़ादी के वे साक्षी हैं। इसके बाद भारत के सिफ़र से शिखर तक का सफ़र उनकी आँखों के सामने है। वर्तमान में कितने लोग ऐसे होंगे, जो चलते फिरते इतिहास की तरह हमारे बीच उपस्थित हैं।अफ़सोस ! आज की पीढ़ी हमारे इन पूर्वजों के लेखन और अनुभव से लाभ लेने में दिलचस्पी नहीं दिखाती। पत्रकारिता पढ़ाने वाले संस्थानों के पाठ्यक्रम इनको एक रोबोट पत्रकार तो बनाते हैं, उन्हें सरोकारों और मूल्यों के प्रति समर्पित पेशेवर नहीं बनाते। इस नज़रिए से मौजूदा कालखंड संक्रमण काल का सामना कर रहा है।नए पत्रकारों को समझना होगा कि अज्ञेय ,राजेंद्र माथुर ,धर्मवीर भारती,रघुवीर सहाय और त्रिलोकदीप जैसे संपादक - पत्रकार बार बार नहीं आते।

राजेश बादल, वरिष्ठ पत्रकार, फ़िल्मकार और गांधीवादी विचारक, मैनेजिंग एडिटर ,न्यूज़व्यूज़ डॉट कॉम

पत्रकार, रचनाकार श्री त्रिलोकदीप पर विशेषांक निकालने पर संपर्क भाषा भारती को बधाई - स्वामी सुमेधानंद सरस्वती, सांसद, सीकर

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हो रही है कि पत्रकार, रचनाकार श्री त्रिलोकदीप के पत्रकारिता जीवन पर मासिक पत्रिका संपर्क भाषा भारती विशेषांक निकाल रही है। मेरे सीकर जिले के पिपराली स्थित 'वैदिक आश्रमÓ पर श्री त्रिलोकदीप का कई बार पत्रकार स्व. कमलजी माथुर के साथ आना हुआ है। एक पत्रकार के रूप में श्री त्रिलोकदीप ने देश में अपना नाम किया है। मुझे भी उनके विचारों में बारे में नजदीकी से जानने का अवसर मिला है। इनके व्यक्तित्व के बारे में सुना था और आश्रम में मिलने पर उसी के अनुरूप मिले भी। जब भी यहां आते हैं उसी शालीनता व विनम्रता के साथ मुलाकात बातचीत होती है। मुलाकात के दौरान पत्रकार के रूप में वे देश व समाज की चिंता व्यक्त करते है ठीक उसी तरह धार्मिकता के साथ जुड़ाव होने पर धर्म पर भी चर्चा करते हैं। श्री त्रिलोकदीप के विचारों में धार्मिकता का नाता साफ नजर आता।

पत्रकारिता के साथ श्री त्रिलोकदीप संत समाज के प्रति भी सकारात्मक रूख रखते हैं। समाज सेवा के कार्य भी अपना कर्तव्य मानकर करते हैं। पत्रकारिता, धार्मिकता व समाज सेवा के प्रति उनकी जो भावना रही है, उसी के कारण वे हमेशा पत्रकारों में एक अलग ही श्रेणी में भी रहे हैं। श्री त्रिलोकदीप ने 'दिनमान' सहित देश के बड़े-बड़े समाचार पत्रों में अपने लेखन के दम पर संसार को शिक्षा देकर अनुशासन सिखाया वो प्रेरणादायी है। वे 'संडे मेल' पत्र के कार्यकारी संपादक भी रहे हैं।

श्री त्रिलोकदीप ने डालमिया सेवा ट्रस्ट में उद्योगपति संजय डालमिया के सहयोग से सेवा के जो कार्य किये हैं, वो भी जरूरतमंदों की सच्ची सेवा है। इन सेवा कार्यों से शेखावाटी के भी जरूरतमंद लाभांवित हुए हैं। ये चिंतक व चिंतन करने वाले हैं। इनके पत्रकारिता के साथ समाज सेवा व धार्मिकता में दिये जा रहे सहयोग से सभी भली भांति परिचित हैं।

मैं संपर्क भाषा भारती पत्रिका परिवार को धन्यवाद व बधाई देता हूँ कि पत्रकार, समाजसेवी श्री त्रिलोकदीप के जीवन पर विशेषांक प्रकाशित कर रहा है। मेरी शुभकामनाएं।

स्वामी सुमेधानंद सरस्वती, सांसद, वैदिक आश्रम, पिपराली (सीकर-राज.)

पत्रकारिता के बेमिसाल दिग्गज त्रिलोक दीप

प्रदीप सरदाना

त्रिलोक दीप पत्रकारिता की दुनिया के एक ऐसे दिग्गज हैं, जिनका लेखन तो बेमिसाल रहा ही है। साथ ही वह ऐसे अच्छे दोस्त भी हैं जिन्हें 'यारों के यार' कहा जाता है। मुझे खुशी है कि मैं मित्रवर, भाई त्रिलोक दीप को करीब 45 बरसों से जानता हूँ। उनसे मेरी पहली मुलाक़ात 1978 में हुई थी। पत्रकारिता में कुछ करने की ललक, मेरे बचपन में ही मेरे मन में घर कर गयी थी। दरियागंज, दिल्ली से प्रकाशित उस दौर के प्रसिद्द साप्ताहिक 'सेवाग्राम' से मैंने 13 वर्ष की आयु में ही अपना पत्रकारिता जीवन शुरू कर दिया था। उसके बाद अपने गुरु माननीय डॉ हरिवंश राय बच्चन के आशीर्वाद और मार्ग दर्शन से मैंने 17 वर्ष की आयु में, अपने संपादन में अपना एक अखबार 'पुनर्वास' शुरू कर दिया था। उसी दौरान एक दिन दरियागंज में ही स्थित टाइम्स ऑफ इंडिया की पुरानी बिल्डिंग की सीढ़ियाँ चढ़कर मैं वहाँ पहुँच गया।

यूं त्रिलोक दीप जी का नाम मैं पहले से सुन चुका था। वह भी अज्ञेय जी के श्रीमुख से। असल में बहादुरशाह स्थित टाइम्स हाउस के नए भवन में मैंने 1976 के समय से ही चक्कर लगाना शुरू कर दिया था। तब अक्षय कुमार जैन 'नवभारत टाइम्स' के संपादक थे। कुछ समय बाद ही जब जैन साहब सेवानिवृत हुए तो वहाँ अज्ञेय जी संपादक बनकर आ गए। तब मैं एक दिन अपने एक लेख को देने 'नवभारत टाइम्स' गया तो मुझे ब्यूरो चीफ गौरी शंकर जोशी जी से मिलाया गया। मैं जोशी जी के साथ बात कर ही रहा था कि अचानक उनके कमरे का दरवाजा खुला। जोशी जी ने दरवाजे की ओर सामने देखा तो वह मुस्कुराते हुए अभिवादन की मुद्रा में अपनी सीट से खड़े हो गए।

मैंने इस हलचल पर पीछे मुड़कर देखा तो मैं हतप्रभ रह गया मेरे पीछे अज्ञेय जी खड़े थे। यह देख मैं भी झटपट खड़ा हो गया। लेकिन अज्ञेय जी ने अपनी मंद मुस्कान और शांत भाव से कहा- ''आप बैठिए, बैठिए।'' लेकिन जब अज्ञेय जी सामने खड़े हों में उनके सामने कैसे बैठ सकता था।

अज्ञेय जी तब जोशी जी को किसी स्टोरी को लेकर कुछ बताने लगे। उसी बातचीत में उन्होंने जोशी जी को कहा कि त्रिलोक दीप ने भी 'दिनमान' में एक स्टोरी दी है उसे भी देख लेना। तभी त्रिलोक दीप नाम से मेरा पहला

परिचय हुआ। हालांकि इस घटना के करीब एक साल बाद जब मैं टाइम्स की 10 दरियागंज बिल्डिंग में रघुवीर सहाय जी से मिलने गया तो मेरी इच्छा त्रिलोक जी से मिलने की पहले से ही थी। एक तो इसलिए कि उनकी स्टोरी की चर्चा अज्ञेय जैसे साहित्यकार और संपादक ने की थी। दूसरा मुझे त्रिलोक दीप नाम बहुत अच्छा लगा। प्रदीप होने के नाते मैं भी दीप हूँ। इसलिए भी इस नाम के प्रति मेरा आकर्षण हुआ।

मैंने वहाँ किसी से पूछा कि त्रिलोक दीप कहाँ बैठते हैं तो उसने सामने की ओर इशारा करते हुए कहा कि वो बैठे हैं उधर। उस व्यक्ति के इशारा करते देख त्रिलोक जी ने समझ लिया कि कोई उनसे मिलने आ रहा है। तो मेरे उनके पास पहुँचने तक वह मुझे विस्मय दृष्टि से देखते रहे। मैंने उन्हें अभिवादन करते हुए कहा - ''आप तीनों लोकों के दीप हैं और मैं सिर्फ इसी लोक का दीप हूँ, प्रदीप, प्रदीप सरदाना।'' मेरी यह बात सुन त्रिलोक दीप ज़ोर से खिलखिला उठे और बोले ओहहहह...आओ बैठो। तब तक 'नवभारत टाइम्स' सहित कुछ अन्य पत्र पत्रिकाओं में भी मेरे कई लेख प्रकाशित हो चुके थे। इसलिए उन्होंने कहा हाँ आपको मैंने पढ़ा है। फिर मेरे से बात करते हुए मेरे बारे में जानने लगे। जब मैंने उन्हें बताया कि आपका नाम मैने अज्ञेय जी से सुना था। उसके बाद एक साल से आपको 'दिनमान' में पढ़ता रहता हूँ। आप राजनीति के साथ कला, संस्कृति पर भी जिस तरह लिख रहे हैं। इससे आप राजनीति, कला और संस्कृति जैसे तीनों लोकों के दीप तो वैसे ही हो गए।

इस पर वह हँसते हुए बोले –बस जो काम हो जाता है वह कर लेते हैं। अज्ञेय जी तो मेरे गुरु रहे हैं। वही मुझे पत्रकारिता में लाये। पत्रकारिता का पहला पाठ उन्हीं ने सीखाया।

इसके बाद त्रिलोक जी से मुलाकातें होने लगीं। कभी कभार 'दिनमान' में भी मुझे लिखने के मौके मिले तो कभी 'सारिका' और 'पराग' में भी। लेकिन जब दरियागंज से ही टाइम्स की 'वामा' और 'खेल भारती' पत्रिकाएँ निकलनी शुरू हुईं तो वहाँ मेरा आवागमन और भी बढ़ गया। उधर 1982 में 'नवभारत टाइम्स' में बतौर उप संपादक मैंने कुछ समय नौकरी भी की। फिर बाद में टाइम्स समूह के लगभग विभिन्न प्रकाशन में मेरे कई नियमित स्तम्भ शुरू होने से टाइम्स परिवार से मेरा नाता और भी मजबूत हो गया।

देखा जाये तो 10 दरियागंज का टाइम्स हाउस तब पत्रकारिता और साहित्य की दुनिया के दिग्गज और चर्चित हस्ताक्षर का एक महाकुम्भ था, जहां जाने पर अनुपम सुख मिलता था। एक ही छत के नीचे अवध नारायण मुद्गल, कन्हैया लाल नन्दन, हरिकृष्ण देवसरे, मृणाल पांडे और योगराज थानी जैसे प्रख्यात संपादक। साथ ही त्रिलोक दीप, महेश्वर दयाल गंगवार, जवाहर लाल कौल, प्रयाग शुक्ल, आलोक मेहता, उदय प्रकाश, महेश दर्पण, रमेश बतरा, और सुरेश उनियाल जैसे पत्रकारिता,कला और साहित्य की दुनिया के चर्चित चेहरे भी यहीं विराजमान थे। जिनमें से कुछ यहीं मेरे दोस्त भी बन गए।

हालांकि बाद में टाइम्स के इस भवन को किसी की ऐसी नज़र लगी कि यह धीरे धीरे वीरान होने लगा। 'सारिका', वामा','खेल भारती','पराग' बंद होती गईं। 'दिनमान' में भी नन्दन जी के बाद पहले सतीश झा संपादक बने और फिर घनश्याम पंकज ने यह ज़िम्मेदारी संभाली।

नन्दन जी तब 'दिनमान' से 'नवभारत टाइम्स' की रविवारीय पत्रिका के संपादक बन 7 बहादुरशाह जफर मार्ग आ गए थे। लेकिन त्रिलोक दीप 'दिनमान' के अंतिम दिनों तक वहीं रहे। बाद में जब नन्दन जी 'संडे मेल' के संपादक बने तो त्रिलोक दीप 'संडे मेल' में कार्यकारी संपादक बन गए। इस जोड़ी ने 'दिनमान' के बाद 'संडे मेल' को भी पत्रकारिता में एक नया शिखर दिलाया। जब 'संडे मेल' का कार्यालय कस्तूरबा गांधी मार्ग पर मरकैनटाइल हाउस आया तो वहाँ भी त्रिलोक दीप से कुछ मुलाकातें हुईं। लेकिन 1995 के बाद त्रिलोक दीप से कुछ बरसों तक कोई मुलाक़ात नहीं हुई।

उनसे फिर से बातचीत का सिलसिला करीब 10-12 बरस पहले फिर से तब शुरू हुआ जब उनका 'दैनिक ट्रिब्यून' में संस्मरणों का एक स्तम्भ शुरू हुआ। क्योंकि मैं 'दैनिक ट्रिब्यून' की शुरुआत से ही वहाँ विभिन्न स्तम्भ लिख रहा था। उन दिनों भी मेरे अपने संस्मरणों का एक नया स्तम्भ 'फ्लैशबैक' ट्रिब्यून में शुरू हुआ था। इससे एक ही समय में हम दोनों के संस्मरण के स्तम्भ 'दैनिक ट्रिब्यून' में चलने से हमारी परस्पर चर्चाएं फिर होने लगीं। फेसबुक और व्हाट्सएप ने भी हमारी दूरियाँ कम कर दीं। साथ ही 2015 से प्रेस क्लब में भी लंबे अरसे बाद हमारी कुछ मुलाकातें होने लगीं।

त्रिलोक दीप के मैंने उस दौर को भी देखा जब वह राजनीति या पंजाब को लेकर एक से एक बड़ी स्टोरी करके तूफान सा ला देते थे। आज कई बार कुछ टीवी पत्रकार खतरों से खेलते हुए कोई सनसनीखेज या बड़ी स्टोरी करते हैं तो उन पत्रकारों का नाम सुर्खियों में आ जाता है। लेकिन त्रिलोक दीप 1980 के दशक में आतंकवाद के साये में घिरे पंजाब में जिस साहस और जिन खतरों से खेलकर स्टोरी करते थे। आज उसकी कल्पना सहज नहीं।

मुझे 31 अक्तूबर 1984 का वह दिन भी याद है जब इंदिरा गांधी की हत्या के बाद सफदरजंग-अकबर रोड से तीनमूर्ती भवन तक इतनी भीड़ जमा हो गयी थी कि वहाँ चलना तक मुश्किल था। सिख समुदाय के प्रति एक वर्ग का आक्रोश तब सातवें आसमान पर था। तभी मेरी निगाह वहाँ त्रिलोक दीप पर पड़ी। इतनी बड़ी भीड़ में वह अकेले सिख थे और बिना किसी खौफ के रिपोर्टिंग कर रहे थे। मैंने देखा मेरे आसपास के कुछ लोग त्रिलोक को देख कुछ फब्तियाँ कस रहे थे। मैंने सोचा उन तक पहुँच कहूँ कि आप यहाँ से चले जाओ। इतनी भीड़ इस समय क्या कर उठे यह सोच के कलेजा ही काँप रहा था। लेकिन अधिक भीड़ के कारण मैं उन तक नहीं पहुँच सका। कुछ देर बाद त्रिलोक, पुलिस अधिकारी गौतम कौल और अन्य पुलिस कर्मियों के बीच वहाँ से जाते दिखे तो थोड़ी तसल्ली हुई।

इधर आज जब त्रिलोक दीप की लेखन-पत्रकारिता और सोशल मीडिया पर सक्रियता देखता हूँ तो उन्हें देख दिल बाग बाग हो उठता है। खुश हूँ अब वह 88 साल के हो गए हैं। लेकिन उम्र की परवाह किए बिना जहां वह कहीं ना कहीं कुछ ना कुछ लिखते रहते हैं। चाहे फेस बुक पर ही सही। साथ ही दोपहर को प्रेस क्लब आकर दोस्तों से मिलना भी वह नहीं भूलते। पहले तो वह सप्ताह में दो तीन दिन प्रेस क्लब आ जाते थे। लेकिन पीछे स्वास्थ में आई कुछ समस्या के कारण अब वह कभी कभार ही प्रेस क्लब आते हैं। उनके पुत्र उनको वहाँ लाने-ले जाने की ज़िम्मेदारी शिद्दत से निभाते हैं। हाँ वह जब भी प्रेस क्लब आते हैं तो अपने हंसी मज़ाक और कुछ पुरानी यादों की बातों से माहौल को खुशनुमा बना देते हैं। हालांकि मैं भी प्रेस क्लब कभी कभार ही जाता हूँ। लेकिन जब वहाँ उनसे मुलाक़ात होती है तो बहुत अच्छा लगता है।

अभी हाल ही में भी उनसे जब प्रेस क्लब मुलाक़ात हुई तो वह वहाँ से निकल रहे थे और मैं वहाँ भीतर जा रहा था। लेकिन मुझे देख वह कुछ देर रुक गए। उनके बेटे ने हमारे साथ फोटो भी लिए। यूं फोन पर हमारी अक्सर बात होती रहती है। जबकि व्हाट्सएप पर तो लगभग रोज ही हमारी गुड मॉर्निंग हो ही जाती है।

□□□

पत्रिका में प्रकाशनार्थ रचनाएँ मौलिक एवं अन्यत्र प्रकाशित न हुई हों । रचनाओं को ईमेल माध्यम से केवल मंगल फॉन्ट में ही टाइप करके भेजा जाय। वर्तनी दोषयुक्त रचनाओं को स्वीकार नहीं माना जाएगा। रचना भेजने से पहले उसकी अशुद्धियों को स्वयं परख लें।

तुम्हारे आलेख का इंतज़ार है अतुल.....

त्रिलोक दीप जी का ये वॉट्सएप संदेश पढ़ कर अच्छा लगा। लेकिन आलेख कैसे भेजूं? दरअसल मैं अपने भावों को व्यक्त करने में सहज महसूस नहीं करता। जब मेरे पूज्य पिताजी स्व. महेश्वर दयालु गंगवार जी की स्मृति में परिवार ने एक पुस्तक निकालने का निर्णय किया तो उसके लिए भागदौड़ की जिम्मेदारी मेरे पास ही थी। चाचा श्री राजेश्वर गंगवार और पिताजी के मित्र डॉ. सुधांशु चतुर्वेदी जी ने इसके लिए लेखकों का चयन, सामग्री जुटाने और पुस्तक के संपादन का जिम्मा उठाया। परिवार के सारे सदस्यों और उनके करीबी मित्रों ने पिताजी के साथ जुड़ी अपनी यादों को सांझा किया, लेकिन मैं कुछ नहीं लिख पाया। ऐसा नहीं था कि मेरे पास कुछ कहने के लिए नहीं था। लेकिन बस... सोचता ही रह गया। ऐसा बहुत कुछ था जो मैं अपने पिता जी को कहना चाहता था, लेकिन उनके जीवन में उनसे नहीं कह पाया और जब बाद में भी एक मौका मिला तो भी चुप ही रह गया। दीप जी का ये संदेश आये बहुत समय हो गया है। पता नहीं अब इस आलेख की आवश्यकता भी है कि नहीं। लेकिन इस बार मैं चुप नहीं रहना चाहता। दीप अंकल को मैं तब से जानता हूं जब मुझे व्यक्ति के बारे में कोई समझ नहीं थी। पिता जी की वजह से मेरा बचपन पत्रकारिता के कई दमदार शख्सियतों के सानिध्य में बीता था। ऐसे ही एक प्यारी सी शख्सियत के मालिक हैं, दीप जी जिनके साथ पिता जी दिनमान में काम किया करते थे। दीप जी पत्रकारिता के उन स्तंभो में से एक हैं जब भी भारतीय परिपेक्ष्य में सार्थक पत्रकारिता की चर्चा होगी तो उनका नाम अवश्य लिया जायेगा। बचपन में जब भी पिता जी के दफ्तर हम सब भाई-बहन जाते थे तो हमारे लिए पिकनिक ही होती थी। सब अंकल आंटी हमें टॉफी-चॉकलेट से बहलाते थे। दीप अंकल भी उनमें से एक थे। बाकी एक आकर्षण चाचा जी होते थे जो वहीं पराग पत्रिका में कार्य करते थे। उनसे पराग का नया अंक पढ़ने के लिए मिल जाता था। पिता जी को दीप जी पर बहुत भरोसा था। दिनमान के बाद संडे मेल में भी वह उनके साथ काम करने के लिए गए थे। पिताजी की एक आदत थी। वह अपने काम और मित्रों के साथ संबंधो को घर पर नहीं लाते थे। पिताजी की राय अपने मित्रों के बारे में व्यक्तिगत रुप से कैसी भी हो, संबंधो में कोई उतार चढ़ाव हो, पर परिवार में वह किसी बात को शेयर नहीं करते थे। हो सकता है मां से करते हों। पर मैं स्वयं अपने में रहता था, इसलिए मेरे साथ तो ऐसे संवाद होते ही नहीं थे। पर मुझे जहां तक लगता है कि पिताजी दीप जी से परिवार की कई बातें शेयर करते थे। मुझे लेकर वो चिंतित थे। हमारे बीच की संवादहीनता को वह अपने मित्रों के माध्यम से दूर करने का प्रयास करते थे। कौल अंकल, जितेंद्र गुप्त अंकल और दीप अंकल ऐसे ही माध्यम थे। दीप अंकल और मेरे बीच अक्सर बातें होती हों ऐसा नहीं है। लेकिन उनको मेरी चिंता रहती है। ये बात पिताजी के जाने के बाद मुझे अच्छे से समझ आती है। प्रैस क्लब के चर्चित कोने में जहां वह अपने मित्रों के साथ अक्सर मिलते हैं, उनसे मेरी मुलाकात होती है तो उनका आशीर्वाद हमेशा मिलता है। साथ ही वह कहते हैं कि तुम अच्छा कर रहे हो। मुझे अच्छा लगता है। घर परिवार का हाल-चाल पूछते हैं। मेरे बारे में उनका अपडेट रहना मुझे अच्छा लगता है। ऐसा लगता है कि पिताजी का साया अभी भी सर पर बना हुआ है।

पिताजी पर पुस्तक निकालते समय उनसे कई बार मिलना हुआ। वह ना केवल पिताजी से संबंधित अपने संस्मरणों को कलमबद्ध करने के लिए तैयार हुए, उन्होंने दिनमान के कुछ पुराने अंको से पिताजी की कलम से लिखे लेखों,रपटों को भी साझा किया। उनके द्वारा पिताजी के बारे में लिखे संस्मरण से पिताजी के व्यक्तित्व के कई नए पहलुओं का पता चलता है। इसके लिए हमारा परिवार सदैव दीप जी का आभारी रहेगा। दीप जी के लेखन के बारे में कुछ कहने के लिए मैं बहुत ही छोटा हूं। लेकिन एक बात अवश्य कहना चाहूंगा, अनदेखे को अपनी लेखनी के माध्यम से दिखाना, अमूर्त को मूर्त करना उनकी विशेषता है। आज भी फेसबुक पर आपके संस्मरण पढ़ते हुए पाठक मंत्रमुग्ध हो जाते हैं। नई पीढ़ी के लोगों को जो पत्रकारिता में आना चाहते हैं दीप जी को अवश्य पढ़ना चाहिए। आपके बारे में बहुत कुछ कहा जा सकता है, बहुत कुछ लिखा जा सकता है पर मेरी अपनी सीमाएं हैं।भावों को शब्दों में पिरोने में कच्चा हूं। आप सदैव स्वस्थ रहें। प्रसन्न रहें।

अतुल गंगवार

हिंदी पत्रकारिता के प्रमुख आधार स्तंभ हैं त्रिलोक दीप

शीला पंत

यह कहना अतिशयोक्तिपूर्ण नहीं होगा कि "वरिष्ठ पत्रकार त्रिलोक दीप हिंदी पत्रकारिता के प्रमुख आधार स्तंभ हैं।दीप जी का पत्रकारिता का सफ़र दिनमान पत्रिका से आरंभ हुआ जो बहुत प्रेरणदायक और दिलचस्प रहा है जिसका उल्लेख स्वयं दीप जी ने समय-समय पर अपने "संस्मरणनामा" एवं कई अन्य आलेखों में किया है।दिनमान की यदि बात की जाय तो यह कहना तर्कसंगत होगा कि "तत् कालीन हिंदी समाचार एवं साहित्य प्रमुख पत्रिका दिनमान ने पत्रकारिता के जगत् में जो स्थान हासिल किया था वह किसी अन्य प्रकाशन को नहीं मिल पाया।बाद में "रविवार पत्रिका " भी बेहद लोकप्रिय हुई परंतु इसका सफ़र बहुत छोटा रहा।बात अगर दिनमान की हो तब इसके संस्थापक संपादक अज्ञेय का नाम सहज ही याद आने लगता है।साथ ही इसके संपादक मंडल में सम्मिलित रहे मनोहर श्याम जोशी , रघुवीर सहाय , श्रीकान्त वर्मा , सर्वेश्वरदयाल सक्सेना , कन्हैयालाल नन्दन , घनश्याम पंकज प्रयाग शुक्ल , जसविंदर (बाद में बीबीसी) के साथ "त्रिलोक दीप" जिन्हें हम "दीप जी" के नाम से जानते हैं ।

यह ध्यान देने योग्य है कि जहाँ एक ओर इन में से बहुत सारे पत्रकार हिन्दी साहित्य की किसी न किसी विधा (मुख्यतः कविता) से जुड़े रहे उनमें से बहुत कम ऐसे थे जो सीधे-सीधे पत्रकारिता से ही जुड़े थे।दीप जी ऐसे ही पत्रकार हैं पर बात इतनी सहज नहीं।लगभग साठ वर्ष से अधिक के अपने मुख्य धारा राष्ट्रीय पत्रकारिता के वृहत् अनुभव से पहले दीप जी के जीवन की संघर्ष-गाथा अपने आप में एक रोचक और

प्रेरक प्रसंग है।कैसे भारतीय संसद से जुड़े एक टाइपिस्ट के रूप में इन पर स्वयं अज्ञेय जी की पारखी नज़र पड़ी और कैसे उन्होंने दीप जी को सीधे दिनमान से एक पदेन पत्रकार के रूप में जोड़ा और स्वयं विधिवत् प्रशिक्षित भी किया ।आज अपनेआप में यह एक आधुनिक हिंदी पत्रकारिता के गौरवशाली इतिहास का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण अंश है ।

दीप जी ने दिनमान के बाद हिंदी के विशिष्ट साप्ताहिक अख़बार संडे मेल और दैनिक समाचार मेल (अपराह्न) के कार्यकारी संपादक का पद सँभाला।उल्लेखनीय है कि संडे मेल की साप्ताहिक पत्रिका के साहित्य और संस्कृति खंड की ख्याति अपनी समकालीन जनसत्ता की रविवासरीय साप्ताहिक साहित्यिक / संस्कृति प्रधान पत्रिका के समतुल्य ही मानी जाती रही।दीप जी के पत्रकारिता के सफर की कहानी में उनके परममित्र कवि एवं कला समीक्षक प्रयाग शुक्ल के नाम का उल्लेख करना बहुत प्रासंगिक है।अभी हाल प्रमुख हिन्दी पत्रिका इण्डिया टुडे हिन्दी में प्रकाशित एक लेख में

दीप जी को उद्धृत करते बताया गया है कि हैदराबाद से कल्पना की संपादकी के दौरान ही प्रयाग शुक्ल कला मर्मज्ञ के रूप में स्थापित हो चुके थे , जो दिनमान के शुरुआत से टीम के महत्वपूर्ण सदस्य थे। त्रिलोक दीप अपनी स्मृतियों को टटोलते हुए बताते हैं कि उस समय प्रयाग जी के साथ नाटकों को देखने , कला गैलरी में पैंटर्स द्वारा पेंटिंग करने और विदेशी दूतावासों की पार्टियों का लुत्फ़ उनके भाग्य में रहा है ।रघुवीर सहाय के समय में कवि, चित्रकार विनोद भारद्वाज और नेत्र सिंह रावत के दिनमान में आने पर यह तिकड़ी बन गयी, जिनकी कला संस्कृति , अंतरराष्ट्रीय सिनेमा पर ग़ज़ब की पकड़ थी।

दीप जी की ज़िंदगी के आरंभिक जीवन के तीस साल अत्यन्त संघर्ष पूर्ण रहे ।ग्यारह अगस्त उन्नीस सौ पैंतीस में अविभाजित भारत की तहसील फालिया , ज़िला गुजरात (अब पाकिस्तान) में प्रमुख व्यवसायी अमर नाथ जी के घर में जन्मे त्रिलोक दीप जी ने ग्यारह बरस की उम्र में देश विभाजन की भीषण विभीषिका को झेला था मगर एक बार पत्रकारिता,अज्ञेय और दिनमान से जुड़ जाने के बाद दीप जी ने पलट कर पीछे नहीं देखा और क़ामयाबी की सीढ़ियाँ चढ़ते ही चले गये। अपनी पत्रकारिता के बेहद स्मरणीय सफ़र में दीप जी ने देश-विदेश के अनेक स्थानों की यात्राएँ कीं और अनेक शिष्ट मंडलों , राज नेताओं के साथ भी व्यापक भ्रमण किया।पिछले दो वर्षों में जब संपूर्ण विश्व कोविड महामारी से जूझ रहा था उन्हीं दिनों अपने अमेरिका और कनाडा प्रवास के दौरान मुझे दीप जी के बेहद रोचक महत्वपूर्ण जानकारियों से भरे संस्मरण और यात्रावृत्तांत और देश-विदेश के कई बड़े राजनेताओं, मनोरंजन के जगत् से जुड़ी बहुत लोकप्रिय हस्तियों से दीप जी की भेंट वार्ताएँ पढ़ने का सौभाग्य मिला जो हर किसी के लिये पठनीय और ज्ञानवर्द्धक है।

दीप जी की याद दहानी की एक मर्मस्पर्शी प्रस्तुति स्वयं उन्हीं के शब्दों में यहाँ उद्धृत करना आने वाली पत्रकारों की पीढ़ियों के ज्ञान संवर्धन के लिये अत्यन्त प्रासंगिक रहेगी।

"एक दिन रायपुर से गिरीश पंकज का फ़ोन आया कि भारतीय जन संचार संस्थान के महानिदेशक श्री संजय द्विवेदी आपसे संपर्क करना चाहते हैं लेकिन उनके पास आपका फ़ोन नंबर नहीं है,क्या मैं उन्हें दे दूं ।मैंने जवाब दिया,बाखुशी। उनके फ़ोन रखते ही श्री संजय द्विवेदी का फ़ोन आया ।वह चाहते थे कि 29 अप्रैल को मैं छत्तीसगढ सरकार के सूचना और जनसंपर्क अधिकारियों के लिए मीडिया और संचार पाठ्यक्रम के समापन अधिवेशन को संबोधित करूं ।मैने तुरंत हामी भर थी ।वह इसलिए कि छत्तीसगढ़ और खासतौर पर रायपुर मेरी रूह में बसता है ।मैं वहां ही पला-बढ़ा-पढ़ा हूं और रायपुर से जब भी किसी का फ़ोन आता है मैं भावुक हो जाता हूं ।रायपुर से निरंतर संपर्क बना रहे हर हफ्ते कभी रमेश नैयर तो कभी गिरीश पंकज से फ़ोन पर बात करता रहता हूँवादे के मुताबिक 29 अप्रैल को मैं समय से पहले ही संजय द्विवेदी जी के पास पहुंच गया।उन्हें अपनी दो पुस्तकें भेंट कीं : "संस्मरणनामा" और "त्रिलोक दीप का सफर"। जवाब में उन्होंने मुझे 'भारतबोध का नया समय' और "न हन्यते" पेश कीं ।बाद में हमारी बातचीत में प्रो. (डॉ.) गोविंद सिंह तथा डॉ राकेश कुमार उपाध्याय भी शामिल हो गये ।"दिनमान"और "संडे मेल" में मेरे दायित्व पर बातचीत के दौरान पुराने अंकों पर जब चर्चा हुई तो मैने उन्हें सूचित किया कि "दिनमान" के 1966 से 1989 तक तथा 'संडे मेल' के 1989 से 1995 तक के जिल्दबंद अंक मैंने धनबाद के अभिषेक कश्यप को डोनेट कर दिये हैं ।इनके अतिरिक्त मेरे हज़ारों आलेखों की कतरनें भी थीं जिन्हें मैंने बीसियों सालों से सहेज कर रखा था

दीप जी ने आगे लिखा है पत्रकार,कहानीकार और कला समीक्षक के अलावा अभिषेक कश्यप प्रकाशक भी हैं,आशा है वे मेरी लेखनी को पुस्तकाकार स्वरूप प्रदान कर मुझे अनुग्रहीत करेंगे।अब यदि मेरी निजी लाइब्रेरी को आप स्वीकार करें तो वह हाज़िर है ।उन्होंने तुरंत हामी भरते हुए प्रो. गोविंद सिंह से मेरे यहां से पुस्तकें मंगाने की व्यवस्था करने के लिए कहा ।निस्संदेह मेरी लाइब्रेरी के लिए भारतीय जन संचार संस्थान से बेहतर कोई दूसरा स्थान नहीं हो सकता।इसके लिए एक अलग अलमारी की व्यवस्था होगी, संजय द्विवेदी जी ने यह विश्वास दिलाया ।वास्तव में यह एक सुंदर पहल है जिससे पत्रकारिता से जुड़ने वाली भावी पीढ़ी को बहुत लाभ होगा ।

मुझे इस बात पर गर्व है कि "संडे मेल" साप्ताहिक समाचार पत्र , संडे मेल पत्रिका और समाचार मेल अपरांह के संपादकीय विभाग के सदस्यों में मैं भी शामिल थी और मुझे प्रधान संपादक स्व.श्री कन्हैयालाल नंदन जी और श्री त्रिलोक दीप जी के मार्गदर्शन में पत्रकारिता से जुड़ी बारीकियों को सीखने-समझने का सुअवसर मिला।मुझे "संडे मेल" की टीम में शामिल करने के लिये साक्षात्कार के दौरान दीप जी ने मुझसे एक बात कही थी ,"शीला जी पत्रकारिता में जुड़ने और आगे बढ़ने के लिये अपने कार्य के प्रति प्रतिबद्धता और समय की पावंदी दो बातों पर बहुत ध्यान देना बहुत ज़रूरी होता है, इसमें ऑफिस आने का समय तय होता है परंतु घर वापस जाने का नहीं ,यानी जब तक आपको दिया गया कार्य पूरा न हो जाय तब तक अधूरा काम छोड़ कर वापस जाना असंभव होता है "।मैंने दीप जी की इस बात को बहुत गंभीरता से लिया और इसके मर्म को समझा।मैं समझती हूँ दीप जी की यह बात केवल कैरियर में आगे बढ़ने के लिये ही नहीं बल्कि जीवन के हर मोड़ पर आने वाली चुनौतियों का सामना करने के लिये बहुत उपयोगी है।

शीला पंत : एम. फ़िल . जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय ,पत्रकारिता में देश-विदेश के सांस्कृतिक ,वैश्विक सामाजिक-जीवन, प्रेरक प्रसंगों एवं प्रकृति-पर्यावरण आदि विषयों पर सतत् लेखन ।संप्रति : सोशियल मीडिया , फ़ेसबुक में विविध विषयों पर नियमित ब्लॉगर निवास : न्यूयार्क , अमेरिका

यथा नाम – तथा गुण – पत्रकार त्रिलोक दीप

लोकेश शेखावत (जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय जोधपुर के पूर्व-कुलपति)

''कदम ऐसा चलो कि निशान बन जाए।

काम ऐसा करो कि पहचान बन जाए

यहां जिंदगी तो सभी जी लेते हैं।

मगर जिंदगी जीओ तो ऐसी कि सबके लिए मिसाल बन जाए।।''

त्रिलोक दीप जी वरिष्ठ पत्रकार और समाजसेवी के रूप में अपनी विशेष पहचान रखते हैं। 'दिनमान' टाइम्स और 'संडे मेल' से करीब तीन दशक तक वे जुड़े रहे। अनेक पत्र-पत्रिकाओं व सोशल मीडिया के जरिए आज भी लेखन व पत्रकारिता की दुनिया में अपनी 87वीं जन्म वर्षगांठ मनाकर त्रिलोक दीप जी सक्रिय भूमिका में हैं। उनके जीवन का अब तक का पत्रकारिता का सफर कई अर्थों में विशेष रहा है। मीडिया लोकतत्र का चौथा स्तंभ माना जाता है। चौथा स्तंभ सशक्त होने पर ही लोकतंत्र की सफलता निर्भर करती है। चौथे स्तंभ को सशक्त करने में पत्रकार एवं पत्रिकाओं व समाचार-पत्रों की प्रभावी निष्पक्ष भूमिका महत्वपूर्ण होती है। पत्रकार अपनी भूमिका पारदर्शी, ईमानदार व बेदाग छवि की रखता है तथा वह किसी भी प्रकार के प्रलोभनों का शिकार नहीं बनता है, तो मीडिया को सशक्त व प्रभावी रूप प्रदान करने में निश्चित रूप से सफल होता है। ऐसे आचरण के पत्रकार ही पत्रकारिता के स्वर्णिम इतिहास के रचयिता होते हैं। त्रिलोक जी ने पत्रकारिता के क्षेत्र में 'दिनमान' व 'संडे मेल' के माध्यम से अपनी खास पहचान अपने सुचितापूर्ण व स्पष्टवादी आचरण से बनाई है। नई पीढ़ी के युवा पत्रकारों ने उनके प्रेरक पत्रकारिता जीवन से प्रेरित होकर पत्रकार करियर को अपनाया है। उनका आदर्शमय पत्रकारिता जीवन सबके लिए प्रेरक रहा है, जो जो उनके जीवन सफर में उनसे जुड़े, उन्होंने पत्रकारिता के क्षेत्र में अपना नाम 'दिनमान' व 'संडे मेल' के माध्यम से रौशन किया। 'दिनमान' व 'संडे मेल' अपने समय की सशक्त, निर्भीक एवं निष्पक्ष पत्रिकाएं मानी जाती थीं। आज भी पत्रकारिता से जुड़े पत्रकार व सुधी पाठक 'दिनमान' एवा 'संडे मेल' में प्रकाशित उनके लेखों व राजनीतिक टिप्पणियों को भूले नहीं हैं एवं उनकी लेखनी के चमत्कार को सलाम करते हुए प्रेरणा प्राप्त करते हैं। उनकी पत्रकार के रूप में प्रदत्त पत्रकारिता सेवा सदैव अविस्मरणीय रहेगी।

'त्रिलोक दीप का सफर' के संपादक ने त्रिलोक जी के साहित्य, पत्रकारिता व हिंदी को विचार और संस्कार की भाषा को बनाए और बचाए रखने में लघु-पत्रिकाओंव उन जैसे साहित्यकारों एवं पत्रकारों के अभूतपूर्व योगदान को रेखांकित करते हुए सार्थक टिप्पणी प्रस्तुत की है। उन्होंने लिख है कि ''दुर्भाग्य से हिंदी को सूचनाओं और विचारों की गतिशील ऊर्जा से भरी भाषा के रूप में विकसित करने में महत्ती अवदान देने वाले, हिंदी में काम करते हुए अपना समूचा जीवन खपा देने वाले हमारे अनेक साहित्यकार, पत्रकार, हमारे मनीषी, हिंदी के वास्तविक नायक आज यातो भुला दिए गए हैं या फिर आत्ममुग्धता के मनोरोग से ग्रस्त हिंदी समाज

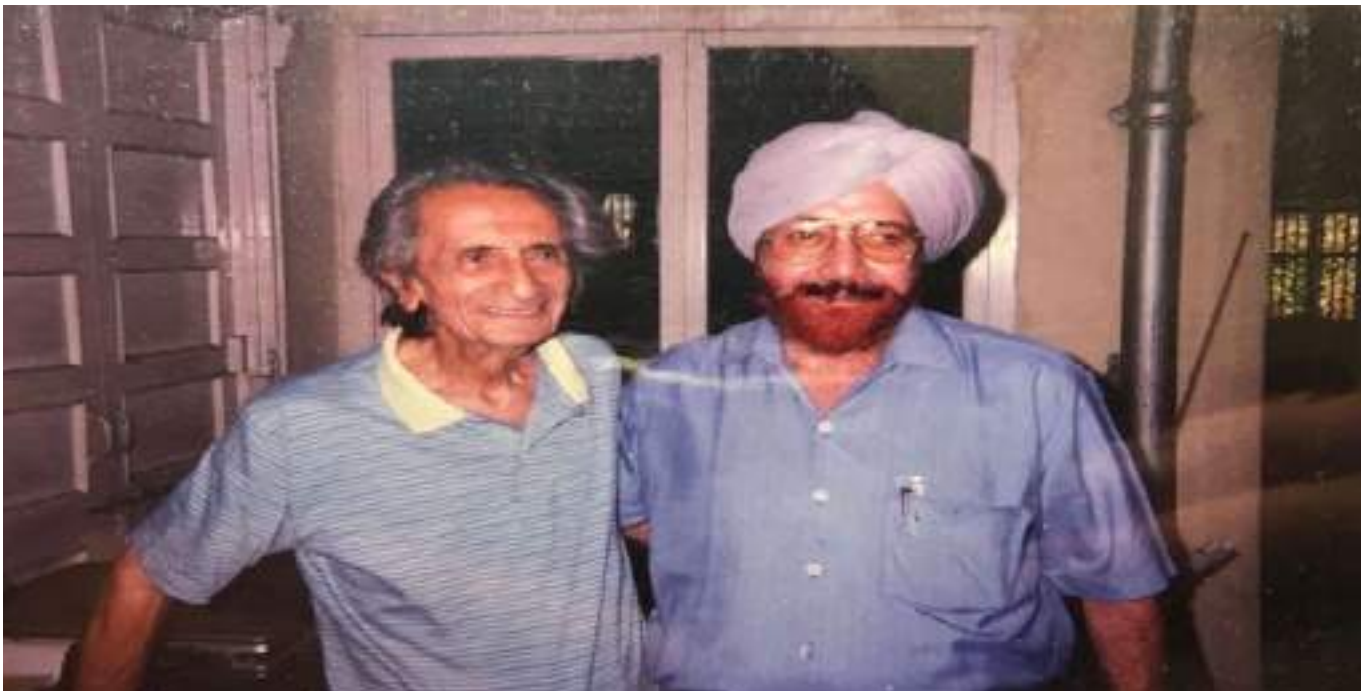

में उनके अवदान की कभी सुचिंतित चर्चा ही नहीं हो पाती है। त्रिलोक दीप हिंदी के उन्हीं नायकों में से एक हैं।'' उनके व्यक्तित्व-कृतित्व को, उनके योगदान को गंभीरतापूर्वक रेखांकित करने का उनके जीवन से संबंधी संस्मरणात्मक लेखों का प्रकाशन एक महत्वपूर्ण प्रयास है। इस प्रकाशन का यह भी महत्व है कि त्रिलोक जी के बहाने यहां पिछली आधी सदी की पत्रकारिता और राजनीति, समाज और संस्कृति से जुड़ी दुर्लभ सामूहिक स्मृतियों का जीवंत परिदृश्य भी उपस्थित होता है। नयी पीढ़ी और आने वाली पीढ़ियों के लिए यह प्रकाश प्रेरक सिद्ध हो यही अपेक्षा है।

'त्रिलोक के पीछे का दीप' संस्मरणात्मक लेख में अनिल शुक्ल लिखते हैं कि ''पहली बार 84 के दंगों के समय की गई दीपजी की रिपोर्टिंग ने मुझे आकर्षित किया।वह एक सचेत भारतीय पत्रकार का विश्लेषण था, इसलिए तब भी यह नहीं जान पाया कि वह एक केशधारी सिख हैं।'' त्रिलोक दीप जी ने पाकिस्तान के कई दौरे पत्रकार की हैसियत से किए और वहां उन्होंने कई सेमीनार भी आयोजित किए। वहां से लौटकर उन्होंने हर सप्ताह एक पन्ना 'पाकिस्ताननामा' शीर्षक से लिखा। कई पत्रकारों की नजर में यह अखबारी पन्नों की सरेआम बर्बादी थी। लेकिन जब ये लेख किताब के रूप में प्रकाशित हुए तो ऐसे पत्रकारों को पुस्तक पढ़ने पर समझ आया कि दोनों देशों (भारत और पाकिस्तान) की आम जनता के बीच मित्रता विकसित करने की दिशा में त्रिलोक दीप जी का यह एक महत्वपूर्ण योगदान के रूप में महसूस किया गया।

लोकेश शेखावत

त्रिलोक दीप जी 'दिनमान' व 'संडे मेल' जैसी तत्कालीन बड़ी पत्रिकाओं के बड़े पत्रकार होने के बावजूद विनम्रता की प्रतिमूर्ति माने जाते हैं। वे अपने कनिष्ठ पत्रकार सहयोगियों केसाथ बहुत ही मधुर व्यवहार करते थे। उनके बारे में उनके सहयोगी अनिल शुक्ल लिखते हैं, ''दीप जी 'पाकिस्तानी फ्रंट' की हमारी तमाम आलोचनाओं को मुस्कराते हुए सुनते और अपनी मेहंदी रची मूंछो पर उन्हीं मुस्कुराहटों के बीच ताव देते रहते। हम लोगों के मुंह से अपनी भर्त्सना सुनकर उनके चेहरे पर कभी तनाव आता ही नहीं था। हमारी इतनी सारी 'गाली-गुफ्ता' सुन भी वह गाहे-बगाहे हमें प्रेस क्लब में शराब की दावत देते थे। हम उनकी शराब पीकर उन्हें को गालियां सुनाते और वह फिर भी मुस्कराते रहते।'' उनके सहयोगियों का यह मानना था कि उनसे वार्तालाप करना अमूमन इकतरा होता। वे सामने वाले को ताकते रहते और खामोशी से उसकी सुनते। वे टिप्पणियां कम ही करत थे। उनके साथी उनसे सवाल पूछा करते थे कि आप कैसे सारथी हैं, जो अपने घोड़ों की केवल सुनते हैं, जवाब में कुछ बोलते नहीं? कोई सुझाव क्यों नहीं देते? इस पर मुस्कुराते हुए दीप जी कहते – ''मेरी टीम के ज्यादातर घोड़े बड़े अनुभवी हैं। उनका चयन मैंने इसी विश्वास से किया था। अब ऐसे अश्वों की

रास मैं क्यों खींचूं, जब मुझे उन पर यकीन है। मेरे घोड़ों ! तुम्हें छुट्टा छोड़ने में मैं गौरव महसूस करता हूं। मुझे पूरा विश्वास है कि तुम अपने रथ को किसी खड्ड में नहीं गिरा दोगे।'' (त्रिलोक दीप का सफर के पृष्ठ 252-53 से उद्धृत लेख 'त्रिलोक के पीछे का दीप' लेखक अनिल शुक्ल)

त्रिलोक दीप जी एक वरिष्ठ पत्रकार, कथाकार और यात्रावृत लेखक के रूप में जाने जाते हैं। जनवरी 1966 से 31 अक्टूबर 1989 तक प्रतिष्ठित समाचार साप्ताहिक 'दिलमान' की संपादकीय टीम के सक्रिय सदस्य व प्रभावी भूमिका में जुड़े रहे। इन वर्षों में उन्होंने देश-विदेश की अनेक यात्राएं कीं। 'देश और निवासी' श्रृंखला के लिए कनाडा और लद्दाख पर पुस्तकें लिखीं। हंगरी और पाकिस्तान पर यात्रा वृत्तां भी लिखे। इन सबके अतिरिक्त कथाकार के रूप में उपन्यास, कहानी-संग्रह, बाल साहित्यय से संबंधित अनेकों पुस्तकें प्रकाशित हुईं। 1 नवंबर 1989 से हिंदी साप्ताहिक 'संडे मेल' में कार्यकारी संपादक के तौर पर जुड़ाव हुआ। इस दौरान उन्होंने 1990 से 1997 तक पाकिस्तान की छह बार यात्राएं कीं। पाकिस्तानी नेशनल असेंबली के तीन चुनावों को एक भारतीय प्रतिष्ठित पत्रकार के रूप में रिपोर्टिंग करते हुए कवर किया। नवंबर 1991 में गैर राजनीतिक अंतरराष्ट्रीय संगोष्ठी 'भारत पाकिस्तान : मैत्री और भाईचारा' के आयोजन में महत्वपूर्ण सफल भूमिका का निर्वहन किया। संडेमेल के प्रकाशन के स्थगन के पश्चात 'डालमिया सेवा ट्रस्ट' से सबंद्ध रहते हुए सामाजिक कार्यकर्ता के तौर पर मई, 2017 विभिन्न सेवा कार्यों विशेष रूप से अस्थमा रोग के उपचार हेतु अनेकों चिकित्सा शिविरों कासफल आयोजन कर समाज सेवा के कार्यों में सराहनी योगदान दिया। मेरा त्रिलोक दीप जी से संपर्क उनके द्वारा शेखावटी एवं मारवाड़ जोधपुर क्षेत्रों में चिकित्सा शिविरों के आयोजनों के दौरान हुआ। आज भी उनके द्वारा किए गए सेवा कार्यों की प्रेरक स्मृतियां मेरे मानस पटल पर अंकित हैं। भारतीय संस्कृति में यही उच्च आदर्श सेवा कार्यकर्ताओं के लिए रखा गया है। प्रो. राधावल्लभ ने जनता-लहरी में इसी उच्चादर्श के विचार को एक श्लोक के रूप में प्रस्तुत किया है, जो इस प्रकार से उल्लेखित है।

नो दानैर्न तपोभिरप्यतितरां नो चेज्यया विद्यया
नो काषायपटैरखण्डविभवै: स्यात् संस्कृतो मानव:।
हित्वा स्वार्थपरायणैकधिषणां धृत्वा च सेवाव्रतं
लोकाराधननिष्ठयैव पुरुष: संस्कार्यते धार्यते।।५।

इसी भाव विचार से प्रेरणा प्राप्त कर त्रिलोक दीप जी ने पत्रकारिता एवं समाज सेवा के क्षेत्रों में अपने नाम को 'यथा नाम तथा गुण' के रूप में तीनों लोक (त्रिलोक) अर्थात् पूर्व जन्म, वर्तमान जन्म एवं भावी पुनर्जन्म कालों में अपने सत्कर्मों व व्यक्तित्व-कृतित्व की सुगंध से दीप के रूप में देदिप्यमान करते हुए सार्थक किया है। यही उनकी अमूल्य थाती है। आज भी उम्र के इस पड़ाव पर वे सक्रिय ऊर्जावान जिंदगी का आनंद ले रहे हैं। हाल ही में उन्होंने अपने संस्मरणों की वृहद पुस्तक 'संस्मरणनामा' प्रकाशित की है, जो उनके सक्रिय जीवन का सबूत है। अभी भी स्वतंत्र लेखन और पत्रकारिता के क्षेत्र में अपनी सेवाएं प्रदान कर रहे हैं। उनके जज्बे को हजारों सलाम। अंत में, उनके जीवन का सार पत्रकार अनिल शुक्ल के शब्दों में प्रस्तुत करने के लोभ से मैं स्वयं को वंचित नहीं करना चाहता हूं : आज के दौर में, जबकि संपादकों का अपने सहयोगियों के साथ सिर्फ जनसंपर्क कार्यकारी – संवेदनहीनता से लबरेज़ नौकरशाह का रिश्ता बचा है, ऐसे में दीप जी जैसे संपादकों को खोजना बड़ा मुश्किल है, जो संवेदनाओं से भरे होते हैं और मातहतों पर पूरा यकीन रखते हैं। त्रिलोक दीप के पीछे का दीप पेशे की पुरानी रवायतों की त्रिवेणी में डूबता-उतराता टिमटिमाता रहता है। प्रकाश से परे उनका अपना कोई अतिरिक्त स्वार्थ नहीं। ऐसे दीप को सलाम।

दीप जी ! तुसी ग्रेट हो !!

मुक्तेश पंत

हिन्दी पत्रकारिता के नए कलेवर और तेवर या कदाचित् आधुनिक अवतरण के लिए ज़िम्मेदार आधारों में पिछले लगभग छः दशकों से सक्रिय त्रिलोक दीप (दीप जी) सब से सशक्त हस्ताक्षरों में अग्रणी हैं।इनकी पत्रकारिता की सब से बड़ी विशिष्टता इनकी अन्दाज़-ए-बयानी है जिसकी रवानी अपने आप में बेहद दिलकश है।स्मरणीय है कि हिन्दी पत्रकारिता के पुरोधा / शलाका पुरुष अज्ञेय जी की पारखी दृष्टि की खोज , दीप जी , दशकों से पत्रकारिता (सिर्फ़ हिन्दी ही नहीं) की तीन-तीन पीढ़ियों के मार्गदर्शक तथा रोल मॉडल बने हुए हैं और इनका यह दायित्व और सफ़र अभी भी निर्बाध जारी है।

अज्ञेय की ख्याति यायावरी (Wanderlust) को लेकर भी रही है और यही गुण (trait) दीप जी ने जितनी सहजता से आत्मसात् किया कोई और नहीं कर पाया।अपनी पत्रकारिता के लम्बे सफ़र में दीप जी ने लगभग सभी महाद्वीपों के अनेक शहरों की बार-बार यात्राएँ कीं और स्वदेश के विविध अँचलों की भी और उन स्थानों को अपने यात्रवृत्तों के ज़रिए पाठकों के सामने कुछ यूँ पेश किया कि किसी को भी वे अपनी ही यात्राओं के अनुभव लगते रहे।

चालीस वर्ष पूर्व दीप जी की यूरोप के देश पोलैंड के शहर काक्रोव की यात्रा की इन की अनुभूति के विषय में प्रस्तुत् से बेहतर कुछ हो ही नहीं सकता : “ चार दशक पूर्व जब दीप जी यूरोप के दौरे पर थे, वहाँ पोलैंड के काक्रोव शहर में अपने देशवासियों से मिलकर उन्हें ऐसा लगा था मानों एक दूसरे को दसियों बरसों से जानते रहे हों जो अब मानो इन्हें अचानक ही मिल गये हों और एक

दूसरे से बिछुड़ने का मन कर ही न रहा हो।"

सातवें दशक के आरम्भ में जब हमारा दिल्ली प्रवास शुरू हुआ तब अज्ञेय जी एवम् उनकी पत्नी , कपिला जी , से अलग-अलग पारिवारिक परिचय होने के कारण उन से यदा -कदा भेंट होती रही और यह भी ज्ञात हुआ कि उन्हें बेनेट कोलमैन समूह के स्वामी साहू शांतिप्रसाद / रमा जैन ने हिन्दी में टाइम / न्यूज़वीक सदृश पत्रिका आरम्भ करने के लिए चिन्हित किया और उनके नेतृत्व में मनोहरश्याम जोशी , रघुवीर सहाय , सर्वेश्वरदयाल सक्सेना आदि की टीम के साथ योजना का समारभ हुआ और शीघ्र ही इस से दीप जी , प्रयाग शुक्ल , विनोद भारद्वाज जैसे लोग भी जोड़ लिए गए।स्मरणीय है कि मनोहरश्याम जोशी भी पूर्व पारिवारिक आत्मीय थे , प्रयाग शुक्ल तथा विनोद भारद्वाज भी पूर्व परिचित थे।

प्रसंगतः यह वही कालखण्ड या दौर था जब दीप जी तत्कालीन लोकसभा-अध्यक्ष सरदार हुकुम सिंह के सचिवालय में सेवारत थे।सरदार हुकुम सिंह से अज्ञेय जी की गहरी घनिष्टता थी और जल्दी ही उन के सचिवालय से जुड़े दीप जी की विशिष्ट प्रतिभाओं ने उन्हें इस क़दर प्रभावित किया कि उन्होंने इन्हें तत्काल ही " दिनमान " (यही पत्रिका का नाम था) की टीम से जोड़ लिया।यह 1964 की बात है और इसके बाद दीप जी ने सबों से अपनी प्रतिभाओं का लोहा मनवाने का जो सिलसिला शुरू किया सो पलट कर कभी पीछे नहीं देखा।बेशक़ " दिनमान " का दौर कालांतर में समाप्त हुआ और दीप जी 1989 में " संडे मेल " साप्ताहिक और " समाचार मेल " सांध्य दैनिक से कार्यकारी संपादक की विशिष्ट भूमिका में जुड़ गये और अपनी देखरेख में होनहार पत्रकारों को साथ ले कर अल्प अवधि में ही योग्य / प्रशिक्षित पत्रकारों की एक टोली तैयार कर डाली।

1965 से ले कर " दिनमान " की प्रकाशन की अवधि में इनके नियमित योगदान एवम् तदुपरान्त "संडे मेल " प्रकाशन समूह में इनके महत्वपूर्ण दायित्व-निर्वाह भर इन्होंने मुझे नियमित रूप से इन प्रकाशनों में नियमित रूप से योगदान करते रहने के लिए उत्साहित / प्रेरित किया और विविध विषयों पर मेरे योगदान का उपयोग किया।

मेरे लिये दीप जी से लगभग 55-60 वर्षों का परिचय मेरी स्मृतियों की एक अनमोल धरोहर है विशेष रूप से इस लिए भी कि दीप जी सदृश सहज , सजग , मेधावी , सहृदय तथा जीवन्त आत्मीय स्वजन उँगलियों पर गिने जा सकने वाले भी अब तक पूरे नहीं मिल पाए हैं।

दीप जी एक प्रतिष्ठित लेखक भी हैं और इनकी दो पुस्तकें भी बेस्ट सेलर रही हैं ।आज भी जिस कर्मठ सक्रियता के साथ अपने जीवन के मिशन को आगे बढ़ा रहे हैं वह स्पृहणीय तथा विलक्षण है।

बीच में स्वास्थ्य को लेकर कुछ परेशानियों से दीप जी को दो-चार ज़रूर होना पड़ा है पर मगर इन की जिजीविषा , ज़िन्दादिली एवम् दृढ़ इच्छाशक्ति संजीवनी के रूप में इन के साथ है।

राष्ट्रीय प्रेस क्लब , दिल्ली , का एक कोना विशेष आज दीप जी को ले कर ही अपनी पहचान बनाए हुए है और इन्हें तथा इन के चन्द मित्रों को ले कर ही गुलज़ार रहता है।पत्रकारिता जगत् को दीप जी के योगदान को ले कर इन से जुड़े पत्रकारों ने यह गंभीर सुझाव तक दे डाला है कि किसी न किसी विशिष्ट दैनिक में " Deep Today "

(" दीप जी आज ") नाम का एक नियमित स्तम्भ अविलम्ब शुरू किया जाना चाहिए ताकि हर कोई लाभान्वित हो सके और आज के दौर में " प्रिण्ट प्रेस " की घटती या गिरती जा रही लोकप्रियता को सँभाला जा सके। दीप जी आज सोशियल मीडिया के भी एक बेहद सशक्त हस्ताक्षर हैं। संक्षेपत: , " दीप जी ! तुसी ग्रेट हो और ऐसे ही आने वाले दशकों में भी हमारे साथ बने रहो ! "

दीप साहब मेरे बड़े भाई!

कमलेश कुमार कोहली

"तमन्ना दर्दे दिल की हो तो कर ख़िदमत फ़कीरों की

नहीं मिलता यह गौहर बादशाहों के ख़ज़ीनों में"

जी हां ऐसे ही नायाब हीरा हैं हमारे बढ़े भाई, वरिष्ठ पत्रकार, लेखक, समीक्षक, कहानीकार और फ़रिश्ता नुमां इन्सान, त्रिलोक दीप साहब। कोई क्या लिख सकता है एक ऐसी शख़्सियत के बारे में जिस ने जीवन भर, साक्षात शिव की तरह, सारा हलाहल जज़्ब किया पर चेहरे पर मुस्कान बिखेरे रहे। सोचिये आठ-नौ साल की उम्र में देश विभाजन में सब कुछ लुटा कर, खून-ख़राबे से जान बचा कर, एक नये भारत में शरणार्थी बन कर पहुंचे एक परिवार से आने वाले दीप साहब के मन पर क्या गुज़री होगी जब रावलपिण्डी के एक सम्भ्रांत परिवार के सारे सुख, स्कूल जाते आते सहपाठियों के साथ मौज मस्ती की हिलोरें और अपने जाने पहचाने शहर की गलियां और बहिश्ती आबो-हवा छोड़कर अचानक एक दिन खाली जेब एक अजनबी भू-खण्ड पर धकेल दिये गये जहां सब कुछ अजनबी था - भाषा, रहन सहन, पहनावा और लोग। वह ऐसे दिन थे जब सरहद के पार से आये हुये हर आदमी को शरणार्थी कहा जाता था। सोचिये बाल्य अवस्था में बार बार सुना यह शब्द कितना कुछ नहीं बदल गया होगा।

दीप साहब (मेरे बढ़े भाई हैं इसलिये मैं उन्हे इसी नाम से पुकारता हुँ) दिल्ली पहुँचे पर दिल्ली उन दिनों उन्हीं जैसे शरणार्थियों से खचाखच भरी हुई थी, परिवार को कहीं ठौर ठिकाना मिल भी जाता तो भी भरण पौषण के लिये जीविका का साधन तो चाहिये। दूर रायपुर (तब मध्य भारत) में कुछ रिश्तेदार थे, वहीं जा कर बसना तय हुआ। रायपुर पहुंच कर एक नये जीवन की शुरुआत हुई, पिता जीविका यापन में लग गये बालक त्रिलोक दीप स्कूल जाने लगे और गाड़ी धीरे धीरे पटरी पर आने लगी। जीवन शायद

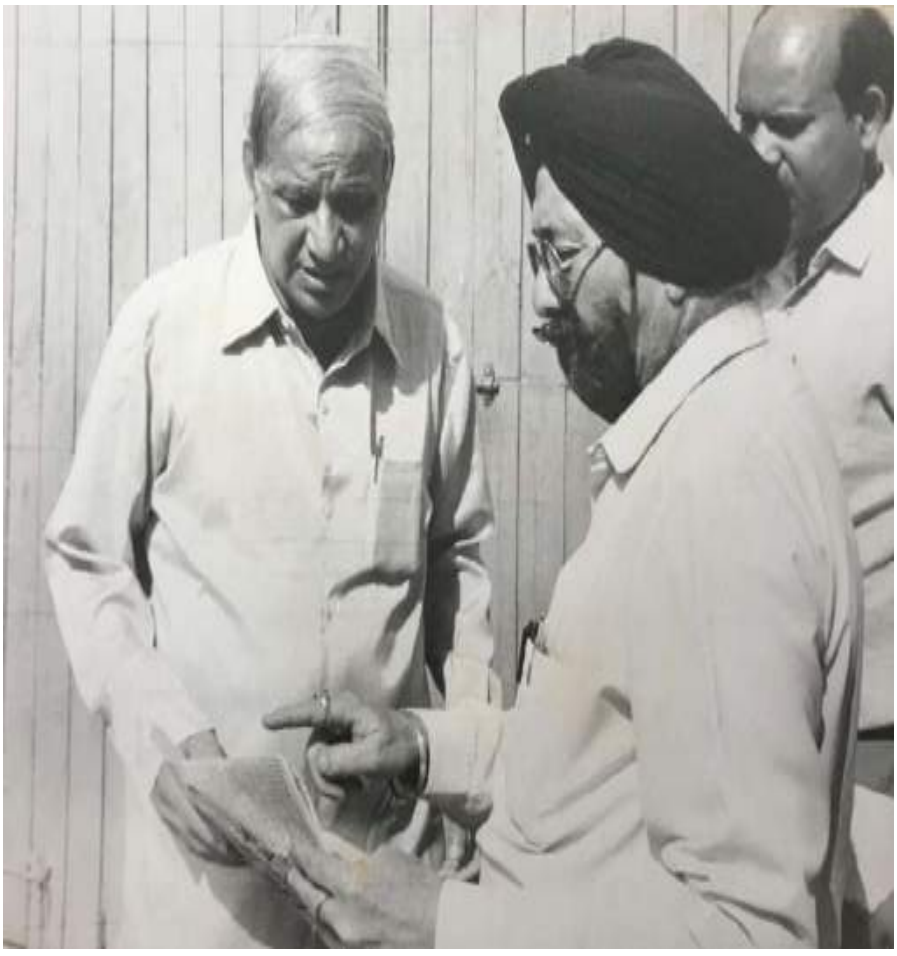

रावलपिण्डी जैसा तो नहीं बन पाया पर हां सिर पर छत, बदन पर सम्मान जनक कपड़ा और पेट में उचित आहार तो हो ही गया। नया माहौल तो नये सपने बनने शुरु हुये पर मेरे मन कछु और है विधना के कछु और। जब दीप साहब हाई स्कूल तक पहुँचे तो अचानक एक दिन परिवार पर एक और वज्र प्रहार होता है - परिवार का मुखिया, दीप साहब के पिता का अचानक स्वर्ग वास हो जाता है। जाने उस का क्या विधान है कहते हैं देता है तो छप्पर फाड़ कर देता है - मालूम नहीं पर यह मालूम है कि जब लेता है तो बिल्कुल पस्त कर देता है। अभी कुछ साल पहले घर बाहर, ज़मीन जायदाद, भाषा संस्कृति, रिश्ते नाते सब देश के बंटवारे में खो देने के बाद भी फिर से अपने पैरों पर खड़े हो कर जीवन का पुनर्निर्माण कर लेना आसान नहीं था पर जब यह परिवार उसी जदोजहद में था तो यह प्रहार उन्हें निःसहाय कर गया। त्रिलोक दीप किशोरावस्था में .... शिक्षा अधकचरी और परिवार के जीवन यापन से ले कर इमोशनल सुरक्षा की चिंता पर मैं ने कहा न दीप साहब ने हवाहल खुद पी लिया और चेहरे पर मुस्कराहट लिये प्यार बांटते रहे। अपने रायपुर के बुज़ुर्ग रिश्तेदारों का आशीर्वाद ले कर वह दिल्ली चले आये - हिन्दी टाईपिंग सीखे हुये थे - संसद के लोक सभा सचिवालय में नौकरी पा गये।

जुस्तजू हो तो सफर ख़त्म कहां होता है। दीप साहब ने घर बाहर, पिता को खोया था पर अपने सबसे बड़े ख़ज़ाने को नहीं वह था उनका धैर्य, निष्ठा,चरित्र और मुस्कराहट। लोक सभा की नौकरी पा कर ही वह बैठ जाने वाले नहीं थे। दिल्ली में उन दिनों पाकिस्तान से विस्थापित हुये लोगों के लिये उच्च शिक्षा प्राप्त करने हेतु एक शिक्षा संस्थान बनाया गया था जो दिल्ली विश्वविद्यालय की देन था - कैम्प कालेज - गोल मार्केट, बिरला मन्दिर से लगता हुआ यह कालेज शाम को चलता था ताकि शरणार्थी युवक दिन को रौज़ी कमाने के बाद शाम को अपनी अधूरी शिक्षा पूरी कर सकें। दीप साहब ने इस का पूरा लाभ उठाया और नौकरी करते हुये अपनी उच्च शिक्षा प्राप्त की। अब दीप साहब एक आत्मविश्वासी उच्च शिक्षा प्राप्त नवयुवक थे। लोक सभा सचिवालय में सब सहकर्मियों, अफसरों और सम्पर्क में आने वाले नेताओं का मन जीतते गये। उनकी लग्न, निश्छल स्वभाव सब के मन को भाने लगी। दीप साहब यहां नौकरी करते हुये ही रेडियो, समाचार पत्रों और साहित्यिक पत्रिकाओं से जुड़ने लगे। जिज्ञासु मन संसद की गर्मागर्मी वाली बहसों से कब तक परचता। दीप साहब के लेख पत्रिकाओं में छपते, साहित्यकारों से मेल जोल बढ़ा और दीप साहब एक दिन संसद सचिवालय से त्यागपत्र दे कर पत्रकारिता की दुनिया में आ गये।

23 वर्षों तक दिनमान जैसे मील पत्थर पत्रिका के आधार स्तम्भों में रह कर दीप साहब उद्योगपती संजय डालमिया के संडे मेल के सम्पादक हो गये। और कई वर्षों तक संडे मे। के सर्वेसर्वा रहने के बाद भी जूते उतार कर टांग नहीं दिये बल्कि संजय डालमिया की ही समाजसेवी संस्था के प्रंबधन में उनके दांये हाथ बन कर देश के पिँछड़े इलाकों, गांवों और कस्बों में स्वच्छता और स्वास्थ्य सेवायें मुहय्या करवाते रहें। और अब जब उन के संघी साथी सेवा निवृत्त हो कर रिटायरमेंट का आनन्द भोग रहे हैं

दीप साहब नियमित रुप से लिख रहे हैं, पत्र, पत्रकिओं में, सोशल मिडीया पर, अपनी

प्रकाशित पुस्तकों को फिर से देख रहे हैं, नई पुस्तकें प्रकाशन के लिये भेज रहे हैं।

मैं ने कहा न - जुस्तजू हो तो सफ़र ख़त्म कहां होता है

यूं तो हर मोढ़ पर मंज़िल का ग़ुमा होता है।

यह तो रही दीप साहब की संक्षिप्त जीवनी। इन तथ्यों से बना, निखरा जो इन्सान है वह कोई साधारण पत्रकार का समाजसेवी नहीं वह है अपने आप में एक संस्था जो किसी भी पत्रकार का आदर्श हो सकते हैं , किसी भी समाजसेवी को सेवा का सही मायना बता सकते हैं। मैं न तो पत्रकार हूँ, न समींक्षक और न ही समाजसेवी, थोड़ा बहुत साहित्य और कला से प्रेम रहा है और यायावरी का दीवाना इसलिये दीप साहब का जो लिखा हुआ पढ पाया हुँ उससे मैं तो यही समझता हूँ कि वह आज के पत्रकार की रिपोर्ट की तरह, जो किसी जन सम्पर्क अधिकारी लिखित प्रेस रिलीज़ का ऊट पटांग स्वरुप होता है, न हो कर किसी मनीषी का अध्धयन और उसका संवेदनशील लेखन है। जब वह विदेश जाते हैं तो दूसरे पत्रकारों की तरह उसे jaunt और शापिंग ट्रिम न बनाकर लग्न से वहां की हर वस्तु का आब्जेक्टिव आकलन करते हैं, परखते हैं और जो वह ठीक समझते या पाते हैं उसे लेखक तक पहुँचाते हैं। मसलन मैं ने बहुत कम पत्रकारों को साईबेरिया जा कर उस पर लिखने की इच्छा प्रकट करते देखा है, पत्रकार तो पहलाी दुनिया मतलब युरोप और अमेरिका जाना ही असाइनमेंट समझते हैं बाकी देशों मॉ जा कर रिपोर्ट करना उन्हें सज़ा (punishment posting) लगता है पर हमारे दीप न केवल साईबेरिया जाने के लिये विशेष यत्न करते हैं बल्कि वहां से ऐसे रोचक विवरण पोस्ट करते हैं कि आप विस्मित हो जाते हो। वह साईबेरिया को सभ्यता की आऊटपोस्ट नहीं मानते उनकी पैनी नज़र जहां एक तरफ़ वहां की स्वर्गिक जल स्तोत्रों की स्वछता की ओर ध्यान दिलाते हैं वहीं वह साईबैरिया के खनिज पदार्थों, सामाजिक और राजनीतिक विंषयों को विस्तार से समझाते हैं। वहां बहुत ठंड होती है वह इतना कह कर अपना काम निपटाते नहीं ब्लकि वहां की सांस्कृतिक सम्पदा से अवगत कराते हैं। दीप साहब ही ऐसे पत्रकार हैं जिन के पास वहां आनेवाले सैलानियों का ब्यौरा भी है वर्ना कितने लोग जानते हैं कि साईबेरिया के सैलानियों में एक बढ़ी संख्या कोरियाई और जापानी सैलानियों की है। इसी तरह जब वह पहली दुनिया के ग्लैमरस चकाचौंध करने वाले देश अमेरिका जाते हैं तो वह सिर्फ़ फ़िफ़्त ऐवेन्यू की अंपायर स्टेट बिल्डिंग या उस समय के वाल स्ट्रीट के टविन टावर और टाईमस स्केयर को ही अपना गंतव्य नहीं लेते वह दूर पश्चिम में मियामी में विस्थापित क्यूबा निवासियों और दूसरे लातीनों के रहन सहन और समाजिक विषमताओं के बारे में लिखते हैं , यूं तो एक आम पत्रकार मियाम्ी के सागर तटों में ही पक्षी विचरण में ही असाइनमेंट पूरी कर लेता है। दीप साहब शिकागो जाते हैं तो वह शहर की विशालता से ही मुग्ध नहीं हो जाते बल्कि वहां के अल्पसंख्यक ऐफ़रो - अमेरिकन समुदाय और अमेरिका के मूल निवासी जन जातियों (ट्राईब्स) के बारे में हमारी आंखे खोलते हैं।

और पाकिस्तान जहां वह अपना सब कुछ छोड़ आये थे, जहां जाना एक पीढ़ादायक हादसा हो सकता है वह किसी किस्म के द्वेष या वैर भाव को न पालते हुये वहां छः बार जाते हैं और सबसे किसी बिछड़े हुये सम्बन्धी का सा व्यवहार करते हुये, दिलों को जीतते हुये भारत और पाकिस्तान के बीच एक सांस्कृतिक, समाजिक पुल का काम करते हैं। वह पाकिस्तान के इलेक्शन भी कवर करते हैं और अपनी राजनीतिक विषयों की समझ का सबूत देते हैं और क्योकि पाकिस्तान बनने से पहले वह उनकी अपनी मिट्टी थी तो वहां जाने पर वह भावुक भी होते हैं और कहीं अतीत की असीम पीढ़ा भी उन्हें टीस पहुंचाती है पर एक निष्ठावान पत्रकार की तरह वह इन व्यक्तिगत उदगारों को कहीं अपने व्यवसायिक जीवन में नहीं दखल देने देते। वह हसननअब्दल के ऐतिहासिक गुरुद्वारे पंजा साहब भी मत्था टेकने जाते हैं और कई बार मेरे से ज़िक्र भी किया कि "याद है उस तरफ़ कैसे लोकाट के पेढ़ होते हैं" (मै भी रावलपिण्डी से हूँ)। दीप साहब की पुस्तकों में एक अहम किताब पाकिस्तान यात्रा पर है।

शायद इस लेख के लिये निर्धारित मेरी शब्द सीमा तो समाप्त हो गई है पर मैं जाते जाते यह ही कहुंगा कि यह मेरा सौभाग्य है कि दीप साहब जैसे बड़े भाई का वरद हस्त मेरे सिर पर है और वह इतना मान देते हैं कि मैं कई बार धृष्टता कर के भी निकल जाता हुँ। असल मे दीप साहब मेरे सब से बड़े भाई औ. पी कोहली के मित्र हैं और मेरे भाई की मृत्यु हुये चवालीस साल हो गये हैं पर उन के जन्म दिन पर उन के एक दोस्त का फ़ोन तो मुंझे आज भी आता है। तो ऐसे हैं हमारे दाप साहब ....

नहीं मिलता यह गौहर बादशाहों के खज़ीनों में

कमलेश कुमार कोहली
जन्म 28 सितम्बर 1941
रावलपिण्डी
शिक्षा - दिल्ली और हाईडलबर्ग, जर्मनी
आधा जीवन व्यापार आधा कला सेवा- संगीत, नाटक, साहित्य, सिनेमा, लोक कलाएँ ,गाहे बगाहे कला सम्बंधित लेख कुछ नाटकों का निर्देशन कुछ का निर्माण

सिद्ध पत्रकार त्रिलोक दीप

सुधेन्दु पटेल

काशी के अप्रतिम घाटों की श्रृंखला में एक घाट पंचगंगा घाट भी है, जहाँ की सीढ़ियों पर संत रामानंद से कबीर की भेंट हुई थी। यह किंवदंती सुनने-पढ़ने के बाद रामानंद - कबीर के साथ-साथ मै पंचगंगा घाट के प्रति अतिरिक्त अनुरागी हुआ था. संयोग से मेरा घर भी पास ही स्थित छोटी शीतला घाट पर ही था. अब भी है। मेरे 'एकलव्य' सरीखे गुरू त्रिलोक दीप के बारे में लिखते हुए मन में पंचगंगा घाट पर स्थित' हजारहां दीप स्तंभ' की याद सहसा उग आई है और यह आकस्मिक भी नहीं है।,क्योंकि त्रिलोक दीप से मेरा रिश्ता 'दीपस्तंभ' सा ही रहा है, जिससे में पास-दूर से निहारता हुआ सदैव प्रेरणा लेता रहा हूँ। वे वितल पत्रकारों में से हैं जिन्होंने अपनी विलक्षण प्रतिभा और अध्यव्यवसाय के बूते शून्य से शिखर तक का लम्बा सफर तय किया और नये पत्रकारों के प्रेरणा स्त्रोत बनने की महती भूमिका का बाखूबी निर्वाह भी करते रहे हैं और अब भी कर रहे हैं। दीप जी ने अपने सृजन के वैविध्यपूर्ण दशकों में जो स्पृहनीय यश और सोभाग्य प्राप्त किया है, वह अनुपम है। जीवन के नवें दशक में भी वे जितने सक्षम और सक्रिय हैं, वह मुझ सरीखे नाकारा को अपराध बोध से कुंठित करता है।

जीवन के उतरार्ध में जब पीछे मुड़कर अपने को टटोलता हूँ तो यही पाता हूँ कि मैंने अपने तात्कालिक सुखवाद (आलस+ संकोच + सिर्फ योजना बनाना आदि) के फेर में अनगिन अवसर नाहक ही गंवा दिए। यहाँ दो प्रसंगों का जिक्र अप्रासंगिक न होगा क्योंकि संस्मरण की मजबूरी होती है कि अपने आप का बखान भी अनायास आ ही जाता है, सो माफ करना गुरु !

दिनमान' के दिनों में जब साल में एकाधिक बार काशी से दिल्ली जाता और त्रिलोक जी के बहिरंग आकर्षण और लेखन के अंतरंगता से खिचाव महसूस करता तो था लेकिन संकोची स्वभाव वश (एक पत्रकार का दुर्गुण) चाहते हुए भी आगे बढ़कर परिचय नहीं किया और न ही सहायजी-सर्वेश्वर जी ने ही मिलवाया। यूं तो मे प्रयाग शुक्ल, रामधन जी से भी प्रभावित था । सालों बाद एक सुनहरा अवसर फिर मैंने खोया जब मैं चौथी दुनिया का किश्तों में संपादक बना और दिल्ली का तात्कालिक रहवाही भी हुआ। संयोगात तब त्रिलोक जी 'संडे मेल' के कार्यकारी संपादक और नंदन जी संपादक थे. मै नंदनजी को याद दिलाकर मिल सकता था कि आपने 'पराग ' में मेरी कहानी न केवल छापी अपितु और कहानियाँ आदेश देकर लिखवाई भी थी। उन्हें जरूर ही याद होगा। मैंने तब भी उनसे समय लेकर न मिलने। की नालायकी की थी जिसके लिए अब अपने को कोसता रहता हूँ। मुझमे अपनी नाकाबिलियत को लेकर एक हीन ग्रन्थि बराबर बनी रही है जिससे आज भी मुक्त नहीं हो पाया हूँ।

और अंत में मै दीप जी की अनगिन विविधताओं में से एक 'यायावरी प्रतिभा' के समक्ष हमेशा से नतमस्तक रहा हूं। शायद इसलिए भी कि सालों पहले कवि संपादक रघुवीर सहाय जी ने मुझे लिखा था कि ' मै आपकी यायावरी प्रतिभा से कितना मुग्ध हूँ, कह नहीं सकता-आप ही जैसे व्यक्तियों के माध्यम से देश का हाल देश को मिलने की उम्मींद बनती है।'

मेरी जिंदगी में त्रिलोक दीप

-प्रो. संजय द्विवेदी

ये ऊपर वाले की रहमत ही थी कि त्रिलोक दीप सर का मेरी जिंदगी में आना हुआ। दिल्ली न आता तो शायद इस बहुत खास आदमी से मेरी मुलाकातें न होतीं। देश की नामवर पत्रिकाओं में जिनका नाम पढ़कर पत्रकारिता का ककहरा सीखा, वे उनमें से एक हैं। सोचा न था कि इस ख्यातिनाम संपादक के बगल में बैठने और उनसे बातें करने का मौका मिलेगा।

भारतीय जन संचार संस्थान का महानिदेशक बनने के बाद छत्तीसगढ़ सरकार के जनसंपर्क अधिकारियों के प्रशिक्षण कार्यक्रम के लिए मैं ऐसे व्यक्ति की तलाश में था जो छत्तीसगढ़ से जुड़ा रहा हो। मुझे नाम तो कई ध्यान में आए किंतु वरिष्ठता की दृष्टि से त्रिलोक जी का नाम सबसे उपयुक्त लगा। बिना पूर्व संपर्क हमने उन्हें फोन किया और वे सहजता से तैयार हो गए। उसके बाद उनका आना होता रहा। वे हैं ही ऐसे कि जिंदगी में खुद ब खुद शामिल हो जाते हैं। इस आयु में भी उनकी ऊर्जा, नई पीढ़ी से संवाद बनाने की उनकी क्षमता, याददाश्त सब कुछ विलक्षण है। दिल्ली की हिंदी पत्रकारिता में दिनमान और संडे मेल के माध्यम से उन्होंने जो कुछ किया, वह पत्रकारिता का उजला इतिहास है। उनके साथ बैठना इतिहास की छांव में बैठने जैसा है। वे इतिहास के सुनहरे पन्नों का एक-एक सफा बहुत ध्यान से बताते हैं। उनमें वर्णन की अप्रतिम क्षमता है। इतिहास को बरतना उनसे सीखने की चीज है। उनकी सबसे बड़ी चीज यह है कि जिंदगी से कोई शिकायत नहीं, बेहद सकारात्मक और पेशे के प्रति ईमानदारी। वरिष्ठता की गरिष्ठता भी उनमें नहीं है। आने वाली पीढ़ी को उम्मीदों से देखना और उसे प्रोत्साहित करने की उनमें ललक है। वे अहंकार से दबे, कुठांओं से घिरे और नई पीढ़ी के आलोचक नहीं हैं।

उन्हें सुनते हुए लगता है कि उनकी आंखें, अनुभव और कथ्य कुछ भी पुराना नहीं हुआ है। दिल्ली की भागमभाग ने और जीवन के संघर्षों ने उन्हें थकाया नहीं है, बल्कि ज्यादा उदार बना दिया है। वे इतने सकारात्मक हैं कि आश्चर्य होता है। पाकिस्तान से बस्ती, वहां से रायपुर और दिल्ली तक की उनकी यात्रा में संघर्ष और जीवन के झंझावात बहुत हैं, किंतु वे कहीं से भी अपनी भाषा, लेखन और प्रस्तुति में यह कसैलापन नहीं आने देते। उनकी देहभाषा ऊर्जा का संचार करती है। मेरे जैसे अनेक युवाओं के वे प्रेरक हैं। प्रेरणाश्रोत हैं।

दिनमान की पत्रकारिता अज्ञेय, रघुवीर सहाय, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, श्रीकांत वर्मा, प्रयाग शुक्ल जैसे अनेक नायकों से सजी है। इस कड़ी का बेहद नायाब नाम हैं त्रिलोक दीप। यह बात सोचकर भी रोमांच होता है। दिग्गजों को जोड़कर रखना और उनसे समन्वय बिठाकर संस्था को आगे ले जाना आसान नहीं होता, किंतु त्रिलोक दीप से मिलकर आपको यही लगेगा कि ये काम वे ही कर सकते थे। यह समन्वय और समन्वित दृष्टि ही त्रिलोक दीप को एक शानदार पत्रकार और संपादक बनाती है। बाद के दिनों में 'संडे मेल' के संपादक के रूप में वे कैसी शानदार पत्रकारिता की पारी खेलते हैं, वह हमारी यादों में आज भी ताजा है। उनकी पत्रकारिता पर कोई रंग, कोई विचार इस तरह हावी नहीं है कि आप उससे उन्हें चीन्ह सकें। वे पत्रकारिता के आदर्शों, मूल्यों की जमीन पर खड़े होकर अपेक्षित तटस्थता के साथ काम करते नजर आते हैं। आज जबकि पत्रकारों से ज्याद पक्षकारों की चर्चा है। सबने अपने-अपने खूंटे गाड़ दिए हैं, त्रिलोक दीप जैसे नाम हमें आश्वस्त करते हैं कि पत्रकारिता का कोई पक्ष है तो सिर्फ जनपक्ष ही होना चाहिए और

इससे भी सफल-सार्थक पत्रकारिता की जा सकती है।

आज की दुनिया में हम सोशल मीडिया पर बहुत निर्भर हैं। ऐसे में त्रिलोक सर वाट्सएप और फेसबुक के माध्यम से मेरी गतिविधियों पर नजर रखते हैं। उनकी दाद और शाबासियां मुझे मिलती रहती हैं। उनका यह चैतन्य और आनेवाली पीढ़ी की गतिविधियों पर सर्तक दृष्टि रखना मुझे बहुत प्रभावित करता है। वे सही राह दिखानेवाले, दिलों में जगह बनाने वाले शख्स हैं। उनके साथ काम करने का मौका तो नहीं मिला पर उनके साथ काम करने वालों से मेरा संवाद हुआ है। वे सब त्रिलोक जी को बहुत शानदार बास की तरह याद करते हैं। भारतीय जन संचार संस्थान के पुस्तकालय के लिए उन्होंने अपनी सालों से संजोई घरेलू लाइब्रेरी से अनेक महत्वपूर्ण किताबें दीं। इसके लिए हम उनके कृतज्ञ हैं। वे शतायु हों, उनकी कृपा और आशीष इसी तरह हम सभी को मिलता रहे यही कामना है। **बहुत-बहुत शुभकामनाएं सर!**

(लेखक भारतीय जन संचार संस्थान, नई दिल्ली के महानिदेशक हैं)

प्रो.(डा.) संजय द्विवेदी भारतीय जन संचार संस्थान (आईआईएमसी), नई दिल्ली के महानिदेशक हैं। प्रो. द्विवेदी देश के प्रख्यात पत्रकार, संपादक, लेखक, स्तंभकार, मीडिया प्राध्यापक, अकादमिक प्रबंधक एवं संचार विशेषज्ञ भी हैं। डेढ़ दशक से अधिक के अपने पत्रकारिता करियर के दौरान वह दैनिक भास्कर, हरिभूमि, नवभारत, स्वदेश और InfoIndia.com जैसे मीडिया संगठनों में महत्वपूर्ण जिम्मेदारियों का निर्वहन कर चुके हैं। वे छत्तीसगढ़ के पहले सैटेलाइट चैनल, 'ज़ी 24 घंटे छत्तीसगढ़' की लॉचिंग टीम में रहे।

प्रो. द्विवेदी माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता एवं संचार विश्वविद्यालय, भोपाल में जनसंचार विभाग के अध्यक्ष और रजिस्ट्रार के अलावा विश्वविद्यालय के कुलपति भी रहे हैं। वह कुशाभाऊ ठाकरे पत्रकारिता एवं जनसंचार विश्वविद्यालय, रायपुर में पत्रकारिता विभाग के संस्थापक सदस्य एवं अध्यक्ष भी रह चुके हैं। आपने हिंदी के यशस्वी संपादक श्री राजेंद्र माथुर की पत्रकारिता पर गुरू घासीदास केंद्रीय विश्वविद्यालय, बिलासपुर से पीएचडी की उपाधि प्राप्त की है।

राजनीतिक, सामाजिक और मीडिया के मुद्दों पर आपके 3000 से ज्यादा लेख विभिन्न पत्र पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुके हैं। आपने 32 पुस्तकों का लेखन एवं संपादन किया है। 'मीडिया विमर्श (त्रैमासिक)' के मानद सलाहकार संपादक होने के साथ मूल्यानुगत मीडिया अभिक्रम समिति के अध्यक्ष हैं।

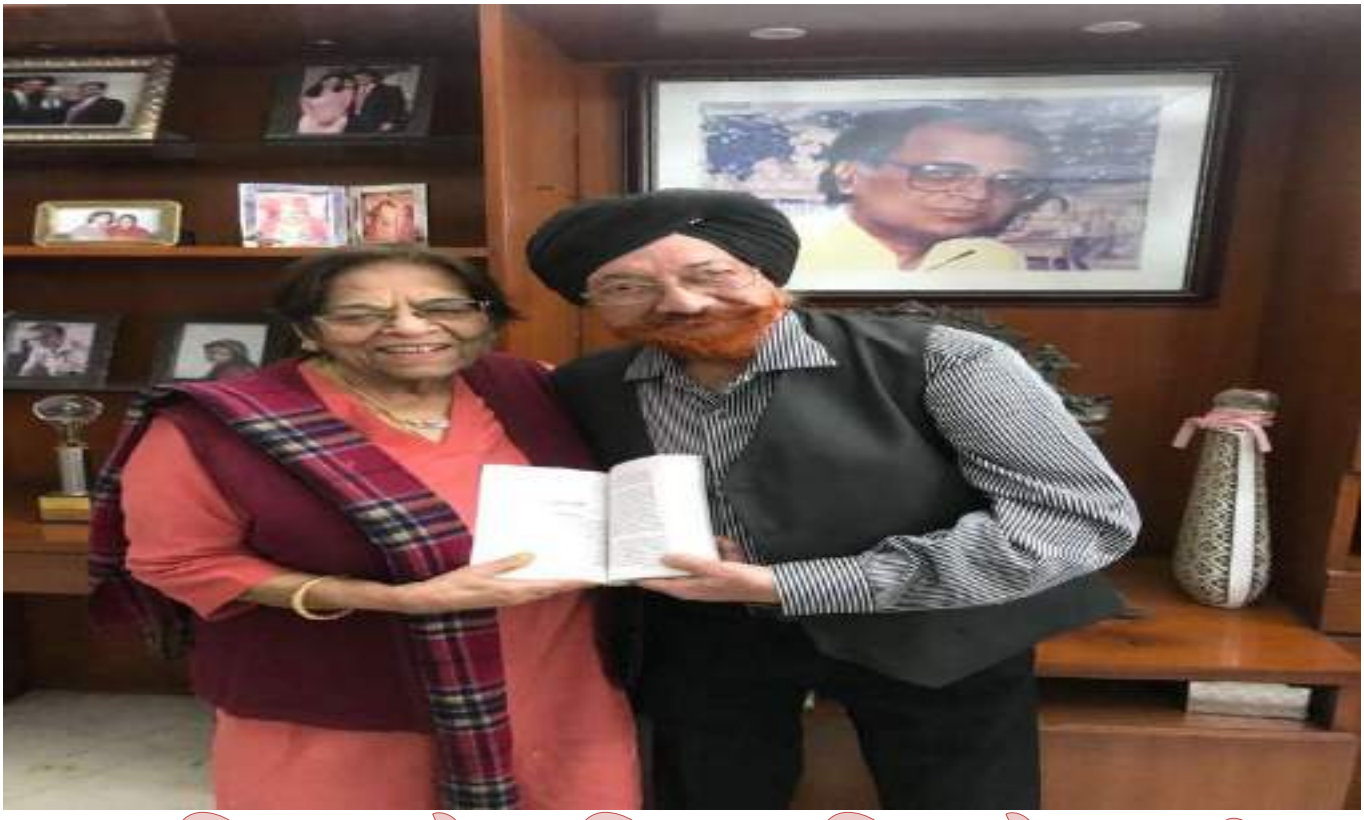

हर दिल के प्रिय त्रिलोकदीप

शीला झुनझुनवाला

त्रिलोकदीप एक सहकर्मी पत्रकार के रूप में कम परिवार के एक अभिन्न सदस्य के रूप में हमारे बहुत करीब रहे हैं।

बात आज से ५० साल पहले की है। मेरे पति श्री टी. पी. झुनझुनवाला का ट्रांसफर बम्बई से दिल्ली हो गया था। बम्बई में मैं धर्मयुग के महिला पृष्ठों का संपादन करती थी। वहीं से मेरी पत्रकारिता की यात्रा का शुभारम्भ हुआ था। दिल्ली में नई जगह की परेशानियों में मैं बहुत व्यस्त रहती थी किन्तु एक खाली सा एहसास मन को सदैव कचोटता रहता था क्योंकि साहित्य की दुनिया से सम्बन्ध एक प्रकार से टूट सा गया था। उसी समय अचानक एक महिला पत्रिका 'अंगजा' अचानक एक महिला पत्रिका 'अंगजा' निकालने का प्रस्ताव मेरे सामने आया। अंगजा का काम प्रारम्भ हुआ। दिल्ली के अनेक लेखकों से जुडाव बढ़ता गया। वैसे धर्मयुग के माध्यम से मैं उन्हें जानती तो थी किन्तु परिचय का दायरा केवल पत्रों या टेलीफोनिक संवादों के माध्यम से ही था। इस अवसर पर त्रिलोक जी ने मेरी बहुत सहायता की। वे एक बहुमुखी प्रतिभा के धनी वरिष्ठ पत्रकार थे। उनके अनेक उपन्यास, कहानी-संग्रह और बाल साहित्य की पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी थी। उस समय वे टाइम्स ऑफ इंडिया के हिंदी साप्ताहिक 'दिनमान' में संवाददाता के तौर पर काम कर रहे थे। जिस समय मैं अंगजा के प्रकाशन सम्बन्धी कार्यों में व्यस्त थी उस समय दिनमान में हड़ताल चल रही थी। इसलिए उनके पास काफी समय था। उन्होंने कई पत्रकार बंधुओं और आर्टिस्टों से मेरा परिचय कराया। कुछ कॉलम लिखने की जिम्मेदारी भी ले ली।

एक बार मौरीशस के पहले उच्चायुक्त रविन्द्र घरभरण और उनकी पत्नी पदमा घरभरण का इंटरव्यू लेना था। महिला पत्रिका के नाते मैंने त्रिलोक जी से बातचीत में सब कुछ डिस्कस कर लिया कि किस-किस सन्दर्भ में बात करनी है। जब उन्होंने फाइनल कॉपी दी तो मैंने देखा कि निर्धारित विषय पर बातचीत करते हुए, उससे जुड़े हुए अनेक सन्दर्भों को भी उन्होंने जोड़ लिया था। उदाहरण के लिए मैंने देखा कि उस इंटरव्यू के माध्यम से उन्होंने भारत और मौरीशस के सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीति परिदृश्य पर तो बातचीत की ही थी – जैसे महिलाओं की भूमिका, वहां के रीति-रिवाज, त्यौहार, भारत के धार्मिक ग्रंथों का महत्व आदि – साथ ही

मॉरिशस के स्वाधीनता संग्राम, भारतीयता के प्रति उनकी विचारधारा, धार्मिक और आध्यात्मिक विषयों पर भी चर्चा की थी l मेरे पति ने उन दिनों से कुछ पहले ही जब वे बम्बई में थे तब स्वामी कृष्णानंद सरस्वती के आग्रह पर रामायण की १ लाख प्रतियाँ मॉरिशस भिजवाई थी जिसके बारे में एक बार हमने त्रिलोक जी को बताया था – उस चर्चा का जिक्र भी किया l

उस समय त्रिलोक जी की कार्यशैली को पास से देखने का अवसर मिला l मैंने पाया कि चाहे भेंट वार्ता हो, चाहे कोई विशेष स्थिति की रिपोर्टिंग उसके दौरान वे कई आयाम जोड़ देते थे l मैंने देखा कि वो जिस काम की जिम्मेदारी लेते थे वह चाहे जितना चुनौतीपूर्ण हो, मुश्किल हो उसे पूरी शिद्दत से पूरा करते थे l वे एक बेहतरीन रिपोर्टर हैं l उन्होंने अपने कार्यकाल में बहुत से नेताओं के इंटरव्यू लिये और संसद भवन को कवर किया किन्तु एक बात का पूरा ध्यान रखा कि संतुलन बना रहे l "एक बार मैंने उनसे पूछा कि आपकी रिपोर्टिंग इतनी सहज, स्वाभाविक और संतुलित कैसे होती है – इस बारे में त्रिलोक जी कहते थे – यह बात उन्होंने नवभारत टाइम्स में रहते हुए रघुवीर सहाय जी से सीखी थी l वे मानते थे किसी भी घटना, दुर्घटना स्थल को वहां जाकर ही उसे समझा जा सकता है न कि ऑफिस में संपादक की कुर्सी पर बैठकर l वहां आपको सब तरह के लोग मिलते हैं l सबसे बातचीत के बाद जो रिपोर्ट तैयार होगी वह ही बेलाग और बेबाक होगी l" मेरे अपने आगे के पत्रकारिता के जीवन में यह बात मेरे बहुत काम आई l मैं कई बार स्वयं घटना स्थल पर जाकर घटनाओं का जायजा लेने की कोशिश करती रही l

त्रिलोक जी से उसके बाद हमारा परिचय गहराता गया l उनका आना-जाना हमारे यहाँ बढ़ गया l हमारे यहाँ अक्सर साहित्यिक गोष्ठियां होती रहती थी l जिसमे फिल्म कलाकार, कवि, लेखक, साहित्यकार आदि आते थे l इन गोष्ठियों में त्रिलोक जी की उपस्थिति अनिवार्य रहती थी l

अज्ञेय जी से वे बहुत प्रभावित थे l वे अक्सर कहते थे कि मैंने जो कुछ भी सीखा है वो अज्ञेय जी से ही सीखा है l उनका सदैव यह कहना रहता था कि उन्होंने अपने गुरु मूर्धन्य कवि, उपन्यासकार, कथाकार, संपादक और बहुभाषाविद् सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन अज्ञेय की यह बात हमेशा गांठ बांधे रखी : ''कोई भी विषय अपरिहार्य नहीं।''

आज कल फेसबुक पर उनके अनेक संस्मरण छप रहे हैं उनके संस्मरण महज एक दीर्घ कालावधि में साहित्य, पत्रकारिता, राजनीति, नौकरशाही और सिने-जगत से जुड़ी हस्तियों के संस्मरण नहीं ; इनमें एक साथ हम लगातार बदलते समय-समाज की धड़कनें सुन सकते हैं l इन संस्मरणों में वे साहित्य, पत्रकारिता, राजनीति, नौकरशाही और सिनेमा से जुड़ी अनेक हस्तियों के साथ अपने संबंधों की चर्चा इतनी आत्मीयता और खुले दिल से तथा इतने सहज रूप से करते हैं कि सामयिक फलक का पूरा चित्र उभर कर सामने आ जाता है l जितना हम उन्हें पढ़ते हैं उतना ही त्रिलोक जी के जीवन की परतें सहज ही खुलने लगती हैं l

त्रिलोक जी ने पाकिस्तान की छह यात्राएँ की l उन्होंने गैरराजनीतिक अंतरराष्ट्रीय सेमिनार 'भारत-पाकिस्तान : मैत्री और भाईचारा' के आयोजन में अहम भूमिका निभाई। मैंने कई बार उनसे आग्रह किया कि वे अपनी देश-विदेश की यात्राओं के संस्मरण पुस्तक रूप में छपवायें l इतनी गहन और महत्वपूर्ण जानकारियों को अपने अन्तःकरण में ही समेटे नहीं रखना चाहिए l त्रिलोक जी का सदैव उत्तर रहता था कि उस समय के सामाजिक और राजनीतिक सरोकार अलग थे l आज का पाठक उस समय के हालात और सोच को क्या पसंद करेगा किन्तु मैं उनसे बराबर कहती रही यह सही है कि इतने लम्बे अरसे के सफर में पुराने समय की सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक परिस्थितियां अलग थीं और शायद आज की तारीख में हम उनसे सहमत न हों किन्तु बदलती परिस्थितियों के आज के आईने में हमें यह सोचने को विवश तो कर ही सकती हैं कि क्या सही हुआ था और क्या गलत l

मुझे प्रसन्नता है कि अभिषेक कश्यप जी ने इन संस्मरणों एवं यात्रा वृतांतों को पुस्तक के रूप में छापने की पहल की है l मैं उन्हें बधाई देती हूँ l इसके माध्यम से अनेक देशों के बुद्धिजीवियों, समाजशास्त्रियों, न्यायविदें, शिक्षाशास्त्रियों, पूर्व राजनयिकों आदि की अच्छी-खासी जानकारी पाठक को मिलेगी l

त्रिलोक जी एक संवेदनशील पत्रकार तो हैं ही, हर दिल अजीज हैं l उनके मित्रों की संख्या बहुत ही लम्बी चौड़ी है और वह हर परिस्थिति में दोस्तों का साथ देते हैं l कन्हैयालाल नंदन हमारे अच्छे मित्रों में से थे l जब वे सन्डे मेल में आये तो अक्सर सन्डे मेल के बारे में बात होती थी l जर्नलिज्म और पोलिटिक्स के सन्दर्भ में वे त्रिलोक दीप के सोच की तारीफ करते थकते नहीं थे l एक घटना मुझे याद आती है l जब नंदन जी दिनमान के एडिटर थे तब एक बार खवाजा अहमद अब्बास की एक कहानी 'सरदारजी' छपी थी l बहुत ज्यादा तो कुछ याद नहीं है पर

यह याद है कि उस समय एक बहुत बड़ा बबाल खड़ा हो गया था l बढ़ते-बढ़ते बात दिनमान के संपादक कन्हैयालाल नंदन के घर तक पहुँच गयी l

उन दिनों त्रिलोक दीप और अवध नारायण मुद्गल बराबर नंदन जी के साथ रहते थे - हर बख्त डर लगा रहता था, कहीं परिवार पर कोई संकट न खड़ा हो जाए l एक डर का वातावरण था l हिन्दू मुस्लिम जुडाव की जगह अलगाववादी विचारधारा का कारण बन गया था l बात मारने काटने तक पहुँच गयी l एक दिन सवेरे-सवेरे त्रिलोक जी, नंदन जी और डॉ. महीप सिंह हमारे घर पर आये मेरे पति को बताते हुए कहा कि अब आप ही कुछ उपाय निकालें जिससे यह मामला सुलझ जाए l मेरे पति टी. पी. झुनझुनवाला जी उन दिनों आयकर कमिश्नर थे उन्होंने काफी लोगों से बातचीत करके गुरूद्वारे के ग्रंथी जी और जामा मस्जिद के मौलवी साहब से संपर्क साधा, बातचीत की, और यह मामला सुलट गया l इस प्रकार एक विराट समस्या सुलझ गयी l 'संडे मेल' के प्रकाशन के स्थगन के बाद त्रिलोक जी डालमिया सेवा ट्रस्ट से जुड़े – डालमिया परिवार से हमारी जान-पहचान और रिश्तेदारी भी थी – श्री विष्णु हरी डालमिया और उनके पुत्र संजय डालमिया से मेरे पति ने ही दीप जी को मिलाया l वहां भी उन्होंने एक लम्बी पारी खेली l डालमिया सेवा ट्रस्ट के माध्यम से सामाजिक कार्यों में उनकी भागीदारी ने अनेक महत्वपूर्ण योजनाओं को साकार रूप दिया l इसके बाद त्रिलोक जी से गाहे-बगाहे ही मिलना होता रहा – वे अपने कार्य क्षेत्र में व्यस्त थे, मैं अपने l फिर भी फोन द्वारा बातचीत होती ही रही – वे एक बहुत अच्छे इन्सान, अच्छे मित्र हैं l मैं उनके स्वस्थ जीवन और दीर्घायु की कामना करती हूँ l ईश्वर से प्रार्थना है कि उनकी उर्जा इसी प्रकार बनी रहे l आशीर्वाद देती हूँ कि वे जीवन के सौ वसंत देखें और इसी प्रकार सक्रिय रहें l

□□□

संपर्क भाषा भारती के आगामी विशेषांक

जुलाई 2023

सुरेन्द्र सुकुमार (लब्धप्रतिष्ठ कथाकार एवं व्यंग्य कवि)

अगस्त 2023

डॉ धनंजय सिंह (लब्धप्रतिष्ठ नव-गीतकार)

एक युग के साक्षी रहे हैं त्रिलोक दीप जी

नीरज मनजीत, साहित्यकार, स्वतंत्र पत्रकार

त्रिलोक दीप जी से मेरा पहला परिचय फेसबुक के जरिए 2020 में हुआ। उन्होंने मेरा मित्र अनुरोध तत्काल स्वीकार कर लिया था। मैंने उनका शुक्रिया अदा किया, तो उन्होंने बताया कि कवर्धा और बेमेतरा (रायपुर, छत्तीसगढ़ के निकट के नगर) में उनके नज़दीकी रिश्तेदार रहते हैं और वे किशोरावस्था में कई दफ़ा बेमेतरा गए हैं। मैंने उनके रिश्तेदारों के नाम पूछे, तो मुझे साश्चर्य प्रसन्नता हुई कि उनके मौसा मेरी पत्नी के सगे चाचा थे। त्रिलोक दीप जी उम्र में मुझसे बड़े हैं। शीर्ष भारतीय पत्रकारिता में सुदीर्घ और महती योगदान तथा अनुभव की दृष्टि से तो वे मुझसे बहुत बड़े हैं। किंतु उनके इस परिचय के बाद पारिवारिक संबंध जुड़ने से हमारे बीच बड़े भाई--छोटे भाई का एक आत्मीय रिश्ता भी बन गया है। अतः मैं उन्हें सम्मानपूर्वक वीर जी ही कहता हूँ।

वैसे 1990 के आसपास जब वे 'संडे मेल' के कार्यकारी संपादक थे, उन्हीं दिनों रमेश नैयर जी दैनिक भास्कर के संपादक होकर 'ट्रिब्यून' चंडीगढ़ से रायपुर आए थे। वे अक़्सर त्रिलोक दीप जी का ज़िक्र करते थे। तब मन में चाहत होती कि कभी दिल्ली जाना होगा, तो उनसे रूबरू मिलने और बातचीत का सुअवसर मिलेगा। मगर कुछेक बार दिल्ली जाने पर भी ऐसा संयोग उन वर्षों में नहीं बन पाया। अंततः उनसे पहली मुलाक़ात दिल्ली में पिछले साल जून महीने में हुई। उन्होंने मेरे कविता संग्रह 'नीलमणि' के लोकार्पण कार्यक्रम में बतौर विशिष्ट अतिथि शामिल होने के मेरे अनुरोध को सहृदयता पूर्वक स्वीकार किया था। 'नीलमणि' का लोकार्पण पहले जनवरी के महीने में विश्व पुस्तक मेले में इंडिया नेटबुक्स के स्टॉल पर तय हुआ था। यह एक रस्मी कार्यक्रम होता है। उस वक़्त मैंने उनसे अनुरोध किया था कि इस कार्यक्रम के बाद दूसरे दिन शाम को प्रेस क्लब में मित्रों की मौजूदगी में आपके हाथों इसका विधिवत लोकार्पण करा लिया जाए। उन्होंने उदारतापूर्वक उत्तर दिया कि वैसे तो वे शाम के समय घर से निकलते नहीं हैं, मगर

मेरे लिए वे जरूर वक़्त निकालेंगे। मैंने फ्लाइट की टिकटें वगैरह करा लीं।

उन्हीं दिनों अकस्मात ही कोविड का ज़ोर फिर बढ़ गया और विश्व पुस्तक मेला स्थगित कर दिया गया। दूसरी बार पुस्तक का लोकार्पण 23 अप्रैल को तय हुआ। संसद के हिंदी विभाग के मित्र रणविजय राव के सहयोग से दिल्ली प्रेस क्लब में आयोजन की औपचारिकताएँ भी पूरी हो गईं। इस बार भी दुर्योग ने पीछा नहीं छोड़ा। इसी हफ़्ते बिलासपुर के एक कार्यक्रम से लौटने के बाद मुझे थोड़ा बुखार हो गया। कोविड का भय इस क़दर तारी था कि एक दफा फिर लोकार्पण स्थगित कर टिकटें कैंसल करानी पड़ीं। अंततः 19 जून को दिल्ली के हिंदी भवन में संग्रह का विधिवत लोकार्पण हो ही गया। मेरे लिए संतोष की बात थी कि त्रिलोक दीप जी बतौर विशिष्ट अतिथि इस कार्यक्रम में शामिल हुए। दरअसल यह कार्यक्रम साहित्यकार-पत्रकार-स्वतंत्रता सेनानी माधवराव सप्रे की स्मृति में रायपुर की साहित्यिक पत्रिका 'छत्तीसगढ़ मित्र' और 'हिंदुस्तानी भाषा अकादमी दिल्ली' ने मिलकर आयोजित किया था। ममता कालिया, प्रेम जनमेजय, अशोक माहेश्वरी, डॉ. सुशील त्रिवेदी, डॉ. संजीव कुमार, गिरीश पंकज, सुदीप ठाकुर, सुधीर शर्मा, रणविजय राव और सुधाकर पांडे ने भी कार्यक्रम में शिरक़त की।

त्रिलोक दीप जी ने अपने संबोधन में सप्रे जी को याद करते हुए रायपुर के अपने विद्यार्थी-काल के कई संस्मरण सुनाए। कार्यक्रम समाप्त होते रात हो गई थी और त्रिलोक जी को जल्दी घर जाना था, अतः उनसे लंबी बातचीत का सुअवसर नहीं मिला। इस आयोजन के बाद दूसरे दिन हम सब साहित्यकारों--रचनाकारों की टोली लेह--लद्दाख के प्रवास पर चली गई। वहाँ से लौटने के कुछ दिनों बाद त्रिलोक जी ने फ़ोन किया और कहा कि 'आप बहुत अच्छा लिख रहे हैं'। इस कॉम्प्लिमेंट के लिए उनका शुक्रिया अदा करते हुए, आभार प्रकट करते हुए इसे मैंने अपने लेखन की एक उपलब्धि के रूप में स्वीकार किया है। इसे मैं अपनी कमतरी और अपने संकोची स्वभाव को ही जिम्मेदार मानता हूँ कि उनसे लंबी बातचीत का अवसर नहीं मिला है। अगली बार दिल्ली प्रवास के दौरान उनकी सुविधानुसार उनसे भेंट और बातचीत का अच्छा सुअवसर होगा।

त्रिलोक दीप जी के पास उनके पत्रकारिता-काल के समृद्ध संस्मरणों का अद्भुत कोष है। दिल्ली की शीर्ष पत्रकारिता में रहते हुए उन्होंने राष्ट्रीय-अंतरराष्ट्रीय घटनाक्रम के एक युग को अपनी गहरी दृष्टि से काफी समीप से देखा है। इस दौरान अनगिनत बड़ी हस्तियाँ उनके संपर्क में आईं, उनसे बड़ी ही अच्छी बातचीत हुई, भेंटवार्ताओं में उनके व्यक्तित्व--कृतित्व को परखने का सुअवसर उन्हें मिला। इन सब हस्तियों से हुई भेंट और बातचीत को उन्होंने अपनी स्मृतियों में बड़े ही सुंदर भाव से सहेजा है। अपने पत्र या अपनी पत्रिका में तो उन्होंने अपने लेख के जरिए इसे प्रकाशित किया ही है, यह स्मृतियाँ सक्रिय पत्रकारिता से अवकाश लेने के बाद उनके संस्मरणों में बड़े ही सकारात्मक मित्रवत भाव से अभिव्यक्त हुई हैं। उनके लेखन की भाषा बड़ी ही सुंदर सहज सरल है और उसमें एक धीर शांत नदी का प्रवाह है। उनके संस्मरण और लेख हमें 'पठनीयता-आनंद', जिसे अँग्रेजी में 'रीडिंग प्लेज़र' कहते हैं, देते हैं।

उन्होंने अनेक विदेश यात्राएँ की हैं। इन यात्राओं में अनेक राजनयिकों और संस्था प्रमुखों से उनका परिचय हुआ। इन यात्राओं की बड़ी ही अच्छी रिपोर्ट्स उस वक़्त उनकी पत्र-पत्रिकाओं में छपी हैं। बाद में उन्होंने इन यात्राओं के संस्मरण अच्छी वर्णनात्मक शैली में लिखे हैं। ये संस्मरण किताब की शक्ल में भी उपलब्ध हैं और तत्कालीन वक़्त को समझने, उसका मूल्यांकन करने की एक दृष्टि देते हैं। एक और ख़ास बात का ज़िक्र मैं यहाँ जरूर करना चाहूँगा। तक़रीबन 50 वर्षों के पत्रकारीय कार्यकाल के अपने संपादकों, वरिष्ठ कनिष्ठ सहकर्मियों और मित्रों से जुड़ी यादों को बड़ी ही आत्मीयता से उन्होंने व्यक्त किया है। कुछ इस क़दर कि ये संस्मरण उन मित्रों के व्यक्तित्व--कृतित्व को एक विस्तार देते हैं। उनके मित्रों का दायरा काफी बड़ा है। इनसे जुड़ी छोटी-से-छोटी बात अथवा घटना को वे इस शिद्दत से अभिव्यक्त करते हैं कि पाठक भी उनके साथ उनकी यादों में ख़ुद को उनका सहभागी अनुभव करने लगता है। त्रिलोक दीप जी राष्ट्रीय हिंदी पत्रकारिता के एक ऐसे काल की मुख्यधारा में रहे हैं, साक्षी रहे हैं, जिसने भारतीय पत्रकारिता को एक रचनात्मक दिशा देने में बड़ी भूमिका निभाई है। उनके संस्मरणों की कुछ और किताबें आनी चाहिए। संभवतः वे इस दिशा में काम कर भी रहे होंगे। वे अनवरत लिखते रहें, स्वस्थ रहें, सक्रिय रहें। हम सबकी अशेष शुभकामनाएं उनके साथ हैं।

पता--हैप्पीनेस प्लाज़ा, नवीन मार्केट
कवर्धा, कबीरधाम, छत्तीसगढ़
491995
मोबाइल-- 96694-10338, 70240-13555

त्रिलोकदीप

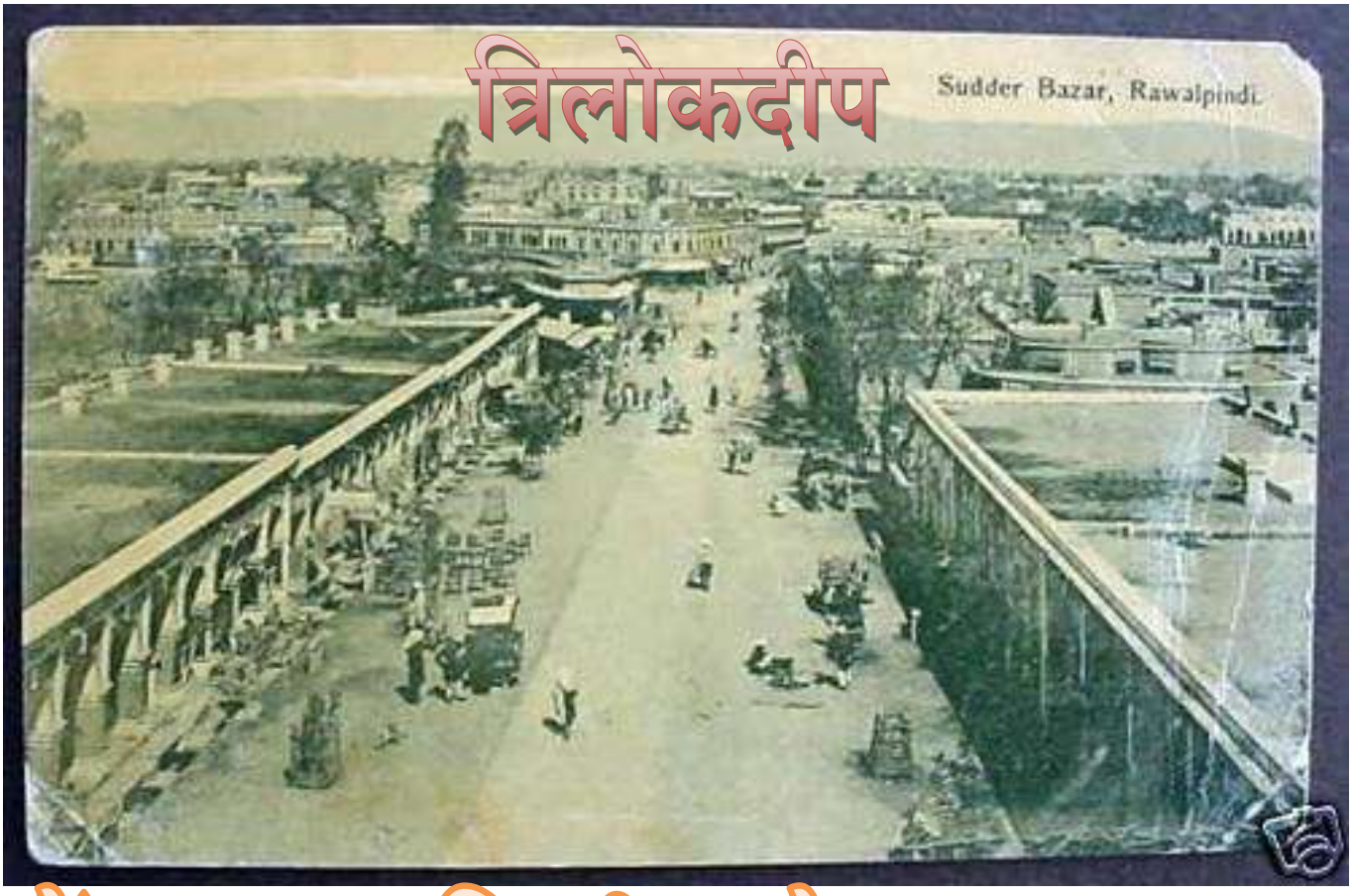

मैं, रावलपिंडी और रायपुर...

इन दोनों 'रा' का मेरी जिंदगी, खास तौर पर, मेरे बचपन से गहरा संबंध है। रायपुर से तो बहुत घना और भावनात्मक रिश्ता। पहले ज़िक्र रावलपिंडी का। मैं अविभाजित भारत में पैदा हुआ था 1935 में ।वह भाग अब पाकिस्तान कहलाता है ।जन्म तो मेरा ज़िला गुजरात की तहसील फालिया का है लेकिन पढ़ाई-लिखाई जितनी भी हुई वह रावलपिंडी के डेनीज़ स्कूल में हुई जो उस समय के बेहतरीन स्कूलों में समझा जाता था।वह स्कूल हमारे घर तोपखाना बाज़ार से कुछ दूरी पर था जहां मैं बस से जाया करता था। मेरा फुफेरा भाई सुरजीत सिंह मरीढ़ में रहता था।उसके घर से स्कूल ज़्यादा दूर नहीं था।वह या तो पैदल स्कूल आ जाता या उसका बड़ा भाई इक़बाल सिंह अपनी साइकिल पर उसे स्कूल छोड़ जाता ।सुरजीत मुझसे करीब एक साल बड़ा था।वह सातवीं कक्षा में पढ़ता था और मैं छठी क्लास में ।लेकिन दोपहर को स्कूल की बिल्डिंग की मुड़ेर पर हम लोग साथ बैठकर खाना खाते थे।मेरी बुआ करतार देवी बहुत अच्छा खाना बनाती थीं। मेरे फूफा जोधसिंह की मरीढ़ में बहुत बड़ी दुकान थी जहां दुनिया भर का सामान मिलता था।उनका बहुत खूबसूरत घर था जो दुकान से ज़्यादा दूर नहीं था ।मैं कभी कभी बुआ के घर रुक जाया करता था।उनके हाथ की गुलाबी रंग की चाय मुझे बहुत अच्छी लगती थी।मेरी खातिर इसलिए भी होती थी क्योंकि मैं उनका अकेला भतीजा था। मुझे अपनी चारों बुआओं और चाचा परमानंद जी का भी खूब प्यार मिला।

लेकिन 1947 में सभी कुछ गड़बड़ा गया। पहले मार्च में दंगे हो गये जिसके कारण हम लोगों को करीब दो हफ्तों तक सेना के संरक्षण में कैंपों में रहना पड़ा ।बाद में अमन होने पर भी लोगों के मन में धुकधुकी लगी रहती थी।स्कूल खुल गये और हम दोनों भाई मिलते भी थे लेकिन स्थिति की गंभीरता से उस वक़्त वाकिफ नहीं थे।महात्मा गांधी जिस सभा में सभी लोगों से अमन रखने की अपील कर रहे उसमें मैं भी उपस्थित था।उनके साथ एक लंबा सा पठान भी था जिसका नाम लोगों ने खान अब्दुल गफ्फार खान बताया था।उस वक़्त रावलपिंडी में जिस तरह से लोग डरे हुए थे उन्हें यकीन नहीं हो रहा था कि अब खून खराबा रुकने वाला है। मेरे पिता अमरनाथ जी असहज महसूस करने लग गये थे,वह इसलिए भी कि उनके मुस्लिम पार्टनर ने उन्हें सलाह दी थी कि तुम अपने बेटे के बाल कटवा दो और मज़े से

अपने भाई और बेटे के साथ यहीं हमारे साथ रहो । पिता जी को यह सुझाव अखर गया ।हम लोगों ने विभाजन से पहले ही रावलपिंडी का अपना घर छोड़ने का यह सोच कर फैसला कर लिया कि हालात सामान्य होने पर हम लोग लौट आयेंगे ।पर ऐसा हो न सका ।मेरे चाचा पोस्ट ऑफ़िस में काम करते थे उन्होंने अपना ट्रांसफर बंबई (वर्तमान मुंबई) करा लिया ।अपने रिश्तेदारों को भी हमने रावलपिंडी छोड़ने की खबर दे दी,अपनी मरीढ़ वाली बुआ को भी ।

5 अगस्त, 1947 को रावलपिंडी छोड़ लाहौर आये।लाहौर से दूसरी ट्रेन लेकर लखनऊ पहुंचे तथा वहां से छोटी लाइन की गाड़ी शायद त्रिहुद एक्सप्रेस ले 7 अगस्त को टिनिच (जिसे आमा बाज़ार भी कहते हैं) पहुंच गये ।वहां के कुछ लोगों से हमारे पिता जी का परिचय पहचान थी।हमारे वहां पहुंचने के कुछ दिनों के बाद बड़ी बुआ भायांवाली, फूफा प्यारामल और उनके बच्चे तथा मेरे दो मामा प्रेमसिंह और संतोखसिंह सलूजा भी पहुंच गये,तीसरा प्रतापसिंह अपने गांव कैलू में फंस गया अपने माता पिता के साथ। मेरे नानी नाना का तो कत्ल हो गया लेकिन मामा बच गया जो किसी काफिले में शामिल होकर भारत सुरक्षित पहुंच गया।वह भी हमारे साथ टिनिच में ही रहने लगा। हम और हमारी बुआ एक मकान में रहे जबकि मेरे मामा दूसरे मकान में एक साथ।टिनिच बस्ती ज़िले में है और वह हमारा अस्थायी ठौर था ।टिनिच में सबसे बड़ा फायदा यह हुआ कि मुझे हिंदी लिखनी और पढ़नी आ गयी जो मैं पहले बिल्कुल नहीं जानता था ।रावलपिंडी में उर्दू मीडियम था और साथ में अंग्रेज़ी भी।लेकिन नुकसान कहीं ज़्यादा हो गया। टिनिच को रेललाइन ने उसे दो भागों में बांट रखा है ।बाज़ार छोटे छोटे ही हैं-मकानों के साथ ही।एक दिन किसी काम से बाज़ार गया।हलवाई की दुकान के पास से गुज़र रहा

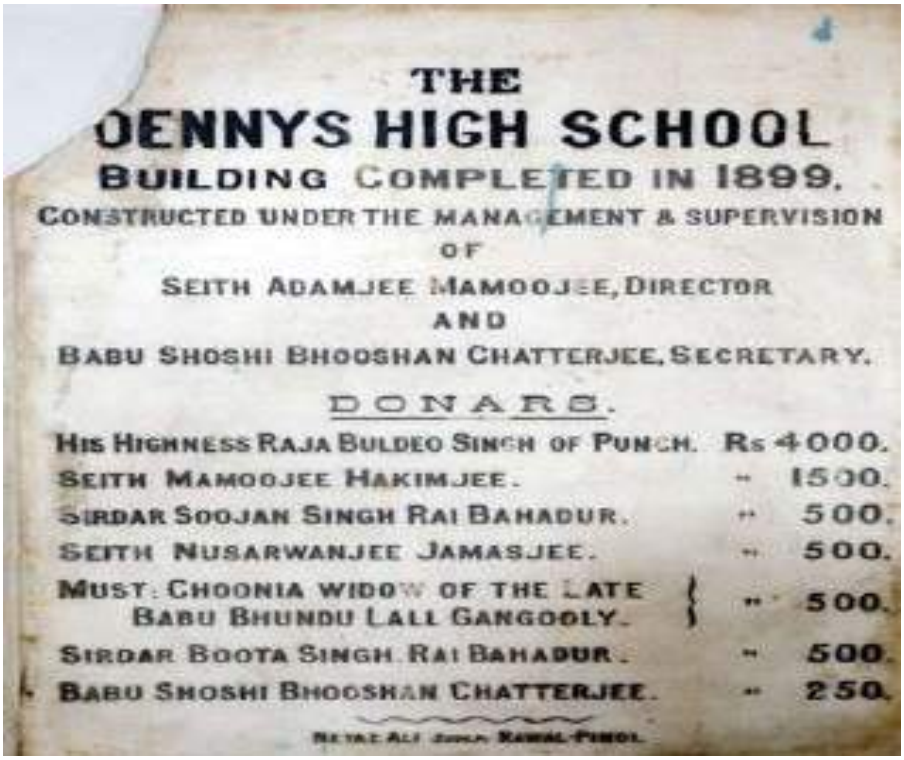
THE
OENNYS HIGH SCHOOL
BUILDING COMPLETED IN 1899.
CONSTRUCTED UNDER THE MANAGEMENT & SUPERVISION
OF
SEITH ADAMJEE MAMOOJEE, DIRECTOR
AND
BABU SHOSHI BHOOSHAN CHATTERJEE, SECRETARY.

DONARS.

His Highness Raja Buldeo Singh of Punch.	Rs	4000.
Seith Mamoojee Hakimjee.	"	1500.
Sirdar Soojan Singh Rai Bahadur.	"	500.
Seith Nusarwanjee Jamasjee.	"	500.
Must: Choonia widow of the late Babu Bhundu Lall Gangooly.	"	500.
Sirdar Boota Singh Rai Bahadur.	"	500.
Babu Shoshi Bhooshan Chatterjee.	"	250.

था कि उसकी कढ़ाई में खौलते हुए तेल की एक बूंद मेरी बाईं आंख में

पड़ गयी और मैं दर्द से कराह उठा। जितना कुछ उपचार घर और पड़ोसियों से पूछकर हो सकता था,हुआ।तब वहां कोई हकीम या डॉक्टर उपलब्ध नहीं था। इस घरेलू इलाज के बाद जब मैंने आंख खोल कर देखी तो सभी कुछ धुंधला धुंधला नज़र आ रहा था।आज भी वह आंख ज्यों की त्यों है,उसका कोई इलाज नहीं ।दूसरी दुर्घटना मेरे पिता के साथ घटी ।उन्हें एक बिच्छू ने काट लिया ।उनके इलाज के लिये उन्हें कई जगह ले गये।यहां भी हकीम और डॉक्टर की कमी हमें झाड़फूंस करने वालों की शरण में ले गयी । अंततः उन्हें तीन दिन बाद होश आया।अब मन उचाट हो गया था ।रायपुर में मेरी बड़ी मौसी द्रौपदी रहती थी उन्होंने हमें अपने यहां आने की सलाह दी।लिहाजा हम लोगों ने जब टिनिच छोड़ने का मन बना लिया तो हमारे फूफा और बड़े मामा भी तैयार हो गये जबकि छोटे मामा दिल्ली अपनी छोटी बहन के यहां चले गये ।इस तरह से हम लोग अप्रैल,1949 को रायपुर आ गये।

हम लोगों ने आज़ाद चौक के पास ब्राह्मणपारा में एक मकान किराये पर लिया जहां बड़े मामा प्रेमसिंह के साथ रहे और फूफा जी कंकाली पारा में अपने परिवार के साथ ।हमारा मकान था तो काफी बड़ा लेकिन रात को उधर से जाने में डर लगता था वह इसलिये क्योंकि बीच में एक टूटा हुआ मकान पड़ता था। सौभाग्य से हमारे मकान के सामने रहने वाले पड़ोसी बहुत नेक थे। दो भाइयों का परिवार रहता था कमल नारायण और सत्यनारायण शर्मा।कमल नारायण वकील थे जबकि सत्यनारायण राजनीति में ।सत्यनारायण से मेरी खूब पटती थी और उन्हें मैं 'सत्तू' भैया कहता था । हमारे मकान मालिक का एक भांजा था भुवन मिश्र,वह भी हमारे मकान की पहली मंज़िल पर रहता था और उनका भाई भी ।मकान मालिक थे शारदा प्रसाद जी ।बहुत सज्जन पुरुष थे। दिल्ली हो आये थे,वहां के किस्से सुनाते थे। उनकी एक बहन अमृतसर चली गयी थी।उनकी दो बेटियां थीं ।वे लोग महीने भर के लिए रायपुर आयीं थीं ।घर में खूब रौनक हो गयी थी और उन्होंने अपनी उपस्थिति से पूरा का पूरा माहौल पंजाबी बना दिया था।ब्राह्मणपारा में जिन और लोगों से मेरा परिचय हुआ उनमें घनश्याम तिवारी और विष्णु जी थे। घनश्याम जी बहुत संपन्न परिवार से थे जबकि विष्णु जी नगरपालिका में काम करते थे।भुवन मिश्र पढ़ते थे और रात को 'दैनिक महाकोशल' के संपादकीय विभाग में काम भी करते थे जिससे मेरे एक

अन्य मित्र कुमार साहू भी जुड़े हुए थे।

उस समय सबसे बड़ा प्रश्न मेरी शिक्षा को लेकर था ।मेरी पढ़ाई के दो बरस पहले ही बरबाद हो चुके थे। तब रायपुर में दो प्रमुख स्कूल थे सेंट पॉल और माधवराव सप्रे हाई स्कूल (पुराना नाम लॉरी स्कूल) और दो ही कॉलेज थे छत्तीसगढ़ कॉलेज और राजकुमार कॉलेज । राजकुमार कॉलेज में शाही परिवार के बच्चे पढ़ा करते थे।मेरे मौसा ज्ञानचंद छाबड़ा के साथ मेरे पिता अमरनाथ जी मुझे इन स्कूलों में ले गये जहां मुझे माधवराव सप्रे स्कूल में छठी कक्षा में एडमीशन मिली ।1947 में रावलपिंडी में भी मैं छठी क्लास में पढ़ता था । अब पढ़ना तो था ही, दाखिल हो गये ।नयी नयी हिंदी सीखी थी, शुरू शुरू में दिक्कत आयी लेकिन नवीं कक्षा तक पहुंचते पहुंचते पारंगत हो गये और हमें टीचर मिले थे स्वराज्य प्रसाद त्रिवेदी जिन्होंने मुझे गढ़ा और इस योग्य बना दिया ताकि मैं पूरे आत्मविश्वास के साथ लिखूं।उन्होंने ही मुझे अज्ञेय, प्रेमचंद, शरतचंद्र, बंकिमचन्द्र,यशपाल,धर्मवीर भारती आदि साहित्यकारों की पुस्तकें लाकर पढ़ने को दीं। उसी समय अज्ञेय,यशपाल और धर्मवीर भारती से मिलने की इच्छा मन मे बलवती हो गयी थी।संयोग देखिये कि अज्ञेय जी से न केवल भेंट ही हुई बल्कि उनसे पत्रकारिता के गुर भी सीखे।भारती जी से भी मुंबई में उनके घर मुलाकातें हुई थीं सुदीप के साथ और मुंशी प्रेमचंद के बड़े बेटे श्रीपत राय ने अपनी पत्रिका 'कहानी' में न केवल मेरी कहानियाँ ही छापी बल्कि वह दिल्ली में मेरे घर आये और मैं उनके यहां भी गया।

माधवराव सप्रे स्कूल में जिन और अध्यापकों और सहपाठियों की याद आ रही है उनमें हमारे हैडमास्टर कन्हैयालाल शर्मा, उनके नंबर दो बालकृष्ण,जिन्हें हम लोग बोगी कहते थे,भूगोल के टीचर बी सिंह, सेन मास्टर साहब, दुबे,अग्रवाल और अवधिया मास्टर साहब भी खूब याद हैं ।दुबे जी अंग्रेज़ी पढ़ाते थे तो अग्रवालजी विज्ञान।भूगोल के बी सिंह टीचर ने ही बताया था कि दुनिया का सबसे ठंडा स्थान साइबेरिया में व्लादिवोस्टक है और सबसे लंबी 9290 किलोमीटर ट्रेन ट्रांस साइबेरियन रेल है जो मास्को से व्लादिवोस्टक के बीच चलती है। दिल के किसी कोने में इसे देखने की चाहत हुई जो 1987 में पूरी हुई। साइबेरिया भी गया और इर्कुत्स्क स्टेशन पर इस ट्रेन के भीतर जाकर देखने और यात्रियों से मिलने का अवसर भी मिला।और सहपाठियों में हरदेव बहल,रसिक,बसंत, रमणीकलाल चावड़ा आदि याद हैं और याद है स्कूल की वह पत्रिका जो मैंने और रसिक ने अवधिया मास्टर साहब और बहल की पत्रिका के जवाब में निकाली थी ।इसपर अवधिया मास्टर साहब बहुत खफा हुए और उनकी नाराज़गी भी काफी समय तक झेलनी पड़ी थी।

वह दिन मैं कैसे भूल सकता हूं जब स्कूल की फैंसी ड्रेस प्रतियोगिता में शिवजी बना करता था और मेरे माथे पर तीसरा नेत्र रसिक लगाया करता था।रसिक बहुत ही खूबसूरत था जो रायपुर के प्रसिध्द जौहरी का बेटा था ।ऐसा एक और अज़ीज़ दोस्त था कमल बाजपई जो वहां के मशहूर राजनेता शारदा चरण तिवारी का भांजा था।रायपुर का शारदा चौक उन्हीं के नाम पर है ।तब उनके तीन सिनेमाघर होते थे-शारदा,मनोहर और बूढ़ापारा के पास श्याम ।पहली रंगीन फिल्म 'आन' श्याम टाकीज में लगी थी । जिन दिनों मैं रायपुर में था तब राजकमल टाकीज बना ही बना था जिसमें वी शांताराम की फिल्म 'दहेज' लगी थी। उन दिनों हमारे स्कूल का कम्पाउंड बहुत बड़ा था और उसकी दीवार से ही सटा था लड़कियों का दानी स्कूल ।उसके थोड़ी दूर था बूढ़ा तालाब।तपती गर्मी से राहत देने के लिए जब बारिश होती तो अगले दिन अपने स्कूल के कम्पाउंड का चक्कर लगा कर खुंबें तलाशता था जो प्रकृति की देन होती थीं । वे मुझे काफी मात्रा में मिल भी जाया करती थीं ।मेरी माँ उन खुंबो को बड़े चाव से बनाती थीं ।उन्हीं खुंबो की तर्ज पर आजकल मशरूम बाज़ार में आ गयी

है ।कुछ खास स्थानों पर दिल्ली में भी खुंबें मिल जाती हैं जो बहुत महंगी होती हैं ।

उन दिनों रायपुर मध्य भारत में था और उसकी राजधानी थी नागपुर और मुख्यमंत्री थे पंडित रविशंकर शुक्ल (श्यामाचरण तथा विद्याचरण शुक्ल के पिता)। जब भी वह रायपुर आते तो आज़ाद चौक से ही होकर गुजरते थे ।उन्हें अक्सर हम देखा करते थे।'दैनिक महाकोशल' और शुक्ला ट्रांसपोर्ट के वह ही मालिक थे ।गुजरात राज्य अस्तित्व मे नहीं आया था।वह बंबई (अब मुंबई) का भाग था और मुख्यमंत्री थे मोरारजी देसाई। 1956 में राज्य पुर्नगठन आयोग की सिफारिश पर गुजरात सहित कई राज्य वजूद में आये था।तब रायपुर मध्यप्रदेश का एक ज़िला बन गया।छत्तीसगढ़ तो 1 नवंबर,2000 में बना ।हमारे वक़्त रायपुर एक प्यारा-सा compact शहर था जहां आम तौर पर हम पैदल ही एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाया करते थे,चाहे रेलवे स्टेशन के पास गुरुद्वारा हो,शारदा चौक,गोल बाज़ार,सती और सदर बाज़ार ।गोल बाज़ार में कसिमुद्दी (इस नाम की डॉ सुशील त्रिवेदी ने भी पुष्टि की है) की स्कूल की किताबों की दुकान हुआ करती थी।गोल बाज़ार मुख्य बाज़ार था जहां दुनिया भर की चीज़ें मिलती थीं ।वहां पर जिन्स की भी दुकानें थीं ।छत्तीसगढ़ी चावल और साबुत अरहर की दाल मैं वहीं से लाता था।थोड़ा सा बाहर जाने पर अपने घरों में बैठीं औरतें बीडियां बनाया करती थीं ।उसी गली में मेरे दोस्त डॉ जोगिंदर सिंह सलूजा का घर था। यह गली आगे जाकर हिन्दू स्कूल से होती हुई तात्यापारा की तरफ निकल जाती थी। शारदा चौक से सीधे सडक तो सर्किट हाउस की तरफ चली जाती थी,बाईं ओर नगरपालिक का ऑफ़िस था और उसके सामने पोस्ट ऑफ़िस।आगे जाते हुए बाबूलाल टाकीज था और थोड़ा आगे जाकर दाईं तरफ कमल सिनेमा और उसके साथ सब्ज़ी मंडी।

ब्राह्मण पारा के अपने घर से हम लोग सती बाज़ार में जयहिन्द कमर्शियल इंस्टीटयूट (1954-55 में मैंने यहीं से अंग्रेज़ी और हिंदी की टाइपिंग सीखी थी) के सामने की गली से बूढ़ापारा से होते हुए जाया करते थे । बूढ़ापारा में ही उन दिनों विद्याचरण शुक्ल रहा करते थे। हमारे स्कूल का कम्पाउंड बहुत बड़ा था ।सुबह सभी लोग ड्रिल किया करते थे और हैडमास्टर कन्हैयालाल शर्मा हम बच्चों को अनुशासन का पाठ पढ़ा जाते। सती बाज़ार से सीधे आगे सदर बाज़ार और उसका थाना था ।थोड़ा और आगे जाने पर बसावट के बाद खुली सड़क । जहां बसावट खत्म होती थी उसके बाईं ओर एक पार्क था जिसे रायपुर का एकमात्र बड़ा और सेंट्रल पार्क माना जाता था ।उसी पार्क में मेरे मित्र दिलबाग सिंह ने ये फोटो खींची थीं जो इस पोस्ट के साथ हैं ।दिलबाग सिंह रायपुर के स्वर्गीय महापौर बलबीर सिंह जुनेजा के मामा थे।

(रायपुर और उससे लगे स्थानों की बहुत सी यादें हैं जिन्हें मैं अपने अगले पोस्ट में साझा करूँगा)

शुरुआत रावलपिंडी से ही करता हूं ।मैंने महात्मा गांधी को देखा था और उनके साथ ही देखा था खान अब्दुल गफ्फार खान को । गांधी जी को दूसरी बार देखने का मौका नहीं मिल सका क्योंकि हम लोग रावलपिंडी से टिनिच (ज़िला बस्ती) आ गये थे। वहां गलतफहमियों का शिकार अलबत्ता हो गये थे।

30 जनवरी, 1948 को गांधी जी की हत्या हुई तो किसी ने अफवाह फैला दी कि किसी रिफूजी ने उनकी हत्या कर दी है ।हमारे माता पिता एक बार सकते में आ गये यह सोच कर कि अगर अब की बार फिर मार्च, 1947 जैसे हालात पैदा हो गये तो हमें कौन बचायेगा और यहां से हम कहां जायेंगे ।लेकिन धुंध जल्दी ही छंट गयी और हम लोगों ने राहत की सांस ली।

दूसरी तरफ 35-40 बरस बाद खान अब्दुल

गफ्फार खान से दिल्ली में अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान (ऐम्स) में जब मिला तो वह रावलपिंडी वाली जनसभा का ज़िक्र सुनकर बहुत खुश हुए।वह इसलिए कि अभी तक मुझे उस 'आप बीती' तथा गांधी जीऔर उन्हें दूर से देखने वाले दृश्य का स्मरण था ।उन्होंने बताया कि मैं गांधी जी को बीच में छोड़कर पेशावर चला गया था, क्योंकि वहां दो माह बीत जाने के बावजूद अभी भी लोगों में असुरक्षा की भावना थी। जब मैंने उन्हें बताया इसी आशंका के चलते हम लोगों ने विधिवत स्वाधीनता से पहले अपना घरबार छोड़ दिया था।हमारे मां बाप ने शायद सोचा होगा कि जब आज़ादी का पूर्वाभ्यास ऐसा खतरनाक हो सकता है तो बँटवारे के हक़ीक़ी शक्ल अख्तियार करने के बाद कैसा होगा, इसकी कल्पना करके ही रौंगटे खड़े हो जाते हैं ।मेरी कहानी सुनने के बाद खान अब्दुल गफ्फार खान उदास हो गये और बोले कि 'हम पठानों के आत्मसम्मान की परवाह भी किसी ने नहीं की। हमारे हाथ पांव बांध कर हमें भी पाकिस्तानी हुक्मरानों जैसे 'दुश्मनों' के सामने फैंक दिया गया।

उन्होंने हम पर कैसे कैसे ज़ुल्म ढाये ये आप सपने में भी नहीं सोच सकते ।मैं पन्द्रह साल तक अंग्रेज़ों की जेलों में रहा और पन्द्रह बरस ही पाकिस्तान की जेलों में ।अंग्रेज़ों की जेल पाकिस्तानी जेलों से सौ गुना बेहतर थी।मेरे जेल में होने का फायदा उठाते हुए वहां के हुक्मरानों ने हज़ारों की तादाद में खुदाई खितमतगारों को मौत के घाट उतार दिया ।खुदाई खितमतगार खान अब्दुल गफ्फार खान की ऐसी संस्था थी जिसका मूलमंत्र है कि 'खुदा के जीवों की खिदमत यानी सेवा करना'। ये लोग अपनी सुर्ख पोशाक से पहचाने जाते थे जिसे ये 'लाल कुर्ती' भी कहते हैं ।पाकिस्तान के झांसे में आकर जो हिंदू-सिख वहां रह गये उनके साथ भी ऐसा ही अमानवीय बर्ताव किया गया जैसे मेरे और मेरे खुदाई खिदमतगारों के साथ किया गया।'दिनमान' के लिए किए गये इस विशेष और बेबाक इंटरव्यू की बहुत चर्चा रही।

रावलपिंडी के साथ बहुत से ऐसे लोगों का जुड़ाव है जिन्हें मैं किसी न किसी तरह से जानता हूं ।उत्तमसिंह दुग्गल वहां के नामी ठेकेदार थे जो तोपखाना बाज़ार के निकट बाइस नंबर चुंगी में रहते थे। उन्होंने भी मार्च, 1947 में अपने घर में लोगों को वैसे ही पनाह दी थी जैसे तोपखाना बाज़ार में मंगतराम ने दी थी।सेना की मौजूदगी में ही उन्होंने लोगों को कैंपों में जाने दिया।बताया जाता है कि उत्तमसिंह दुग्गल रावलपिंडी से अपनी कार चलाकर दिल्ली आये थे।जी टी रोड से रावलपिंडी से दिल्ली तक की दूरी करीब एक हज़ार किलोमीटर है । दिल्ली में भी उन्होंने ठेकेदारी शुरू की। बलराज और भीष्म साहनी भी रावलपिंडी जन्मा हैं ।दोनों भाई अपने अपने क्षेत्रों में ख्यातिप्राप्त हैं। 1990 में अपनी पाकिस्तान यात्रा के दौरान इस्लामाबाद में मेरी मुलाकात पूर्व कुलपति प्रो. ख्वाजा मसूद से हुई थी।वह दोनों भाइयों और उनके साथ कुछ मित्रों को बड़ी शिद्दत से याद कर रहे थे।उन्होंने बताया कि हम लोग मिलकर 'लोटस' नाम का एक पेपर निकाला करते थे।सामग्री को लेकर खूब चर्चा हुआ करती थी।हम लोग सभी थे तो वामपंथी विचारों के बावजूद इसके किसी न किसी नुक्ते को लेकर बहस लंबी खिंच जाया करती थी ।प्रो. ख्वाजा मसूद से मुलाकात एक सेमिनार के सिलसिले में हुई थी जो हम 'संडे मेल' के सौजन्य से दिल्ली में करना चाहते थे।उसका विषय था: 'भारत- पाकिस्तान संबंध:मैत्री और भाईचारा'। 'संडे मेल' के लाहौर जन्मा मालिक संजय डालमिया का मानना है कि राजनीतिक स्तर पर दोनों देशों के संबंध तो सुधरने से रहे लिहाजा हमें गैरराजनीतिक स्तर पर दोनों देशों के बीच मैत्री और भाईचारे की भावना विकसित करने के प्रयास करने चाहिए ।ऐसी सोच के लोगों की तलाश में ही मैं पाकिस्तान गया था । लाहौर, इस्लामाबाद, रावलपिंडी, पेशावर और कराची में मुझे बड़ी तादाद में ऐसी सोच वाले लोग मिल गये।यहां तक कि मुज़फ्फाराबाद से भी लोग इस सेमिनार में शिरकत करने के चाहवान दीखे ।पाकिस्तान के प्रोटोकोल अफसर ख्वाजा की मेहरबानी से मैं एक दिन के लिए मुज़फ्फाराबाद भी हो आया था और पेशावर के आगे हयाताबाद भी ।वहां से अफगानिस्तान बॉर्डर ज़्यादा दूर नहीं है।

मेरे और जो मित्र, साथी, परिचित रावलपिंडी से ताल्लुक रखते हैं उनमें प्रमुख हैं मेरे अज़ीज़ कमलेश कुमार कोहली ।हम दोनों किसी न किसी बहाने रावलपिंडी को याद करते हैं और बचपन के उन सालों को भी जो हमने वहां बिताये थे।पत्रकार विवेक शुक्ला रावलपिंडी का नाम सुनकर भावुक हो जाते

हैं और उनके जेहन में वे सभी यादें उभर आती हैं जो उनके पिता ने उनसे साझा की थीं ।उनके पिता रावलपिंडी जन्मा थे और डेनीज़ स्कूल में पढ़ते थे।एक और पत्रकार विनोद मेहता भी रावलपिंडी की पैदाइश हैं । वह भी डेनीज़ स्कूल के छात्र रहे हैं उसकी पेशावर ब्रांच में ।गीतगार शैलेंद्र का जन्म भी रावलपिंडी में हुआ था। उनके जीवनी के संपादक इंद्रजीत सिंह का कहना है कि रावलपिंडी जब वह छोड़े थे तो काफी छोटे थे फिर भी उनके जेहन में कुछ हल्की-सी यादें थीं जिनका ज़िक्र वह यदाकदा पेशावर में जन्मे राज कपूर से किया करते थे।

अब चलते हैं रायपुर की ओर ।जैसा मैंने पहले लिखा रायपुर 1949 में, जिन दिनों मैं वहां रहता था, बहुत खुला खुला शहर था,अक्सर हम बच्चे लोग एक जगह से दूसरी जगह पैदल ही आया जाया करते थे। एक स्थान जो हमारे घर से दूर था वह था फाफाडी ।वहां हम लोगों को जाने के लिए रिक्शा करना पड़ता थे । हमारे दादा सुंदरसिंह जुनेजा जी वहां रहते थे ।उनके दो बेटे इंदर सेन और भगवंत सिंह थे।इंदर सेन सहजधारी थे जबकि भगवंत सिंह केशधारी। दोनों भाई मुझे बहुत प्यार करते थे ।रिश्ते में वह दोनों मेरे चाचा लगते थे।मेरे साथ मेरे माता पिता भी रहते थे। सुंदरसिंह जुनेजा जी मेरे दादा गोबिंदराम जुनेजा के चचेरे भाई थे। फालिया में हम लोगों के घर साथ साथ थे।हम लोगों का गुरुद्वारे के पीछे और उनका एक कोने में काफी बड़ा हवेलीनुमा मकान था।मेरे दादा का ज्ल्दी देहांत हो गया था लेकिन सुंदरसिंह जुनेजा जी ने हमें उनकी कमी नहीं खलने दी ।रायपुर में रहते हुए भगवंत की शादी हुई और उनकी बारात गोंदिया गयी थी जिसमें मैं भी शामिल हुआ। गोंदिया में मेरी ओर भी कुछ लोग आकर्षित हुए थे। रायपुर लौटने पर दादा सुंदरसिंह जी ने मेरे रिश्ते की बात चलायी । तब मेरे पिता जी का निधन हो चुका था।मेरी माँ ने बड़ी विनम्रता से यह कहकर उनसे माफी मांग ली कि बच्चे को अभी आगे पढ़ना है ।मेरा भी रायपुर में किसी के प्रति आकर्षण था जिसने मुझे जुनेजा से 'दीप' बनाया ।जुनेजा तो स्कूल और कॉलेज के प्रमाणपत्रों तक सीमित रहा।

जब मैं 'संडे मेल' में कार्यकारी संपादक था तो किसी खास स्टोरी के लिए रायपुर आया था और बेबीलोन होटल में ठहरा था।मुझे जब पता चला कि बलबीरसिंह जुनेजा यहां के महापौर हैं तो उनसे मिलने का मन किया ।शायद रमेश नैयर ने उनसे मेरी भेंट निश्चित की थी।जब मैं बलबीरसिंह जुनेजा से उनके ऑफ़िस में मिलने के लिये पहुंचा तो उन्होंने खड़े होकर मेरा स्वागत किया ।अपना परिचय देते हुए उन्हें अपने रिश्ते के बारे बताया कि उनके दादा सुंदरसिंह जुनेजा और मेरे दादा गोबिंदराम जुनेजा दोनों चचेरे भाई थे लेकिन मेरे दादा का जल्दी निधन हो जाने से उन्होंने मेरी इस कमी को कभी महसूस नहीं होने दिया । बलबीर जी ने मेरे दोनों हाथ अपने हाथों में भींच कर गले लगाया।हम दोनों भाई जो थे। बलबीर जी ने बताया कि उनके पिता इंदर सेन और माता शांति रानी यहां नज़दीक ही हैं, आप उनसे मिल लें ।उन्होंने मुझे अपनी गाड़ी से अपने माता पिता से मिलने के लिए भेजा ।जब मैंने चाचा और चाची जी को पैरी पौना किया तो पहली नज़र में उन्हें मुझे पहचानने में दिक्कत पेश आयी ।एक बार पहचान लेने पर गले लगाया और परिवार तथा काम के बारे में पूछा ।उन्हें यह जानकर खुशी हुई कि मैं पत्रकारिता के क्षेत्र में कार्यरत हूं ।चाची जी का एक भाई दिलबाग सिंह मेरा गहरा दोस्त था ।उनके छोटे भाई और बहन से भी मैं परिचित था।वे लोग तात्यापारा में रहते थे और हम लोग भी । रायपुर में रहते हुए यह जानकर अच्छा लगा कि बलबीरसिंह जुनेजा वहां के लोकप्रिय महापौर हैं। उन्होंने मेरे फुफेरे भाई हरबंससिंह सलूजा तथा अन्य कुछ रिश्तेदारों से मिलने के लिए गाड़ी का प्रबंध किया ।उनकी यह सहृदयता दिल को छू गयी । लेकिन युवा अवस्था में उनके निधन की खबर पाकर मन बहुत दुखी हुआ। बलबीरसिंह से हुई यह मुलाकात आज भी मेरे दिल में बाविस्ता है ।

रायपुर रेलवे स्टेशन के निकट एक गुरुद्वारा था (शायद अब भी है ।उस समय वही एक बड़ा गुरुद्वारा था) जहां मैं हर इतवार को जाया करता था। उस दिन गुरुद्वारे में बहुत संगत आती थी, छुट्टी का जो दिन होता था। सभी व्यवसायों के लोग मिला करते थे,नौकरीपेशा भी। उन्हीं दिनों रायपुर में एक सिख डीआईजी आये थे।उनकी पंजाबी बिरादरी के अलावा पूरे शहर में बहुत इज़्ज़त थी उनके काम के कारण ।वह भी सपरिवार इतवार को गुरुद्वारे आते थे, अपनी पत्नी और दो बेटियों के संग

। मैं आम तौर सुबह जोड़ों की सेवा करता था और कुछ समय बाद ऊपर गुरुद्वारे में जाकर कीर्तन सुनता था।एक दिन डीआईजी साहब ने पूछा कि कहां रहते हो।घर में कौन कौन है ।किसी दिन मुझसे मिलो। उनके आदेश के मुताबिक एक दिन मैं अपनी साइकिल पर सवार होकर उनके बंगले पर जा पहुंचा ।चाय आ गयी। उसे पीते समय मैंने उन्हें बताया कि मैं अपने माता पिता का इकलौता बेटा हूं ।माधवराव सप्रे स्कूल से माध्यमिक शिक्षा प्राप्त कर टाइपिंग सीखी है और इस वक़्त वनसंरक्षक विभाग में नौकरी करता हूं ।मेरे पिता जी का 1952 में निधन हो गया था।मेरे चाचा जी चाहते हैं कि मैं दिल्ली आ जाऊं ।वहीं मैं प्राइवेटली इंटरमीडिएट और स्नातक की परीक्षा दे लूंगा । उन्होंने बड़े गौर से मेरी बातें सुनीं और अपनी धर्मपत्नी से भी परिचय कराया। उनकी दो जवान बेटियाँ थीं ।उसके बाद गुरुद्वारे में भेंट होती रही।एक दिन मैंने उन्हें बताया कि मैं दिल्ली जा रहा हूं और लोकसभा सचिवालय में मेरा इंटरव्यू है ।उन्होंने मेरे कंधे पर हाथ रखकर मुझे अपनी शुभकामनाएं दीं ।हो सकता है कि मुझे लेकर उनके जेहन में कुछ रहा हो।उन्होंने कुछ नहीं बताया और मेरा पूछना तो बनता नहीं था ।

उस गुरुद्वारे में दो महत्वपूर्ण कार्यक्रम हुआ करते थे-गुरु नानक देव की जयंती संबंधी समारोह तथा बैसाखी पर्व पर ।गुरु नानक जयंती से एक दिन पहले जुलुस निकलता था जो पूरा नगरदर्शन कर वापस गुरुद्वारे लौटता था।जुलुस के आगे आगे पांच प्यारे चलते थे जिनमें निशान साहब (ध्वज) आम तौर पर मेरे हाथ में ही रहता था। गुरु नानक जयंती के पहले एक हफ्ते तक नगर कीर्तन होते थे। हर सुबह सवेरे किसी न किसी श्रद्धालु के घर संगत कीर्तन करते हुए पहुंचती थी।पहले उस सेवक के घर संगत 'गुरु नानक परगटेया मिटी धुंध जग चानन होया' का कीर्तन होता और अरदास के बाद सेवक अपने यहां आयी संगत की चाय पानी से सेवा किया करता था।गुरु नानक जयंती समारोह बड़ी ही श्रद्धा और आस्था से मनाया जाता जिसमें केवल पंजाबी ही नहीं स्थानीय लोग भी शामिल होते थे।सुबह से विशेष कीर्तन पाठ शुरू हो जाते ।किसी अति विशिष्ट व्यक्ति को भी आमंत्रित किया जाता जो गुरु नानक देव के उपदेशों पर प्रकाश डालता ।यह विशेष कार्यक्रम देर शाम तक चलता।सारी संगत साथ बैठकर लंगर छकती ।इस अवसर पर कई बिछुड़े हुए परिवार महीनों और वर्षों के बाद मिलते और कुछ मित्र-साथी-सगे संबंधी भी। गुरु नानक की जयंती धार्मिक तौर पर जितनी महत्वपूर्ण होती, कुछ इष्ट मित्रों और परिवारों के लिए वह किसी विशिष्ट सामाजिक तथा पारिवारिक समारोह से कम नहीं हुआ करता था।

आम तौर पर 13 अप्रैल को बैसाखी का त्योहार मनाया जाता है ।सुबह सवेरे से गुरुद्वारे में विशेष कीर्तन,कवि दरबार और बैसाखी से जुड़े बहुत से कार्यक्रम आयोजित होते थे । गुरुद्वारे में दसवें गुरु गोबिंद सिंह के उपदेशों के साथ साथ उनके दसम ग्रंथ की विवेचना और व्याख्या भी विद्वान अपने अपने तरीके से प्रस्तुत किया करते हैं।इसी दिन 1699 में खालसा अस्तित्व में आया था।गुरु गोबिंद सिंह ने ऐसी फौज तैयार की जो ज़ुल्म के खिलाफ न केवल आवाज़ उठायेगी बल्कि लड़ेगी भी।पहले उन्होंने पांच प्यारे तैयार किये जो देश के विभिन्न भागों से चुने गये थे अर्थात उत्तर,पश्चिम,पूरब और दक्षिण से।उन सभी के नाम के आगे 'सिंह' जोड़ दिया जैसे कोई धरमदास तो वह धरमसिंह हो गया।उन सभी को अमृत छकाया गया जिसका अर्थ है कि वह सदा मजलूमों,बेगुनाहों और महिलाओं की रक्षा रक्षा करेंगे तथा राष्ट्रहित के सम्मान के लिए अपनी जान न्योछावर करने से गुरेज़ नहीं करेंगे।उनके लिए पांच 'क' अनिवार्य निश्चित किये गये: यानी केश,कड़ा,कृपाण,कच्छा और कंघा । केश काटने वर्जित थे । इन सब को गुरु गोबिंद सिंह ने पहले 'अमृतपान' कराया।बाद में उन पांच प्यारों से उन्होंने स्वयं अमृतपान करने के बाद कहा कि 'सवा लाख से एक लड़ाऊं तभी गोबिंद सिंह नाम कहलाऊँ ।'गुरु गोबिंद सिंह के व्यक्तित्व से जुड़े कई अन्य प्रसंगों का उल्लेख भी होता था, बीच बीच में पंजाबी के साथ हिंदी में भी।संगत में पंजाबियों के अलावा स्थानीय लोग भी हुआ करते थे।

रायपुर से बाहर बैसाखी के उपलक्ष्य में एक मेला भी लगता था ।इस मेले में सभी संस्कृतियों के लोग भागीदारी किया करते थे।यह मेला बहुत से बिछुडे परिवारों का

मिलनस्थल भी होता था, क्योंकि इसमें रायपुर के आसपास भिलाई,दुर्ग, धमतरी, सिमगा,बेमेतरा आदि से भी पंजाबी परिवार आया करते थे ।मेले में नौजवान सिख युवा गतका खेलते नज़र आते और कुछ और के शौर्य कार्य भी देखने को मिलते।बैसाखी के दिन ही सिखों का नया साल शुरू होता है ।कुछ व्यापारी अपने नये खाते इसी दिन से शुरू करते हैं। किसान अपनी रबी की फसल भी बैसाखी के दिन ही काटते हैं ।मैं भी अपने माता पिता के साथ इस मेले में जाया करता था।मेरे दादा सुंदरसिंह जुनेजा और उनके दोनों बेटे इंदर सेन और भगवंत सिंह हम से मिलते थे।मेरे पिता अमरनाथ जी को वह बहुत प्यार किया करते थे।मेरे दादा जी का रायपुर की पंजाबी बिरादरी में बहुत सम्मान था।उनकी इज़्ज़त तो उनके ज़िला गुजरात,तहसील फालिया (अब पकिस्तान) में भी बहुत थी जहां उनका हवेलीनुमा बड़ा मकान था।हमारा मकान तो उनके साथ था जबकि मेरे चाचा परमानंद जी का शहर के भीतर।बैसाखी मेले में हम लोगों के साथ खूब घुलमिल कर बातचीत कर रहे थे।बीच बीच में और कई परिचित दादा जी के साथ मिल लेते थे। शाम को हम सभी लोग हंसते खेलते खुशी खुशी विदा होकर अपने अपने घर चले गये।आधी रात को अचानक मेरे पिता जी के सीने में ज़ोर का दर्द उठा। मेरी मां के साथ हमारे कुछ रिश्तेदार उन्हें तुरंत अस्पताल ले गये। लेकिन वहां उनकी सांसें उखड़ गयी और उनका निधन हो गया।यह बात 1952 की बैसाखी की है और उनकी उम्र थी मात्र 38 बरस। जिस तक भी यह मनहूस खबर पहुंची किसी को सहसा यकीन नहीं हुआ।उस दिन मैंने अपने चाचा इंदर सेन को ज़ार ज़ार रोते हुए देखा था।दोनों भाइयों में बहुत प्रेम था ।

उन दिनों पंजाबी कई किस्म का व्यापार और काम करते थे।गुरुद्वारे के आसपास लकड़ी चीरने और काटने के आरे थे तो शारदा चौक,गोल बाज़ार और आज़ाद चौक में होटल और साइकिल की दुकानें थीं ।शारदा चौक का रैन बसैरा होटल बहुत मशहूर था तो आज़ाद चौक का मंगल और खालसा होटल।इन होटलों को दूध देने के लिए भिलाई से डोकरियां (औरतें) आया करती थीं ।भिलाई इस्पात कारखाने की आधारशिला पंडित जवाहरलाल नेहरू ने 1955 में रखी थी।मैं भी पंडित जी को देखने के लिए गया था।पहली बार उन्हें 1952 में छत्तीसगढ़ की एक सार्वजनिक सभा में देखा था जब वह चुनाव प्रचार के लिए आये थे। छत्तीसगढ़ कॉलेज में ही कल्याणजी वीरजी शाह ने एक संगीत शो किया था।उस समय फिल्म नागिन के गाने बहुत लोकप्रिय हुए थे जिसके संगीतकार तो हेमंत कुमार थे लेकिन 'तन डोले मन डोले'वाली बीन कल्याणजी ने बजाई थी । इस शो को देखने के लिए खूब भीड़ जुटी थी।हम पंजाबियों के काम धंधे की बात कर रहे थे।आज़ाद चौक का बहादुर साइकिल स्टोर तो मनोहर टाकीज के पास का सलूजा साइकिल स्टोर खासे पॉपुलर थे ।ऐसे ही कंकाली पारा का सलूजा क्लाथ स्टोर सहित और भी कपड़े की कई दुकानें थीं ।कुछ की मनियारी की दुकानें भी थीं तो कुछ लेन देन का बिज़नैस भी करते थे। ब्राह्मण पारा से सती बाज़ार की तरफ़ जाते हुए डॉ भागवत की उस समय बहुत प्रसिद्ध क्लिनिक थी। मेरे स्कूल के दोस्तों में कमल बाजपई, रसिक और बसंत के अतिरिक्त रमेश नैयर, शाहिद फरीदी प्रमुख थे तो पत्रकार मित्रों में कुमार साहू और बसंत कुमार तिवारी ।लेखक और कवि नारायण लाल परमार धमतरी में रहते थे। दिल्ली आने के बाद जब कभी भी मैं रायपुर जाता तो रेलवे स्टेशन पर अगवानी कमल बाजपई करता,सारे समय साथ रमेश नैयर का मिलता और विदाई में उनके साथ शाहिद फरीदी भी आम तौर रहा करते थे। मेरी बुआ के बेटे तब भिलाई रोड स्थित अपने खुद के मकानों में रहते थे।वहीं साथ में उनकी कई किस्म की दुकानें भी थीं ।सुना है अब उनके कई पाश और महत्वपूर्ण क्षेत्रों में अपने मकान हैं। जिन दिनों मैं लोकसभा सचिवालय, 'दिनमान', 'संडे मेल' और एनजीओ में काम करता था, रायपुर खासा आना जाना रहता था अधिकतर अपने प्रोफ़ेशनल काम के सिलसिले में तो एकाध बार रिश्तेदारी में भी। विद्याचरण शुक्ल को मैं स्कूल के दिनों से जानता था तो अजित जोगी को दिल्ली से ।अजित जोगी अपने शिखर नेताओं के लिए कभी कभी मुझसे भाषण भी लिखवाया करते थे।छत्तीसगढ़ का मुख्यमंत्री बनने पर भी उनसे दिल्ली और रायपुर में काफी मुलाकातें हुआ करती थीं ।उनके साथ ही

पहली बार विधायक सत्यनारायण शर्मा मिले थे ।तब वह शिक्षामंत्री थे।फिर उनके साथ भी मिलना-जुलना जारी रहा।

लेकिन पिछले सात-आठ सालों में चाह कर भी रायपुर आना नहीं हो पाया।रमेश नैयर से हर हफ्ते बात हुआ करती थी और कहते थे एक बार आप से मिलने की इच्छा है और आपको न्योतने की कोशिश कर रहा हूं ।मैं उनसे सहास्य कहा करता था कि अब हमारे पास कुर्सी नहीं है, हम केवल 'वरिष्ठ पत्रकार' हैं और उसे ही महिमा मंडित किया जाता था ।इस हक़ीक़त से वह भी परिचित थे। वह कहा करते थे कि आप मुझसे उम्र में पांच बरस बड़े हैं और शारीरिक तौर पर ठीक ठाक हैं पर न जाने क्यों मुझे ऐसा लगता कि मेरी 'कमज़ोर काया' न जाने कब दगा दे जाये ।और ऐसा ही हुआ।जब मैंने अपनी नयी पुस्तक 'आप्रवासी अमेरिका' प्रकाश उदय के हाथ उनके लिए भेजी तो प्रकाश ने मुझे फ़ोन करके बताया कि किताब पाकर वह बहुत खुश हुए लेकिन बहुत कमज़ोर लग रहे थे।बाद में रमेश ने भी फ़ोन करके पुस्तक पावती की खबर देते हुए बताया कि मैं पढ़ गया हूं और कई अखबारों के लिए समीक्षा लिख रहा हूं ।इसपर मैंने उसे पंजाबी में कहा था कि 'तैनूं किताब चंगी लगी,इस तों वडडी कोई समीक्षा नहीं।'इसपर उसकी बेसाख्ता हंसी सुनाई दी। अब तो उस मीठी आवाज़,'वीर जी' लहजे और हंसी को कान तरस रहे हैं ।ऐती छेती (जल्दी) जान दी तैंनू की सी वीरे। मन अक्सर कुरलाता है, चुपचाप। शायद इसी वजह से मुझे हार्ट अटैक आ गया और मैं हफ्ता भर आईसीयू में रहा। अब स्वस्थ हो रहा हूं। यह पोस्ट लिखने में देरी की वजह मेरी यह अस्वस्थता ही थी।

लेख में व्यक्त विचार लेखक के हैं उनसे संपादक मण्डल या संपर्क भाषा भारती पत्रिका का सहमत होना आवश्यक नहीं है। किसी भी विवाद की स्थिति में न्याय-क्षेत्र नई दिल्ली रहेगा। प्रकाशक तथा संपादक : सुधेन्दु ओझा, 97, सुंदर ब्लॉक, शकरपुर, दिल्ली110092

अनीता चौधरी

दीप सर!

कुछ शख़्सियत ऐसी होती है जिनके बारे में जहन में अगर ख़याल आये तो होंठों पर मुस्कुराहट, दिल में सुकून होते हैं और यादों के पंख वो उड़ान भरते हैं कि असमान कम पड़ जाते हैं। यही नहीं उन यादों को जब कलम से सजाते हैं तो शब्दों के ख़ज़ाने से असंख्य अनमोल मोती मानो स्वतः ही झरने लगतै हों। मेरे जीवन में ऐसे ही एक शख़्स है सबके त्रिलोचन दीप सिंह और मेरे My Dear Deep Sir . क्या कहूं ,कहाँ से शुरू करूँ जीतनी बातें करूँ उतना कम है ,एक च्वनप्राश का विज्ञापन आता था 60 साल का बूढ़ा या साठ साल का जवान , कुछ यैसे ही है दीप सर | अस्सी पार वाले गबरू जवान और हम सबके च्वनप्राश | दीप सर पत्रकारिता के वो मील के पत्थर है जिनसे सीखने के लिए अथाह सागर है , लेकिन मेरे लिए My Dear Deep Sir सालासर बाला जी की Spiritual पिकनिक वाले सफर के भांडे वाले पार्टनर है. अब जब सालासर जी महाराज जी और भांडे की बात आयी है जो सीन में जस्सी का आना लाज़मी है | हर दिल अज़ीज़ जस्सी जी ने ही तो दीप सर से पहली बार मुझे मिलवाया था वन रायसीना रोड पर प्रेस क्लब ऑफ इंडिया में और पूछा था "गौर से देख दीप सर के चहरे को सालासर के बालाजी हनुमान जी की तरह दिख रहा है क्या ? वैसे दीप सर आज भी बाला जी महाराज की तरह दिखते ही नहीं है बल्कि मन से भी वैसे ही निश्छल है | पार्टीशन के चश्मदीद दीप सर के पास तब से अब तक की असंख्य प्रेरित करने वाली कहानियां हैं | वैसे इससे पहले प्रेस क्लब मेरे लिए one of the most crowded मच्छी बाजार डेस्टिमशन था जिसे शायद ही कभी मैं एन्जॉय करती थी | लेकिन न जाने क्यों अब ये तिगड़ी मुझे पसंद थी | रिपोर्टिंग से थोड़ा फ्री होकर अब लंच के समय दीप सर के अथाह समंदर से कुछ ज्ञान अर्जित करने के बहाने प्रेस क्लब के बार रूम के एक्सट्रीम राइट कार्नर पर अब अक्सरहां जाना होता था जहाँ जस्सी और दीप सर कुछ सीनियर जर्नलिस्ट के साथ सर्किल में घिरे होते थे | उस 2-3 घंटे में सर्किल का चेहरा बदलते रहता था लेकिन सेंटर में बैठे दीप सर और जस्सी वही होते थे | जैसे ही मैं पहुंचती थी दीप सर का वार्म वेलकम होता था "ओये आ गया मेरा शेर " और जस्सी बोलते "ओये की गल हैं कुड़िये " और पंजाबी में जवाब देने के लिए मुझे जैसी ठेठ बिहारन के पास सिर्फ 2 शब्द होते थे " ओये चंगा जी चंगा" | पत्रकारिता में जैसा की मैं पहले भी बोल चुकी हूँ दीप सर "मील कर पत्थर हैं"| उनकी लिखी किताबें चाहे वो सफरनामा हो या अन्य पुस्तकें सिर्फ पढ़ने के लिए नहीं हैं बल्कि उन किताबों को पढ़ते-पढ़ते उन अनुभव के सफर को तय करने लगते हो | अब तो जैसे दीप सर की आदत सी हो गयी है , उनके गुड मॉर्निंग थॉट के बिना मेरी मॉर्निंग नहीं होती | हर दिन का उनका मुस्कुराता हुआ गुड वाली मॉर्निंग थॉट , जय श्री बाला जी के साथ मेरे पुरे दिन के लिए वो बूस्टर डोज़ होता है | वैसे आज तक ऑनलाइन या ऑफलाइन किसी भी तरह मुलाकात का ये सिलसिला बदस्तूर जारी है जो बताते है कि दीप सर के साथ मेरे संबंधों की ये वो डोर है जिसमें गाँठ की कोई गुंजाईश नहीं हैं|

अनुज से प्रेम और सम्मान करना त्रिलोक दीप से सीखना चाहिए

अनिल त्यागी

मुझे आज भी अच्छी तरह याद है त्रिलोक दीप जी की और मेरी मुलाकात संभवतः 1987 में हुई थी. मैं उस समय रविवार में काम करता था. मैं दिल्ली स्कूल ऑफ इकोनॉमिक्स से एम.कॉम और लॉ की डिग्री लेने के बाद हिंदी पत्रकारिता में नया आया था. मेरा साहित्य और खबरों से कुछ लेना देना नहीं था. छात्र जीवन में राजनीति करते थे, इस कारण राजनीतिक जागरूकता थी और यही राजनीतिक जागरूकता की धरोहर ने मेरी पत्रकारिता की गाड़ी आगे चलाई. पत्रकारिता संबंधों का खेल है, संपर्कों का खेल है मेरे संपर्क मेरे छात्र जीवन में राजनीति में सक्रिय होने के कारण राजनीतिक क्षेत्र में ठीक ठाक थे. भू भारती जो कि दिल्ली प्रेस की पत्रिका थी उससे काम की शुरुआत की और गाड़ी चल निकली. पत्रकारिता शुरू करने के बाद हुआ यह कि 'रविवार' से एस. पी. सिंह नवभारत टाइम्स में चले गए और उदयन शर्मा 'रविवार' के संपादक हो गए और मैं इसके साथ ही उदयन शर्मा की रहनुमाई में 'रविवार' में आ गया.

1987 की सुबह शास्त्री भवन के बाहर सेना का एक वाहन खड़ा हुआ था वहीं से हम कुछ पत्रकारों को कुमाऊँ रेजिमेंट के 100 साल पूरा होने पर उस रेजिमेंट के मुख्य कार्यालय रानी खेत जाना था. हालांकि मेरी रक्षा बीट नहीं थी लेकिन मैं कभी कभी रक्षा मंत्रालय और आर्मी के सेना मुख्यालय चला जाता था. समझने की कोशिश ही कर रहे थे कि सेना की रिपोर्टिंग किस तरह की जाती है. इसी बीच सेना मुख्यालय से कुमाऊँ रेजिमेंट के मुख्य कार्यालय की यात्रा रानी खेत तक यात्रा करने का निमंत्रण मिला. मुश्किल से एक2 पत्रकार थे सम्भवत मैं सबसे छोटा था वहीं पर मैंने देखा एक गोरा सरदार, मूंछे तनी हुई, चश्मा, है दम दम आती पगड़ी, मुस्कुराता चेहरा. परिचय हुआ, मैंने कहा, "मेरा नाम अनिल त्यागी है". "मेरा नाम त्रिलोक दीप है" मुस्कुराते हुए उन्होंने कहा. हमको पता ही नहीं था कि त्रिलोक दीप कहाँ काम करते हैं. 'दिनमान' का नाम सुन रखा था, लेकिन वो पत्रिका कभी पढ़ ही नहीं थी. अपना हिंदी ज्ञान प्रेमचन्द की 'गोदान' पर शुरू होता था और 'गोदान' पर ही खत्म हो जाता था. 1983 में पत्रकारिता में आने से पहले हमको नहीं पता था कि पत्रकारिता क्या होती है? पत्रकारिता जगत क्या है?

दिल्ली से रानीखेत के सफर में त्रिलोक दीप और सब पत्रकारों के ठहाके लगने का दौर शुरू हो गया. मुझको पता ही नहीं लगा की हम देश के किसी बड़े पत्रकार के साथ यात्रा कर रहे हैं. दोपहर तक हम सब रानीखेत पहुँच गए. शाम को सब पत्रकार बंधु कुमाऊँ रेजिमेंट के मिलिट्री बार में इकट्ठा हुए. रानीखेत का खुशनुमा माहौल और फौज कीआवभगत ने महफिल को जवान कर दिया. जाम पर जाम का दौर शुरू हो गया . मैं और त्रिलोक दीप जी लगभग रात के एक बजे तक पीते रहे. मेरा और त्रिलोक दीप जी का मामला पट गया. जवानी का दौर था पीने की ठीक ठाक आदत थी और सहने की भी. लेकिन साथ में पीने वाला कोई बहुत बड़ा पत्रकार हैं इसका एहसास मुझे त्रिलोक दीप जीने ने नहीं होने दिया. उस रात जाम का दौर खत्म करने के बाद हम रानी खेत की सड़कों पर दोनों लगभग रात के 2:00 बजे तक घूमें. दूसरे दिन सुबह ही 6:00 बजे हम फिर रानीखेत की खूबसूरत आबो हवा का आनंद लेने के लिए दोनों सड़क पर थे. मुझे याद नहीं की हम दोनों कितना पैदल चले, लेकिन उस यात्रा की छवि और त्रिलोक जी की मोहब्बत अभी तक मेरे दिमाग में एक तस्वीर की तरह अंकित है. हम रानी खेत में एक घंटी वाला मंदिर है. वहाँ भी गए थे. ये बात मैं भूल ही गया था, लेकिन पिछले साल अचानक दीप जी ने मेरी और सब साथी पत्रकारों की एक फोटो घंटी वाले मंदिर मैं बैठे हुए फेसबुक पर पोस्ट की. यादें ताजा हो गई, लगा जैसे ये कल की ही बात हो. हम दो, तीन दिन के प्रवास के बाद वापस लौट आए. दीप जी से बड़ी मोहब्बत से विदाई ली. हम अपने काम में व्यस्त हो गए. मैं उन दिनों हरियाणा और पंजाब कवर करता था तो समय ही नहीं मिला वो पंजाब में मिलिटेंसी के दिन थे.

सन1989 तक आते आते यह आभास हो गया था कि 'रविवार' बंद होने वाला है. अक्टूबर 1989 को 'रविवार' का प्रकाशन स्थगित कर दिया गया. मुझको पहले भी नहीं पता था और आज भी नहीं पता है की नौकरी कैसे मांगी जाती है. पूर्व प्रधानमंत्री विश्वनाथ प्रताप सिंह का चरम काल था, पूर्व प्रधानमंत्री चंद्रशेखर जी व्यथित थे, हरियाणा में चौधरी भजन लाल क्या राजपाट आने वाला था. एक दिन पता लगा संडे कि संडे मेलअखबार हिंदी में निकलने वाला है, मुझको ये नहीं पता था की कौन निकालने

वाला है. कौन इसका संपादक होने वाला है. बस कहीं से उड़ती सी खबर आयी कि कन्हैयालाल नंदन इसके संपादक होने वाले होने वाले हैं. एक दिन शाम को प्रेस क्लब में त्रिलोक दीप जी से मुलाकात हो गयी. वहीं पर मैंने उनके कान में फुसफुसाया कि, सुना है कन्हैयालाल लंदन नन्दन संडे मेलके संपादक होने वाले हैं, दीप जी मुस्कुराए, कुछ बोले नहीं. मुझको पता ही नहीं था कि संडे मेल के मुख्य कर्ताधर्ता तो त्रिलोक दीप जी ही है. मुझसे इतनी अच्छी दोस्ती होने के बावजूद कभी उन्होंने नहीं कहा की तुम आ जाओ और संडेमेल जवाइंन कर लो. मैंने भी उनसे आज तक कभी नहीं पूछा. मुझे एक बात आज तक समझ में नहीं आयी और ये बात मैंने कभी त्रिलोक दीपजी से पूछी भी नहीं, कि उन्होंने कन्हैयालाल नंदन को संडे मेल का संपादक क्यों बनवाया?. जिस समय संडे मेल निकलना शुरू हुआ उस समय तक त्रिलोक दीप जी लब्ध प्रतिष्ठित पत्रकार थे और अपने आप में एक नाम थे. कन्हैयालाल नंदन कोई बहुत बड़ा नाम नहीं था कि उनके नाम से हिंदी पत्रकारिता जगत में कोई क्रान्ति होने का भान कर सके.

संडे मेल के मालिक उद्योगपति राज्य सभा सदस्य संजय डालमिया थे. उत्तर प्रदेश के पूर्व मुख्यमंत्री मुलायम सिंह के खास लोगों में उनकी गिनती होती थी. दूसरी तरफ़ दिल्ली शहर से चौथी दुनिया अखबार निकलता था जिसके मालिक उद्योगपति राज्य सभा सदस्य कमल मोरारका थे, इन दोनों से मेरी मुलाकात कभी कभी चंद्रशेखर जी के निवास स्थान पर होती थी. रविवार लगभग बंद हो चुका था और मेरे पास कोई नौकरी नहीं थी. बड़ी कंपनी आनंद बाजार पत्रिका की उदारता थी, उन्होंने मुझे कंपनी की नौकरी से बेदखल नहीं किया था. वेतन मिल रहा था, लेकिन काम नहीं था, मैंने समय का इस्तेमाल किया .अपने राजनीतिक संपर्कों को बढ़ाया. इसी बीच पता लगा कि संडे मेल कन्हैयालाल नंदन की रहनुमाई में रेंगना शुरू हो गया है. संडे मेल के तेजतर्रार रिपोर्टर मेरे मित्र वीरेन्द्र सिंह सेगंर और ज्ञानेंद्र पांडे संडे मेल के अन्तःपुर की खबरें बताते रहते थे. ये भी बताते थे कि संडे मेल अभी तक जो टिका हुआ है और शाना से छप रहा है, उसमें संडे मेल के ढहते हुए खंडर को बल्लियां लगाने का काम का काम त्रिलोक दीप जी करते है. कोई पत्रकार नाराज है, किसी की व्यक्तिगत समस्या है, किसी को आर्थिक तंगी है या किसी को अस्पताल की मदद चाहिए तो सब के राजदार संडे मेल में त्रिलोक दीप जी ही थे.

उस समय मैं उस समय बहुत नौजवान था लेकिन संडे मेल की अन्त पुर की राजनीति से मन व्यथित रहता था.अखबार बहुत अच्छा निकल सकता था, लेकिन एक अच्छा संपादक और व्यावसायिकता की दूरदृष्टि ना होने के कारण वो काल की गति को प्राप्त हो गया. जब ये खबरें आ रही थी तो मैंने ये तय किया कि संजय डालमिया को मिला जाए. कोशिश की और **एक** दिन उनसे मेरी उनके कार्यालय में लंबी मुलाकात हुई. अखबार संडे मेल को कैसे खूबसूरत बनाया जाए . कैसे यह सफल हो सकता है. इसके सारे पहलुओं पर बात की. मैं शुक्रगुजार हूँ संजय डालमिया जी का जिन्होंने संभवत है सब कुछ जानते हुए मेरी बात को बड़ी तन्मयता से सुना से सुना. आप सोच रहे होंगे की मैंने ऐसा क्यों किया? शायद मुझे नौकरी की जरूरत थी. नहीं. मैंने तो संजय डालमिया से इतनी लंबी मीटिंग में नौकरी की बात ही नहीं की. मेरी पीड़ा यहीं थी की अखबार चलना चाहिए. मैं संजय डालमिया से इसलिए मिलने गया कि हो सकता है, कन्हैयालाल नंदन जी के भय से या त्रिलोक दीप जी के सम्मान के कारण पत्रकार जो वहाँ काम कर रहे थे उन्होंने संजय डालमिया को सच्चाई बताने का साहस ना जुटाया हो. मैं आज भी ये बात मानने को तैयार नहीं हूँ कि संजय डालमिया के खासमखास त्रिलोक दीप जी को ये बात यानी की मेरी और संजय डालमिया की मीटिंग हुई,ये बात नहीं मालूम हो नहीं मालूम हो. लेकिन त्रिलोक दीप जी ने आज तक मुझसे कभी इस बात का जिक्र तक नहीं किया. इसको कहते हैं अपने है और अनुजों के सम्मान की कैसे रक्षा करनी चाहिए.

वर्षों से लोकदीप जी को हमने मैंने शाम को दूरदर्शन के पूर्व समाचार वाचक जस्सी जी के साथ बार काउंटर के एक कोने में बैठे देखा देखा है. पहले तो त्रिलोक दीप जी अधिकतर दोपहर में जस्सी और कई पत्रकारों के साथ बार कार्नर पर देखे जाते थे और दोपहर का खाना भी वही खाते थे. पिछले कुछ दिनों से उनका आना कुछ कम हुआ है लेकिन उनकी सक्रियता फेसबुक पर बढ़ी है. आज कल किताबों के विमोचन, पुस्तकों की समीक्षा , पुराने पत्रकारों से मेल मिलाप और वही चेहरे पर मुस्कान त्रिलोक दीप जी को जिंदादिल बनाए हुए. दीप जी कम बोलते हैं लेकिन उनके ठहाके मेरे कानों में अब भी कई गूंजते रहते हैं. आदरणीय त्रिलोक दीप जी को समर्पित. EOM ***अनिल त्यागी संपादक जीफाइल्स की ओर से.***

जिसे कभी गुस्सा नहीं आता

अनिल माहेश्वरी

एक ऐसा व्यक्तित्व जो दिल खोल कर हंसता हो, पर अपनी आवाज कभी ऊंची नहीं करता हो, जिसे कभी गुस्सा नही आता हो, ऐसे लोग विरले ही होते हैं। वरिष्ठ पत्रकार साथी श्री त्रिलोक दीप जी इस तरह के व्यक्तित्व के स्वामी हैं।

आधे दशक से भी अधिक पत्रकारिता में अपना योगदान देने के पश्चात कभी किसी ने उन्हें अपनी प्रशंसा एवं अपने राजनेताओं से अंतरंग संबंध के बारे में डींग हांकते हुए नहीं देखा है।

हमारी जनरेशन को इस पर गर्व है कि हमने छात्र जीवन में श्री त्रिलोक दीप जी को दिनमान साप्ताहिक में पढा और उनकी लेखनी से सीखा।

पत्रकारों में व्याप्त 'दूसरों की बुराई' आदत से श्री त्रिलोक दीप जी मीलों-मीलों दूर हैं। मुझे गर्व है कि मुझे उनका स्नेह प्राप्त है।

लगातार मुलाकातें : त्रिलोक दीप

असगर वजाहत

अब अगर कोई किसी से कहे भी कि कभी 'दिनमान' जैसी पत्रिका निकला करती थी तो किसी को विश्वास नहीं होगा, क्योंकि हिंदी पत्रकारिता आज अपने निम्न स्तर पर पहुंच चुकी है और कुछ भोंडे पत्रकार जो अपने को अभिनेता जैसा समझते हैं, पर्दे पर अदाकारियां करते दिखाई देते हैं।

'दिनमान' के दफ्तर में 1968-78 के बीच ज्यादा आना-जाना रहता था। यहां काम करने वालों में जिन लोगों में उत्साह और लगन दिखाई पड़ती थी, उनमें त्रिलोक दीप का नाम सरेफेहरिस्त है। पहले तो समझ ये नहीं आया था कि 'दिनमान' के दफ्तर में एक सरदारजी इतनी तत्परता से रघुवीर सहाय, संपादक के कमरे में दसियों बार क्यों आते हैं। लोगों से जानकारियां लेना और पूछना मेरी अादत नहीं है, इसलिए मैंने किसी से नहीं पूछा कि ये सज्जन कौन हैं। बाद में नाम पता चला त्रिलोक दीप। बातचीत और बोलचाल से यह पता नहीं चलता था कि पंजाबी है, पर पहनावे से पूरा पता चलता था कि पंजाबी सिख है। ये इतनी अच्छी हिंदी कैसे बोल और लिख लेते हैं? इनका 'सोर्स ऑफ एनर्जी' क्या है, जो दिन भर इतने 'एक्टिव' रहते हैं। जैसे अनेक सवाल थे, जो दिमाग में उठते रहते थे। 'दिनमान' में मैं सबसे ज्यादा 'फ्री' सर्वेश्वर दयाल सक्सेना के साथ था। वे पता नहीं क्यों मुझे इतना समय देते और मानते थे, मैं तो खैर उनका मुरीद था। उस जमाने में उनका नाटक 'बकरी' बहुत चर्चित था। 'दिनमान' में उनका कॉलम सबसे पहले पढ़ा जाता था।

एक दिन मैंने सर्वेश्वर जी से कहा – मैं त्रिलोक जी से नहीं मिला हूं।

उन्होंने कहा – इतनी बड़ी गलती तुमसे हुई कैसे?

त्रिलोक अपने स्टाइल में झपटते हुए सहाय जी के कमरे की तरु जा रहे थे। सर्वेश्वर जी ने उन्हें आवाज़ दी – त्रिलोक .. इधर आओ।

त्रिलोक ने अपना झपटना जारी रखा और बोले अभी आया सर्वेश्वर जी...

त्रिलोक सहाय जी के कमरे से निकल आए – कहिए सर्वेश्वर जी...

इनको जानते हो न, इनका नाम है ....

अरे, कमाल करते हैं सर्वेश्वर जी... 'दिनमान' में इनका लिखा पढ़ता भी हूं... पसंद भी करता हूं।

और ये कह रहे हैं ... तुमसे मिले नहीं... मिलना यहां थोड़ी होता ... शाम को प्रेस क्लब आओ।

त्रिलोक ने ठीक ही कहा था। उसके बाद हम लगातार अब तक मिल रहे हैं।

कमल नयन पंकज

अजातशत्रु त्रिलोक दीप!

त्रिलोक दीप! आदर से हम उन्हें दीप जी कहकर बुलाते हैं । पितातुल्य हैं । आंखों से हमेशा वात्सल्य भाव झलकता है । सद्पुरूष हैं—गुणों की खान हैं। किसी से शत्रुता नहीं—अजातशत्रु! मीठी बोली – स्मित मुस्कान के साथ । आवाज में जोश । विशाल बट वृक्ष जैसा व्यक्तित्व – जो अपने दामन में सैकड़ों पशु–पक्षियों को ठौर प्रदान करता है । सरल इतने कि उनकी सरलता का वर्णन करना कठिन हा जाता है । किसी की सरलता को कैसे वर्णित किया जा सकता है! शानदार कैरियर और तमाम उपलब्धियों के बावजूद घमंड का नामोनिशान नहीं – उपलब्धियां भी ऐसी–ऐसी, जो हमें चमत्वृत करती हैं।

उनमें सबसे महत्वपूर्ण बात मुझे यह लगती है कि उन्होंने उम्र को अपनी मुट्ठी में बंद कर रखा है । आज वे 88 वर्ष के हैं लेकिन शारीरिक और मानसिक रूप से वे किसी युवा के समान हैं। निश्चित रूप से इसके पीछे उनके संयम और अनुशासन की बड़ी भूमिका होगी लेकिन हम तो परिणाम देखते हैं और मुग्ध होते रहते हैं। जब भी किसी 65–70 वर्ष की उम्र वाले को अपनी उम्र का हवाला देते हुए देखता हूँ तो मन–ही–मन बरबस सोच पड़ता हूँ—"क्या हालत बना ली है इसने ? अरे! हमारे दीप जी को देखो, अभी भी चुस्त–दुरुस्त और पुर्तीले हैं। जीना है तो उनकी तरह जीवन गुजारो ।" वास्तव में उम्र उनके लिए एक संख्या मात्र है—उससे ज्यादा कुछ नहीं । तब तो उन्होंने 82 वर्ष की उम्र में रिटायर होना पसंद किया । तब भी थक जाने के कारण नहीं, बल्कि रिटायरमेंट का भी आनंद उठाने के लिए रिटायर हुए।

मेरा सौभाग्य रहा कि उन्होंने 'संडे मेल' में काम करने लायक मुझे समझा और नियुक्त किया। 'संडे मेल' के प्रधान संपादक कन्हैया लाल नंदन जी थे, लेकिन उनकी दुनिया अलग थी और वे अपनी दुनिया में ही रहते थे । हमारा वास्ता तो दीप जी से ही पड़ता था । दीप जी बॉस नहीं थे बल्कि वे नेता थे । टीम को साथ रखने और अपनी टीम के सदस्यों से सर्वश्रेष्ठ काम करवा लेना उनके बायें हाथ का काम था । वे सब पर अखंड विश्वास करते थे और इस विश्वास को व्यक्त भी करते थे । उनका इतना भी कहना —'मुझे विश्वास है कि तुम कर लोगे'— हममें नया जोश भर देता था । फिर क्या, सब लगन से काम करते और परिणाम उत्तम होता । ऐसा तो हो नहीं सकता था कि इतनी बड़ी टीम काम कर रही हो और गलतियां न हों, पर संपादक के रूप में न तो कभी झल्लाये, न कभी किसी को फटकारा, और न कभी किसी को अपमानित किया । वे मुस्कराते हुए धीरे से अहसास करा देते थे गड़बड़ी हुई है । हम शर्म से पानी–पानी हो जाते कि हमारी लापरवाही से इन्हें दुख पहुंचा । मन–ही–मन कसम खाते कि भविष्य में ऐसी गलती नहीं करनी है । आज तो सुनता हूँ कि आज के संपादक सार्वजनिक रूप से गंदी–गंदी गालियां बकने लगते हैं । समझ नहीं पाता कि समय बदल गया है या हम मनुष्य के रूप में छोटे होते जा रहे हैं!

टीम को जोड़े रखने में उनकी काबिलियत दिखती थी । वे हर सदस्य से उसके खाने–पीने, घर–परिवार, काम का तनाव आदि विषयों पर चर्चा करते थे । हमें भी खुशी होती थी कि इतना बड़ा आदमी हमारी छोटी–छोटी बातों पर ध्यान देता है, वरना जिसने अज्ञेय जी और उन दिग्गजों की टीम के साथ काम किया हो, उसके तो पैर धरती पर पड़ ही नहीं सकते थे ।

उनकी भाषा में जो प्रवाह है, वह हम सायास भी हासिल नहीं कर सकते । वर्णन ऐसे करते हैं कि वह दृश्य आंखों के सामने आ जाता है । बहुत ही सशक्त कलम रही है उनकी! अशुद्धि का तो सवाल ही नहीं उठता । 'संडे मेल' में जब उनके हाथ में कलम नहीं होती थी, तो पेंसिल जरूर रहती थी । हम लोगों की गलतियों को सुधारने और हमें सिखाने के लिए ।

दीप जी अच्छी जिंदगी जीने में विश्वास करते हैं । खाना–पीना बढ़िया, मित्र अच्छे और रहने–सोने की व्यवस्था उत्तम । मैं मानता हूँ कि उन्हें 'गुडं फुडं, गुडं फ्रेंडं, गुडं बेडं चाहिए! (यह संस्वृत में अंग्रेजी मिलाकर लिखा है जैसे आजकल हिंग्लिश का चलन बढ़ रहा है) उन्हें जब भी देखा शानदार वस्त्रों में देखा अच्छे कपड़े, तनी मूंछें और शानदार पगड़ी!

वे समय की पाबंदी पर बहुत ध्यान देते हैं । 'संडे मेल' में वे हमेशा समय पर अपने कक्ष

में मौजूद होते थे। हम जब लेट होते तो उन्हें पहले से बैठा देखकर शर्म से गड़ जाते। समय के पाबंद वे आज भी हैं। जब भी कहीं मिलना हो, वे वहां पांच मिनट पहले ही पहुंच जाते हैं।

दुनिया में कई अखबार बंद हुए हैं। कारण जो भी रहे हों। दुर्भाग्य से 'संडे मेल' भी एक दिन बंद हो गया। टीम बिखर गयी। बंद हो गये अखबारों की टीम का बिखरना तो नियति है। ऐसे विपरीत समय में भी दीप जी अपनी टीम के साथ सतत संपर्व में रहे। नई दिल्ली में कई बार टीम का मिलन समारोह हुआ। अपने पुराने साथियों से मिलकर सबको खुशी हुई और इसका पूरा श्रेय था दीप जी को। अपनी टीम की मौजूदगी में उनके चेहरे की चमक से उनकी जो आंतरिक खुशी जाहिर हो रही थी। वह अप्रतिम था।

एक प्रसंग मेरे लिए यादगार है। 'सेंडे मेल' शनिवार को छपता था इसलिए सारे काम शुव्रवार की देर रात तक चलते थे। गुरूवार को खजुराहो (म.प्र.) में मेरे एक घनिष्ठ मित्र का विवाह हो रहा था। मैं उसमें शामिल होने का इच्छुक था। छुट्टी किस मुंह से मांगूं, समझ में नहीं आ रहा था। अंतत: मित्र–प्रेम के वशीभूत होकर मैंने दीप जी से अपनी इच्छा जतायी। मैंने कहा कि शुक्रवार का महत्व मैं खूब जानता हूँ लेकिन वादा करता हूँ कि शुक्रवार शाम तक लौट आऊंगा। दीप जी ने छुट्टी दे दी। मैं खुशी–खुशी खजुराहो चला गया। गुरुवार की रात विवाह समारोह संपन्न हुआ। मित्र भी खुश और मैं भी खुश! सुबह मैं दिल्ली के लिए निकल पड़ा। सड़क और रेल मार्ग से मेरी यात्रा होनी थी। इधर ऑफिस में लोग कह रहे थे कि शादी समारोह में गया है, कैसे लौट पायेगा। लोग चिंतित थे। मैं नई दिल्ली स्टेशन शाम में करीब 7:30 बजे उतरा और सीधे ऑफिस आया। 8 बजे मैं ऑफिस में था। मुझे देखकर दीप जी खुश हो गये। उन्होंने लोगों से कहा कि 'देखो, मैं कहता था न कि बोलकर गया है, तो जरूर आयेगा। आ गया न!' उनकी खुशी देखकर मेरी नींद और थकान कहां कापूर हो गयी, मुझे पता नहीं लगा। हम लोगों ने रात भर काम किया और अखबार समय पर निकला।

ऐसे किस्से टीम के हर सदस्य के पास हैं। कामना करता हूँ कि दीप जी अपना 100 वां वसंत देखें और हमें अपना स्नेह और आशीर्वाद देते रहें।

कमल नयन पंकज

जमशेदपुर(झारखंड) के दैनिक उदितवाणी में प्रशिक्षु उप-संपादक के रुप में पत्रकारिता की शुरुआत और छिन्दवाड़ा (मध्य प्रदेश) के दैनिक चाणक्य के कार्यकारी संपादक के रूप में अपनी पत्रकारिता को विराम। इस बीच प्रभात खबर (राँची), लोकमत समाचार (नागपुर), जनसत्ता(मुंबई) और संडे मेल (कोलकाता और नई दिल्ली) में विभिन्न पदों की ज़िम्मेदारियों का निर्वहन।

संप्रति- छिन्दवाड़ा में ही पेट्रोल पम्प का व्यवसाय। साथ ही कौटिल्य बुक्स,नई दिल्ली का अवैतनिक सलाहकार।

पत्रकारिता के प्रकाश स्तम्भ : त्रिलोकदीप

मनोज पाराशर

ना म तो सुना होगा.!! किसी मुम्बईया सिनेमा का यह संवाद साहित्य और पत्रकारिता जगत में त्रिलोकदीप जी की शख्सियत पर पूरी तरह फिट बैठता हुआ प्रतीत होता है....! पत्रकारिता जगत में विशेषकर उत्तर भारतीय क्षेत्र में संभवतः शायद ही कोई व्यक्ति हो जो इस नाम से सुपरिचित न हो ....!

यूँ तो त्रिलोकदीप जी से मिलने और उनकी भौतिक शख्सियत से रूबरू होने का सौभाग्य मुझे चाहते हुए भी आज तक नही मिला लेकिन भोपाल से प्रकाशित प्रतिष्ठित मासिक पत्रिका 'शिखरवार्ता' में अपने एक दशक से भी लम्बे कार्यकाल के दौरान उनके लेखन और पत्रकारिता की अद्भुत लेखन शैली के माध्यम से मैं उनकी विराट शख्सियत से अप्रत्यक्ष रूप से परिचित और प्रभावित अवश्य हुआ हूँ,,,!

त्रिलोकदीप जी जैसे मूर्धन्य और वरिष्ठ पत्रकार और साहित्यकार के विषय में मुझ जैसे सामान्य और छोटे से व्यक्ति द्वारा उनके सम्मान में कुछ भी लिखा जाना सूरज को दिया दिखाने अथवा आकाश को मुट्ठी में पकड़ने जैसा ही है परन्तु अंतर्मन में कुछ गर्व भी महसूस कर रहा हूँ कि मैं उनके सम्मान में अपनी भावनाओ के कुछ शब्द पुष्प अर्पित करने का छोटा सा प्रयास कर रहा हूँ! लेकिन साथ ही साथ अपने अंतस में कहीं न कहीं स्वयं को असहाय और भयग्रस्त भी महसूस कर रहा हूँ कि मेरे पास तो वो शब्द, भाषा और अभिव्यक्ति कला भी नही है जिनमे उनके विराट और अतुलनीय व्यक्तित्व को समेटा जा सके...! क्योकि त्रिलोकदीप...! अर्थात पत्रकारिता जगत को प्रकाशित करनेवाला सूरज ...! त्रिलोकदीप...! अर्थात अँधेरे में प्रकाश की किरण...! त्रिलोकदीप...! अर्थात तूफानों के विरुद्ध विपरीत दिशा में नाव को किनारे लगानेवाला नाविक...! त्रिलोकदीप...! अर्थात निराशाओं के मध्य भी आशा का प्रकाशपुंज...! त्रिलोकदीप...! अर्थात पत्रकारिता को नई दिशा देने वाला नायक...! त्रिलोक दीप..! अर्थात बौद्धिक जगत के सशक्त हस्ताक्षर...!

हालांकि यह मेरा सौभाग्य है कि 'शिखरवार्ता' से अलग होने के बावजूद मैं उनसे चलित दूरभाष सेवा के माध्यम से आज तक जुड़ा हुआ हूँ और पिछले 10-12 वर्षों में शायद अपवादस्वरूप ही कोई दिन हो जब सुबह की बेला में उनसे प्रातः नमस्कार न हुई हो...!

'शिखरवार्ता' में मेरे प्रवेश के पूर्व और कार्यकाल के दौरान शायद ही कोई माह ऐसा हो जिसमे त्रिलोकदीप जी का बिभिन्न राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय, सामाजिक अथवा राजनीतिक मुद्दों पर आधारित आलेख 'शिखरवार्ता' के प्रमुख स्तम्भ 'आमुख कथा' के रूप में न प्रकाशित हुआ हो..! यह तथ्य अपने आप में ही उनकी देश के वर्तमान सामाजिक और राजनीतिक मुद्दों की गहरी राजनीतिक समझ, पैनी दूरदृष्टि और मुद्दों के सटीक तथ्यपरक विश्लेषण क्षमता का परिचायक है! राजनीतिक मुद्दों के अलावा समसामयिक विषयों से सम्बद्ध विभिन्न ज्वलंत मुद्दों पर उनकी गहन तथ्यपरक पैनी दृष्टि से भी परिचित होने का अवसर मुझे इस दौरान प्राप्त हुआ है..! उपसंपादक के तौर पर कार्य करते हुए किसी भी उपलब्ध आलेख की 'प्रूफ रीडिंग' और 'एडिटिंग' का दायित्व मेरा था परन्तु मुझे याद नही पड़ता कि त्रिलोकदीप जी द्वारा प्रेषित सामग्री में मुझे कभी भी इसकी कोई आवश्यकता पड़ी हो ! बिभिन्न मुद्दों अथवा विषयों पर ये विश्लेषण इतना तटस्थ और निरपेक्ष होता है कि कभी कोई उन पर किसी पार्टी, धर्म या सामाजिक वर्ग का पक्षपाती होने का आरोप नही लगा सकता ! "ना काहू से दोस्ती न काहू से बैर" , त्रिलोकदीप जी की लेखनी का संभवत यही मूल मंत्र है...!

जीवन के इस उत्तरार्ध में भी उनका सोशल मीडिया पर सक्रिय रहना उनकी जीवटता का परिचायक है! आज भी 'फेसबुक' पर अक्सर उनकी देश-विदेश यात्रा के संस्मरण अथवा उनकी पत्रकारिता विशेषकर उनके "दिनमान" में कार्यकाल के दौरान के संस्मरण नुमायां होते रहते हैं! ये यात्रा वृतांत एवं संस्मरण इतने रोचक और भावपूर्ण होते हैं कि उन्हें मैं तो क्या संभवत कोई अनजान पाठक भी पूरा पढ़े बिना नही रुक सकता! इनकी सुगठित भाषाशैली का रोमांच इतना अधिक होता है कि पढ़नेवाले को प्रतीत होता है कि वो किसी सिनेमा के द्रश्यों को निरंतर क्रम में एक के बाद एक देख रहा हो..! इन संस्मरणों अथवा यात्रा वृतांतों की जो खासियत पाठकों को चकित करती है वो यह कि उनके जीवन की दशकों पूर्व की घटनाएँ और इनसे सम्बंधित स्थान और व्यक्तियों के

नाम आदि उन्हें आश्चर्यजनक रूप से हूबहू याद हैं! इस विषय में एक बार उनसे मैंने चुटकी भी ली परन्तु वो सिर्फ मुस्कुराकर रह गये और सिर्फ इतना कहा कि जीवन के महत्त्वपूर्ण क्षणों को भुलाया नहीं जा सकता...! यह उनकी लाजबाव और अद्भुत स्मरणशक्ति का परिचायक है !

सबसे बड़ी बात ये कि त्रिलोकदीप जी जब किसी राजनीतिक विषय अथवा किसी गंभीर मुद्दे पर लेखनी चलाते हैं तब उनकी भाषा शैली,शब्दों का चयन और अभिव्यक्ति कला इतनी सुघड़, प्रांजल, परमार्जित और कसावट लिए होती है कि उसमे दायें-बाएं होने की किंचित मात्र भी गुंजाइश नहीं होती जबकि संस्मरण अथवा यात्रा वृतांत लिखते वक्त ये इतनी सरल और सहज होती है कि लगता है कि उस वृतांत की पटकथा पाठक के मानस पटल पर पूरी तरह अंकित हो गयी है! संभवत यही एक गंभीर और प्रौढ़ लेखन का सबसे महत्त्वपूर्ण गुण है ! मेरे व्यक्तिगत मत में उनकी लेखनी का यह गुण उनकी जन्मजात नैसर्गिक प्रतिभा के अतिरिक्त "अज्ञेय" जैसे अन्य अनेक साहित्य शिरोमणियों और विभूतियों के सानिध्य मे हुआ "बौद्धिक संक्रमण" है !

माना जाता है कि किसी भी इन्सान की भाषाई अभिव्यक्ति दरअसल उसके स्वयं के व्यक्तित्व का ही साहित्यिक विस्तार होता है! लेखन का विषय कोई भी कुछ भी क्यों न हो, लेखक उस विषय वस्तु से स्वयं को पूरी तरह कभी भी अलग नही कर सकता अर्थात उसका 'स्व' उसमें कही न कहीं अपरिहार्य रूप से उपस्थित होता है और लेखक चाह कर भी स्वयं को उससे पृथक नही कर सकता! आशय यही है कि त्रिलोकदीप जी की लेखनी स्वयं ही उनके मानसिक व्यक्तित्व की परिचायक है और सबसे बड़ी बात यह कि यह लेखनी अपना परिचय देने के लिए चीखती-चिल्लाती या शोरगुल का डंका नही पीटती बल्कि खामोश होकर वज्र प्रहार करते हुए पत्रकारिता जगत के जुगनुओ के बीच स्वयं को एक "दीप" के रूप में प्रज्ज्वलित होकर द्रढ़ता से इस मान्यता को स्थापित करती है कि गमलों में उगे लोग बरगद का मुकाबला कभी नही कर सकते !

त्रिलोक दीप जी की पत्रकारिता के विषय में एक अन्य महत्त्वपूर्ण बात मैंने जो महसूस की वो यह कि अन्य पत्रकारों की तरह वे अपने लेखन में सरकारों के समक्ष चुनौतियों का केवल प्रदर्शनभाव से डंका नही पीटते अथवा उनकी लेखनी सामाजिक समस्याओं के प्रति सिर्फ 'विधवा विलाप' नही करती बल्कि साथ ही साथ उसके समाधान की भी सिफारिश करती है! केवल प्रदर्शन के लिए समस्याओं को उछालना उनकी लेखनी की वृत्ति नहीं होती बल्कि देश के मूर्धन्य बुद्धिजीवी और एक सच्चे पत्रकार का धर्म निभाने के नाते वो समस्याओं के निदान के तौर-तरीकों पर भी अपनी राय सरकारों अथवा पाठकों को परोसते हैं! और इसमें राष्ट्र, देश एवं समाज के प्रति उनकी प्रतिबद्धता और सरोकारों की झलक मिलती है!

त्रिलोकदीप जी के लेखन का एक और पहलू जिसने मुझे सर्वाधिक आकर्षित किया वह यह कि वो किसी "वाद' से प्रभावित अथवा पूर्वाग्रस्त नहीं हैं और न ही वो किसी राजनीतिक पार्टी या सामाजिक वर्ग की वकालत करते हुए किसी "वाद" को चलाने या स्थापित करने की कोशिश करते प्रतीत होते ! इसलिए वो मुझे किसी "खेमे" के नज़र नहीं आते ! तटस्थ और निष्पक्ष पत्रकारिता का यह आचरण आज प्रायः दुर्लभ ही है ! जो कुछ लिखा वो स्वयं की आँखों देखा और कानों से सुना...! किसी से प्रेरणा लेकर अथवा किसी के सिफारिशी व्यक्तिगत विचारों को विस्तार देना उनके लेखन का गुण कभी नही रहा...!

अंत में सिर्फ इतना ही कह सकता हूँ कि त्रिलोकदीप जी की शख्सियत को शब्दों में समेटना 'सागर को गागर' में समेटने जैसा ही है जिसमे मेरी तो हस्ती ही क्या कोई भी सफल नही हो सकता ! मुझे विश्वास है कि आज के पीतपत्रकारिता और 'चरण वंदना' के प्रदूषित दौर में भी तटस्थ और साक्षीभाव से स्तिथिप्रज्ञ रहकर त्रिलोक दीप जी ने पिछले कई दशकों में अपने अथक परिश्रम और योग्यता से पत्रकारिता के जिन मानदंडों को स्थापित किया है वो भविष्य के नवान्तुक पत्रकारों के लिए एक बेमिसाल नजीर और प्रकाश स्तम्भ बनेंगे जिसकी उजास और आलोक में वे अपने अस्तित्व को एक नयी पहचान देकर स्वयं को स्थापित कर सकेंगे ! अमावसें तो आती-जाती रहेंगी लेकिन पूर्णिमा का चाँद कभी धूमिल नहीं होता और न ही कभी उसकी चमक फीकी पड़ती..! त्रिलोकदीप जी जैसी शख्सियत पत्रकारिता के आकाश में कोई उल्का पिंड नहीं जो एक क्षीण चमक के साथ अज्ञात में विलीन हो जाते हैं! पत्रकारिता जगत के क्षितिज पर वो तो ध्रुव तारा हैं जो हजारों-लाखों की भीड़ में भी अपनी एक अद्वितीय छवि के साथ सदैव चमकते हैं !

मुझे पूरा विश्वास है कि आने वाले समय में निरंतर बढ़ते कलुषित वातावरण के विक्षुब्ध प्रवाह में पत्रकारिता के नैतिक मूल्यों का कितना भी ह्रास और हनन हो जाये परन्तु सकारात्मक पत्रकारिता के क्षितिज पर अपनी स्वर्णिम आभा के साथ सदैव दीप्तिमान रहेंगे त्रिलोकदीप जी की पत्रकारिता और उसके नैतिक मूल्यों के सप्तऋषि....!!

किसी शायर ने संभवतः श्री त्रिलोकदीप जी जैसी शख्सियत को ही ध्यान में रखकर अपनी भावनाओं को निम्न अल्फाजों में बयां किया होगा कि-

ज़िक्र महफिल में हुआ, तो शमां जल उठी
चराग बुझने लगे थे, उनके जाने के बाद
न कल कोई, इस कदर मशहूर था,
न फिर कोई याद आएगा, उनके जाने के बाद....!!

अपनी कलम को यहीं विराम देते हुए परमपिता से मैं उनको सुदीर्घ और स्वस्थ जीवन प्रदान करने हेतु प्रार्थना करता हूँ और आशा करता हूँ कि अभी वो एक लम्बे समय तक नवयुवाओं को उनके जैसा बनने, होने और कल्पनाओं में ही सही परन्तु उनके द्वारा स्थापित मानदंडों को स्पर्श करने की प्रेरणा देते रहेंगे....!!